❀ श्री गणेशाय नमः ❀

गुरुमण्डल का द्वादशपुष्प :—

ब्रह्माण्डपुराणोत्तरभागीय

ललितासहस्रनाम

ब्रह्मबोधिनीहिन्दीटीकासमेत

टीकाकार

राजगुरु पं० हरिदत्त शास्त्री

धर्मधुरीण विद्यारत्न विद्यालङ्कार

देहरादून

५, क्लाइव रो,

कलकत्ता।

सं० २०१०] प्रथम संस्करण [सन् १९५४

मुद्रक :—
रुलियाराम गुप्त
दि बङ्गाल प्रिण्टिङ्ग वर्क्स,
१, सिनागाग स्ट्रीट,
कलकत्ता-१

* श्री गणेशाय नमः *

गुरुमण्डल ग्रन्थमालाया १२ पुष्पम्

ब्रह्माण्डपुराणोत्तरभागीयं

ललितासहस्रनाम

श्रीमद् राजगुरु धर्मधुरीण विद्यारत्न विद्यालङ्कार

हरिदत्त शास्त्री कृतया

ब्रह्मबोधिनीटीकया सहितम्

दुर्गेस्मृता हरसि भीतिमशेष जन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणी कात्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्र चित्ता ॥

मनसुखराय मोर

५, क्लाइव रो,

कलकत्ता ।

वैक्रमाब्द	प्रथम संस्करण	खृस्ताब्द
२०१०	१०००	१९५४

श्रीः

समर्पणम्

भवानि त्वं दासेमयि वितर दृष्टिं सकरुणा
मितिस्तोतुम्वाञ्छन् कथयति भवानि त्वमिति यः।
तदैव त्वं तस्मै दिशसि निजसायुज्यपदवीं
मुकुन्दब्रह्मेन्द्रस्फुटमकुटनीराजितपदाम्।

—सौन्दर्य लहरी

इत्यशेषकरुणावरुणालयायाः
जगन्मातुः श्रीललिताम्बिकायाः
चरणकमलेषु सादरं समर्प्यते

श्री ललितासहस्रनामस्तोत्रं

ब्रह्मबोधिनी व्याख्या समेतम्
श्रीरस्तु

मातृचरणानुग्रहाभिलाषुकस्य
शास्त्रिणो हरिदत्तस्य

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

राजगुरु पं० हरिदत्तजी शास्त्री विद्यारत्न, विद्यालङ्कार, धर्मधुरीण देहरादून का संक्षिप्त जीवनवृत्त

लेखक—ब्रह्मदत्त त्रिवेदी

सदा से भारत दार्शनिकों का देश रहा है, नाना युगों में जहाँ इसमें राम, कृष्ण, शिवि, दधीचि, आदि क्रान्तदर्शी महानुभावों ने सृष्टि के उद्धारार्थ अवतार लिया वैसे ही मध्ययुग में शंकर, कुमारिल, रामानुज, कबीर, सूर और तुलसी ऐसी विभूतियाँ हुई जिनसे संसार गौरवान्वित है। आज भी कवीन्द्र रवीन्द्र एवं राष्ट्रपिता गांधी जैसे युग पुरुषों ने भारत का भाल ऊँचा किया है उसी प्रकार वर्तमान भारतीय आध्यात्मिक जीवन में राजगुरु धर्मधुरीण हरिदत्त शास्त्रीजी का स्थान महत्त्व रखता है। जिनमें ज्ञान, कर्म और उपासना का अद्भुत समन्वय है।

आपका जन्म संवत् १९३२ पौष मास में टिहरी गढ़वाल में हुआ, माता का नाम नन्दनी, पिता पं० कृष्णचन्द्र जोशी, झिआण कुमाऊं के दीवान वंश के थे। पं० कृष्णचन्द्र जोशी दीवान संवत् १९०३ में टिहरी आये थे, इनका जीवन राज्यसेवा में लगा रहने पर भी आप ज्योतिष और तंत्रशास्त्र में प्रगाढ़ विद्वान् और

योगाभ्यासी थे, आपके मातामह राजगुरु पं० राधापति के पुत्र पं० रामकृष्ण स्वयं राजगुरु थे।

चार वर्ष की अवस्था में शास्त्रीजी के पिता का शिव-सायुज्य हो गया था, पिताजी ने पहले से कह रक्खा था कि इसको किसी पाठशाला में पढ़ने को नहीं भेजना, केवल वाग्भव बीज अष्टगंध से इसको जिह्वा पर लिखते रहना। इसी प्रकार किया गया। पूज्य माताजी ज्योतिष शास्त्र की विदुषी थीं और वनस्पति औषधियों का इन्हें परम्परा से ज्ञान था। उनके हृदय में दीनदुःखियों की सेवा करने का भाव निरन्तर विद्यमान रहता था तथा अपने गाँव और नगर के बच्चों की रुग्णावस्था और बालकों की वेदना ज्योंही सुनती थीं वे तुरंत वहाँ जाकर जड़ी-बूटियों से उनके कष्ट को निवारण कर उन्हें आरोग्य कर देती थीं।

माता ने आठ वर्ष की अवस्था में बालक हरिदत्त का उपनयन संस्कार कर दिया, तब से नित्य उनके साथ गंगा स्नान करने जाना आरम्भ किया। माता ने रुद्राध्याय और दुर्गापाठ कण्ठस्थ याद करा दिया। एक दिन गंगा स्नान करने को जाते हुए आपको एक कराल सर्प ने काट लिया जिससे २४ घंटे तक मूर्छित रहे, फिर एक साधु आये और उनके मंत्रोच्चारण ने उन्हें जगा दिया। पीछे अमर-कोष का पाठ और रामायण के प्रारम्भिक २, ३ अध्याय मुख-जबानी पढ़ाये। आपको माताजी ने आरम्भिक शिक्षा घर

पर ही दी, कभी वह ज्योतिष की बातें इतिहास के रूप में बताती थीं एवं कभी सायंकाल आकाश में गगनचारी ग्रहों का ज्ञान कराती थीं।

१२ वर्ष की अवस्था में निर्धनता और दीनता के कारण बालकों को पढ़ाने के कार्य से आजीविका प्रारम्भ की। इस अवस्था में सबमें यही चर्चा होने लगी कि बिना पढ़े संस्कृत का ज्ञान इस बालक को हो कैसे गया ? इसपर वहाँ की महारानी ने शास्त्रीजी को आदर से बुलाकर गणेश पुराण की कथा का आयोजन किया। प्रायः २ वर्ष तक आप पुराणों की कथा सबको सुनाते रहे।

ग्रीष्मकाल में सन्यासी प्रायः उत्तर काशी जाया करते थे, उत्तर काशी से टिहरी ४१ मील पर है। टिहरी छोटा सा नगर होने से जो महात्मा वहां आते थे माताजी उन्हें घर पर लिवाकर उनका सत्कार करती थीं। स्वामी दयानन्दजी जब वहां आये तो उनके चरणों पर माता ने प्रणाम कराया। उन्होंने आशीर्वाद दिया कि पुत्र वेद और व्याकरण में तुम्हारी शक्ति बढ़े।

कुछ दिनों के अनन्तर स्वामी ब्रह्मानन्द तीर्थ जो काश्मीर महाराज के दीक्षा गुरु थे भुवनेश्वरी में पुरश्चरण के लिए आये। माता ने उन्हें घर पर आमन्त्रित किया। उनके आदेश से १५ वर्ष की अवस्था में भुवनेश्वरी उनके साथ जाने का पहले-पहले अवसर मिला। वहां पर उनसे तांत्रिक दीक्षा मिली, स्वामीजी ने भुवनेश्वरी के मन्दिर में पुरश्चरण कराये, तब से इनमें संस्कृत

साहित्य का विकाश होने लगा क्रमशः तन्त्र शास्त्र आदि विचारने की प्रबल शक्ति हुई। फिर कितनी ही बार भुवनेश्वरी में जाना हुआ। वहां पर भुवनेश्वरी आश्रम नाम का एक शिविर भी बनाया इस शिविर में योग विद्या और गीता ज्ञान की शिक्षा दी जाती रही। इसके अनन्तर काशी आदि पूर्व स्थान तथा लाहौर प्रभृति पांचाल देश में भी जाने का अवसर मिला। आप फिर प्रयाग में रहने लगे उस समय पंडित मदनमोहन मालवीय तथा आदित्य राम भट्टाचार्य के सम्पर्क में आकर भारतीय भवन में कभी-कभी आपका प्रवचन होता था। जब टिहरी के राजा कीर्त्तिशाह अपनी ससुराल प्रयाग में आये, उनके निमन्त्रण पर शास्त्रीजी राजा से मिलने गये। उन्होंने आग्रह किया कि जिस प्रान्त में आपका जन्म हुआ है उस भूमि की सेवा करने का भी अपका दायित्व है। उनके अनुरोध से शास्त्रीजी को अपने टिहरी गढ़वाल जन्मस्थान पर जाने की प्रेरणा हुई। महाराज ने चाहा कि ग्राम्य जनता में प्रशिक्षण का कार्य प्रारम्भ किया जाय और उनमें विद्याग्रहण करने की क्रान्ति पैदा की जाय, किन्तु राज्य कर्मचारी यह नहीं चाहते थे। राज्य कर्मचारियों ने भोलीभाली ग्रामीण जनता को यह पढ़ा रक्खा था कि तुम कदाचित् अक्षर का अभ्यास भी करो तो तुम्हारा देवता तुम्हें खा जायगा। यह विश्वास उनके हृदय पर इतनी दृढ़ता से जमा दिया गया कि वह उस भोली जनता का स्वच्छन्दतापूर्वक शोषण करते जाते थे। आपने जब सारे

गढ़वाल राज्य की यात्रा की तो उत्तर काशी और देवप्रयाग के अतिरिक्त और कहीं किसी को अक्षर तक का ज्ञान नहीं था। इस पर बड़ा संघर्ष कर भगवती की कृपा से ३ वर्षों के भीतर ही १०० पाठशालाओं की स्थापना उनके मंदिरों उन्हीं ग्रामीण जनता की सहानुभूति से बनाये गये। जिसकी १९०६-१९०७ की वार्षिक रिपोर्ट में यह उक्ति थी कि "The progress is surprising."। टिहरी राज्य में अब ग्राम्य पाठशालाओं में ग्रामीण जनता में प्रशिक्षण के लिये उत्साह होने लगा और इस प्रोत्साहन पर वह अपने बालकों को अध्ययन-शालाओं में प्रवेश कराने लगे, किन्तु ग्राम्य शिक्षण पद्धति प्राइमरी शिक्षा तक ही सीमित थी। इस पर भी उनके उत्साह सम्बर्द्धन के लिये प्राइमरी शिक्षित बालकों को राज्य कार्य में प्रवेश होने का अवसर दिलाते गये। अब ग्रामों में शुद्धता, चरित्रता और सांस्कृतिक जीवन का विकाश बढ़ने लगा। देवप्रयाग और उत्तर काशी में संस्कृत पाठशाला खोली गई। तीर्थस्थान जैसे गंगोत्री, यमुनोत्री आदि में पंडा लोगों के बालकों को तीर्थ विधि आदि का प्रशिक्षण विशेष रूप से रखा गया। टिहरी में यू० पी० के तत्कालीन राज्यपाल हिवेट के नाम से एक संस्कृत विद्यालय की स्थापना की गई जहाँ आपने ही प्रधानाचार्य के रूप में श्रीगणेश किया।

इन दिनों कभी-कभी पूर्ववत् कलकत्ता, काशी, लाहौर आदि की यात्रा भी करते रहे। लाहौर में स्वामी रामतीर्थ, जिनका

कि नाम तीर्थराम एम० ए० था, मिशन कालेज के गणित शास्त्र के प्रोफेसर थे। ये गणेशदत्तजी शास्त्री के साथ प्रायः मिलने जाते थे, वेदान्त शास्त्र के सम्बन्ध में विचारविमर्श से इनसे घनिष्टता बढ़ती गई। दोनोंका इतना घनिष्ट प्रेम था कि पंजाब में कालेज के बन्द होने पर ये अपनी स्त्री और पुत्र के साथ टिहरी शास्त्रीजी के घर आये। उस समय उनकी वेदान्त एवं वैराग्य की लहरें बड़ी उच्च भूमिका पर थीं। अपने आने के तीन घंटे बाद पूछा गया कि आपके सामान लानेवाले आदमी कितनी दूर छूट गये हैं उनका पता लगा लेवें। तब स्वामी रामतीर्थ कहने लगे सामान तो हमने सेविंग्स बैंक में रख दिया। इस उत्तर को सुनने पर लोग हँसने लगे और उनसे पूछने लगे कि वह कैसा सेविंग्स बैंक है जिसमें सामान रखा जाता है। तब स्वामी राम ने कहा कि लक्ष्मण झूला पर हमने सब सामान बांध कर दिन भर कुली की प्रतीक्षा की। मजदूर न मिलने पर सारा सामान गंगाजी को समर्पण कर दिया। आगे चलकर जिस ग्राम में रात्रि को निवास किया वहां के निवासियों ने भोजन और ओढ़ना बिस्तर दे दिया। तब उन्होंने उस वक्त अपनी स्त्री से कहा देखो गंगा का सेविंग्स बैंक, हमने गंगा के सेविंग्स बैंक में सब सामान सुरक्षित कर दिया, अब जहाँ जाओ वहाँ मिलता जायगा। ये वैराग्य की लहरें उनमें उसी समय से थी। आपही ने स्वामीजी को स्वामी रामाश्रय से मिलाया जो कि उत्तर काशी में तपस्या करते थे। जिनके लिये यह कहा जाता था कि

३००-४०० वर्ष की उनकी आयु थी। यह महात्मा किसी से नहीं मिलते थे, परन्तु तीर्थ राम स्वामी के ओंकार उच्चारण करते ही यह कुटिया से बाहर आ गये और दोनों आपस में छाती मिलाकर लिपट गये। इनकी प्रचुर अश्रुधारा पाँव तक बहतीं थी और गद्‌गद् स्वर में भी प्रणव की ध्वनि सुनाई देती थी। तीर्थरामजी का सन्यास यहाँ से हुआ और यहीं से इनका नाम स्वामी रामतीर्थ हुआ और यह सारे हिमालय में विचरे और रात में कई सिंह आदि वन्य पशु इन्हें मिलते थे, लेकिन उनके ओंकार की ध्वनि सुनते ही सिंह आदि सब शान्त हो जाते थे। फिर उनका विदेश भ्रमण हुआ। तदुपरान्त स्वामी रामतीर्थ हिमालय में विचरे और टिहरी में आकर विलंगना नदी में इन्होंने ३० वर्ष की आयु में जल समाधि ले ली। स्वामी रामतीर्थ के जीवन से प्रभावित होकर महाराजा कीर्तिशाह टिहरी नरेश को त्याग और वैराग्य की भावना होने लगी। तब से राजा को गीता और उपनिषदों का प्रवचन शास्त्रीजी सुनाते थे, इस अन्तराल में मंदिरों की व्यवस्था जो छिन्न-भिन्न हो रही थी उसको शास्त्रीय नियम के अनुसार प्रबन्ध करने को शास्त्रीजी से कहा गया। ऋषिकेश से लेकर हिमालय तक के मंदिरों का प्रबन्ध कार्य इनको सौंपा गया। २०-२२ बार बद्रीनाथ, गंगोत्तरी आदि की यात्रा का अवसर इन्हें मिला। हिमालय यात्रा में अनेक तपस्वियों के दर्शन और सम्पर्क से वेदान्त शास्त्र की निष्ठा कुण्डलिनी के जागरण की क्रिया इनको प्राप्त हुई। एक बार आदित्यराम भट्टाचार्य,

इलाहाबाद संस्कृत कालेज के प्रोफेसर इनके साथ आये और अनेक सिद्धपीठ और तपस्वियों के दर्शनों से वह बहुत ही प्रभावित हुए।

महामना पं० मालवीयजी के साथ शास्त्रीजी का बहुत काल तक सम्पर्क रहा। यथाशक्ति उनके साथ काशी विश्वविद्यालय की सेवा के रूप में चन्दा आदि एकत्रा करने का कार्य करते रहे। इस कार्य के लिए जब कलकत्ते में भी पधारे तब सरजान उडरफ से मिले थे वह तन्त्रशास्त्रके साहित्य को एकत्रा करने में संलग्न थे। सरजान की विचारधारा से यह प्रतीत होता था कि तन्त्रा शास्त्रा की सिद्धियों पर उनकी पूरी आस्था है। तंत्र शास्त्रा के महत्व को देखने का आपको फिर दूसरा अवसर मिला जब १९११ में कामाक्षा में जाकर ३-४ पुरश्चरण किये। उससे अनुभव हुआ कि मंत्रों के यथाविधि प्रयोग से अन्य सिद्धियों के अतिरिक्त रोग शमन करने की भी शक्ति है, अंगरेजी में जिसे हीलिंग पावर (Healing Power) कहते हैं इसका प्रयोग कामाख्या से आकर कलकत्ते में किया गया जिसका विवरण उस समय के भारतमित्र और वसुमती आदि हिन्दी एवं बंगला दैनिक पत्रों में नित्य निकलता था। रोगियों के आरोग्य होने की संख्या और रोगों के नाम का वर्णन उन पत्रों में विस्तार से था। इसी प्रकार लाहौर में जब इसका प्रयोग दिखलाया गया, वहाँ के ट्रिब्यून आदि पत्रों ने उसका प्रशस्त वर्णन किया। इन्होंने बहुत आदमियों को तंत्र शास्त्र और योग शास्त्रा के मार्ग

बताये जिससे मानवता में विश्वास हुआ कि दैवी शक्ति एक महान् निधि है जिससे मनुष्य को सच्चरित्र और वैराग्य, त्याग आदि साधनों से अनुष्ठान द्वारा सिद्धि प्राप्त हो सकती है, इससे कितनी ही वन्ध्या और गर्भ दोषवाली स्त्रियों को सन्तान भी हुई।

टिहरी के महाराज कीर्तिशाह ने दिवंगत होने के पहले अपने उत्तराधिकारी महाराज नगेन्द्र शाह को इनके शिक्षण में रक्खा। महाराज नगेन्द्र शाह के साथ इन्हें अजमेर जाना पड़ा और उन्हें कौटिल्य का अर्थ शास्त्र पढ़ाया। अजमेर में आपको कुछ बौद्ध ग्रन्थ और जैन ग्रन्थों के अध्ययन करने का भी अवसर मिला। महाराज कीर्तिशाह के दिवंगत होनेपर गरीब ग्राम्यवासी बालकों की शिक्षा के लिये जो योजना चल रही थी उसमें अंगरेजों के उपासक राज्य कर्मचारियों के द्वारा शिथिलता की जाने लगी और उनका शोषण पूर्ववत् चलने लगा। यह घटना शास्त्रीजी देख नहीं सकते थे। उन्होंने वहाँ की ग्राम्य जनता में क्रान्ति उत्पन्न करवाई जिससे क्षुब्ध होकर राज्य कर्मचारियों ने कांग्रेसी कह कर इनका देश से निष्कासन कर दिया।

सन् १९१४-१५ के कुम्भ के अवसर पर गांधीजी से हरिद्वार में भेंट हुई। उन्होंने गरीब ग्राम्य जनता का साथ देने का प्रोत्साहन दिया और उन्हीं की प्रेरणा से कांग्रेस का संचार कराया। राज्य के कर्मचारियों ने फिर इन्हें कारागार में रखने का साहस किया किन्तु कारागार न देकर फिर देश से निकाल दिया। देश से निष्क्रान्त होने के डेढ़ वर्ष के अन्दर माता का स्वास्थ्य अत्यन्त गिर गया

तब सत्याग्रह कर आप टिहरी गये और ४ दिन में ही आपकी माताजी का असह्य वियोग हुआ। वे शोकग्रस्त होकर फिर देश में भ्रमण करने लगे। यद्यपि यहाँ पर टिहरी का सम्बन्ध विच्छेद कर दिया फिर भी भुवनेश्वरी आश्रम के साथ सम्बन्ध बना रहा, कारण वह उपासना और योगाभ्यास के लिये सिद्धपीठ है जोकि अभी तक बनी हुई है।

टिहरी में एक बार ग्राम्य जनता पर गोलियाँ चलाई गई जिसमें कितने ही हताहत हुए। ईश्वर की प्रेरणा से टिहरी के महाराज ने इस घटना के जांच के लिये कमीशन में शास्त्रीजी और गोस्वामी गणेशदत्तजी और तीसरे वहाँ के चीफ जज पं० शिवानन्दजी को नियुक्त किया। निरपराधी तराई पर्वतवासी जनता जो अपना नैतिक और सामाजिक विकास की प्रगति करने में तत्पर थे उन्हें गोलीकांड से हताहत कर दिया गया। इस रहस्यपूर्ण घटना की जाँच जब की गई तो उसमें राज्य कर्मचारी वृन्द को बलात् बर्बरता और हत्या करने का दोषी पाया गया। उस रिपोर्ट पर टिहरी के राज्य-संचालक ने बड़ी शत्रुता की। वे लोग अपनी शत्रुता को लेकर गोस्वामी गणेशदत्तजी और शास्त्रीजी के प्रति कोई भी प्रतिकार नहीं कर सकते थे। किन्तु शास्त्रीजी के जेष्ठ पुत्र पं० प्रभुदत्तजी इन्जीनियर, जो स्टेट में इन्जीनियर थे, जब वह विलायत यात्रा से लौटे तो उनपर एक वारंट निकाला, जिसका निर्णय भारत सरकारसे हुआ कि उनका वारंट निकालना अवैधानिक था और

वारंट रद्दी किया गया। किन्तु श्री प्रभुदत्तजी के हृदय पर इस असत्य अपमान का इतना क्षोभपूर्ण आघात हुआ और उनकी बीमारी इतनी बढ़ी कि वह असमय में ही स्वर्गवासी हुए। इतनी मर्मान्तक वेदना पर भी शास्त्रीजी स्वकर्तव्य से विचलित न हुए। ऐसा लगता था कि अपना लक्ष्य पूर्ण करने की मानो आपने दृढ़ प्रतिज्ञा ही करली हो। स्व० श्री प्रभुदत्तजी के दो पुत्र और दो कन्यायें हैं। शास्त्रीजी के छोटे पुत्र लेफ्टिनेन्ट कर्नल श्रीप्रेमदत्तजी जोशी भारतीय सेना में उच्च अफसर हैं और उनकी दो सन्तान हैं।

सन् १६३७ में आपने आयुर्वेद के शास्त्रीय प्रचार को दृष्टि में रखकर मालवीयजी महाराज के साथ ही कुटी प्रवेश द्वारा कायाकल्प चिकित्सा मौनी बाबाजी की सन्निधि में साङ्गोपाङ्ग करवाई। इसका प्रचुर विज्ञापन तत्कालीन समाचारपत्रों में अत्यधिक देखने को मिला। आशा की जाती थी कि इस प्रकार के कायाकल्पों से भारतीय आयुर्विज्ञान नया रूप धारण कर संसार को रोगमुक्ति का मार्ग प्रदर्शन करेगा। भारतीय आयुर्वेद का स्तर एवं सम्मान बढ़ाना इस कल्प का उच्च लक्ष्य था।

धीरे-धीरे आपने टिहरी का संम्बध छोड़ देहरादून को निवास-स्थान बनाया। १६३८ में शास्त्रीजी की स्त्री का स्वर्गवास हो गया तब से त्याग-वृत्ति और सन्यासी का जीवन बिताते हुए आप वेदान्त शास्त्र का प्रचार करते हुए कलकत्ते में वार्षिक प्रवास के लिये शीतकाल में आया करते हैं। यहाँ गुरुमंडल नाम

नाम की संस्था स्थापित की, जिसके प्रधान सेठ श्री मनसुखरायजी मोर हैं। श्री मनसुखरायजी मोर से आपका परिचय पहले का है जब कि इनका "सात्त्विक जीवन" नामक पत्र निकलता था, जिसका ध्येय सत्य पर रहना और धर्ममय जीवन द्वारा सात्त्विकता पूर्वक काम करना तथा गरीब जनता की सेवा करना था। सेठ श्रीमोरजी धर्म जिज्ञासा और दीनदुखियों की दशा शान्तिमय रूप से करने और देश को विनाश से बचाने के संबंध में ही कार्य करते थे। इनका सम्पर्क शास्त्रचर्चा पर था। इन्होंने सर्वप्रथम अपने अनुभव से एक पुस्तक निकाली जिसका नाम "गृहस्थ धर्म" रखा गया। जिसके छै संस्करण हुए जोकि भारत के कोने-कोने में वितरण किये गये। इनमें शास्त्र प्रकाशन की श्रद्धा दिनोंदिन बढ़ती रही और इनमें अलौकिक चमत्कार भी आने लगा। जिसके लिये शास्त्रीजी मुक्तकण्ठ से यह शुभाशीर्वाद दिया करते हैं कि पुस्तकों को सबने पढ़ा, पढ़ते हैं और पढ़ते ही जावेंगे, किन्तु उसका भगवती की सेवा, उपासना एवं गुरु प्रसाद से, बिना पुस्तकों के रटन किये, जो विकास है उसके श्री मोर प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।

देवीं वाचमुपासते हि बहवः सारन्तु सारस्वतम्।
जानीते नितरामसौ गुरुकुलक्लिष्टो मुरारिः कविः ॥
अब्धिर्लङ्घित एव वानरभटैः किन्त्वस्य गम्भीरताम्।
आपातालनिमग्नपीवरतनुर्जानाति मन्थाचलः ॥

मुरारि कवि ने पुस्तकों का रटन नहीं किया केवल इष्टदेव प्रसाद और गुरुप्रसाद से उसने सारस्वत सार सरस्वती विद्या-धिष्ठात्री देवी के भण्डार की कुञ्जिका पाई। जिस तरह भगवान् रामचन्द्रजी के साथ सम्पूर्ण वानरों ने समुद्र को लाङ्घा परन्तु क्या उन्हें उसकी गहराई का पता लगा? नहीं, परन्तु उसकी सम्पूर्ण गम्भीरता और गहराई की थाह को तो मन्थराचल ही पा सका जो सदा अविचल रूप में वहां स्थित है।

इस प्रकार मुरारि कवि की उक्ति से स्पष्ट है कि भगवती प्रसाद का लाभ पाठशालाओं में पढ़नेवाले लोगों को नहीं हुआ जो कि उनके स्नेह के अधिकारी श्री मोर जैसे व्यक्ति कोहुआ है। श्री मोरजी के उद्योग से गुरुमंडल से सर्वप्रथम एक पुस्तिका निकली जिसका नाम "श्रमजीवन" रखा गया। इसका अर्थ यह था कि भारतवर्ष के सम्पन्न लोगों का धन श्रमजीवियों को सुख-सम्पति पूर्ण करने के लिये है, और श्रमजीवियों की सेवा भारत से ही सब देशों ने सीखी है। गुरुमंडल के १२, १३ पुष्प रूप में ग्रन्थ मोरजी ने सहस्रों रुपये व्यय कर प्रसिद्ध किये हैं वर्तमान पुस्तक ललितासहस्रनाम का भाष्य भी पूज्य गुरुजी की अमर कीर्ति है और श्री मोर की बुद्धि और ज्ञान के विचार विमर्ष से प्रकाशन किये हैं जो कि सबको उपहार रूप में वितरण किये जाते हैं। गुरुमंडल ने गणराज्य के लिए रजत घट में १०८ नदियों का जल अभिमन्त्राण कर राष्ट्रपति के अभिषेक के लिए बंगाल राज्यपाल

द्वारा दो बार दिल्ली में भेजा और गांधीजी के महाप्रयाण दिवस पर गवर्नमेंट हाउस में दो-तीन वर्ष तक गीता पाठ, सूत्र यज्ञादि कराकर दस हजार रुपया दान किया जिसमें पांच हजार रुपया राज्यपाल द्वारा आसाम की सहायता के लिये दिये गये।

संसार के सब कामों की सफलता मनुष्य के उत्साह, बल और बुद्धि द्वारा होती है। यह बल भगवत आराधन और ईश्वर की आस्था के साथ-साथ निर्विघ्नता से साधक में बढ़ता जाता है। इसपर देहरादून बल्लूपुर में एक महाविद्या मंदिर की स्थापना कर भवानी बालिका विद्यालय स्थापित किया जिसमें ग्राम्य की छोटी-छोटी बालिकाओं को सांस्कृतिक जीवन और आदर्श भारत की शिक्षा तथा देश-सेवा के संस्कारों के संचार करने के ध्येय से सुन्दर शिक्षा दी जाती है। इस पाठशाला में सर्व श्री विष्णुप्रसादजी पोद्दार की उदारता और श्रद्धा से कार्य प्रारम्भ हुआ। सौभाग्यवश १२ दिसम्बर १९५३ को प्रधान मंत्री पं० जवाहरलालजी ने भी इसका निरीक्षण किया। अभी श्रीमान् मनसुखरायजी मोर द्वारा २००) मासिक रूप में २ वर्ष तक इस बालिका विद्यालय के सञ्चालनार्थ आर्थिक सहायता का सौभाग्य मिला है।

श्रीमान् पूज्य शास्त्रीजी तन्त्र शास्त्र के उद्भट मर्मज्ञ हैं आपने शङ्कराचार्यजी के सौन्दर्य लहरी ग्रन्थ पर जो हिन्दी भाष्य किया है वह आपकी सूक्ष्मदर्शिता, विद्वत्ता, विषयप्रवेश की गरिमा और ग्रन्थ के हार्द को प्रगट करने की विलक्षण शैली

का ज्वलन्त उदाहरण है। संक्षेप में, जो गुरुमण्डल के पुष्पों के रूप में और स्वतन्त्र ग्रन्थ निर्माण कर आपने ठोस साहित्य जनता को दिया है उससे भारतीय युवकवर्ग संस्कृतिमय जीवन बनाकर अवश्य ही देश का गौरव बनसकेगा। आपके अवतक के क्रियाकलापों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जाता है :—

१—शिक्षा विभाग के कार्य में जब सन् १९२१ में आप पंजाब यूनिवर्सिटी में परीक्षक रहे तब पंजाब में हिन्दी प्रचार का कार्य किया।

२—शिक्षाकाल में गढ़वाल में कितने स्थानों पर कुरीतियों का संशोधन किया, जैसे टिहरी गढ़वाल के नाग में एक वर्ग में परम्परा से कन्या वेश्या बनती थी आपने उनके माता-पिता को शिक्षित कर सांस्कृतिक जीवन बनाया और उन्होंने जहाँ कन्या वेश्या होती थी अपनी कन्याओं को गृहस्थ के जीवन में बदल कर वर्णाश्रम संस्कृति को अपनाया और कुप्रथा का नाश कर दिया।

३—समानाधिकार की आवाज उठाकर आपने हरिजन बालकों की सामाजिक अयोग्यता का लक्ष्य कर कड़ा विरोध किया उसमें सफलता से सबकी उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया।

४—देश सेवा में स्वतन्त्रता की क्रान्ति का बीजवपन किया।

पहलेपहल गढ़वाल का एक भूगोल लिखा जिसमें वहाँ की धरातल में खनिज पदार्थ और धातुओं की खोज बताई गई, जिसका विवरण "प्राच्य शिक्षा रहस्य" में दिया गया है।

५ मंदिरों के कार्य करने में मंदिरों की व्यवस्था, वहाँ का

पूजन प्रकार पंडों के कर्त्तव्य बताये गये। भुवनेश्वरी तथा सुरेश्वरी में सड़क और एक धर्मशाला तथा सड़क और धर्मशाला। यमुनोत्तरी में राज्य के कोष से सड़क बनवाई और चार मील की सड़क बाबा काली कमलीवालों से और एक मंदिर और धर्मशाला बनवाई।

मंदिरों में धन अनुचित रीति से व्यय किया जाता था। प्रत्येक मंदिर में एक एक प्रधान मैनेजर नियत किया और दुराचार का निग्रह किया।

६—शास्त्रीजी ने अभी भुवनेश्वरी विद्यापीठ के लिये एक ट्रष्ट भी निर्माण किया है जिसके सदस्य निम्नलिखित हैं :—

१—सर्व श्री रामेश्वर दयालजी, डिपुटी कमिश्नर।
२— ,, श्री हरगोविन्दजी डबराल, डिपुटी कलक्टर।
३— ,, श्री लेफ्टि० कर्नल पी० डी० जोशी।
४— ,, श्री रमेश सिंहजी जायसवाल।
५— ,, श्री विष्णुप्रसादजी पोद्दार।
६— ,, श्री सूरजमलजी गुप्ता।

इस भवानी विद्याशाला की अधिष्ठात्री हैं वसंत कुमारी देवी घिल्डियाल।

आज इतनी आयु पाने पर भी गुरुजी की क्रिया क्षमता, चिन्तनशक्ति एवं शास्त्रव्यसन की निष्ठा उसी प्रकार है जैसी कि युवकों में होनी चाहिए। भारतीयों को आप जैसे दीर्घदर्शी शास्त्रचिन्तनपरायण महानुभाव के मार्ग दर्शन से अवश्य ही सफलता मिले अतः भगवती जगदम्बा ललिता से आपके दीर्घजीवन की कामना करते हुए पूज्य गुरुजी से अनुदिन हमसबको सत्कार्य में प्रवृत्त करते रहने की सादर प्रार्थना है।

॥ श्रीजगदम्बिकायै नमः ॥

किञ्चित्प्रास्ताविकम्

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः

जगति सर्वेऽपि प्राणिनः निरतिशयसुखविशेषं परमपुरुषार्थं मन्यमाना वेदशास्त्रेतिहासपुराणमीमांसादिशास्त्राणभ्यस्यमाना दरीदृश्यन्ते। चतुर्विधपुरुषार्थसिद्धिं निश्चितवन्तोऽपितेपुरुपार्थाअपि तादृशज्ञान-विज्ञानप्राप्याइति ज्ञानमपि चित्तैकाग्रतागम्यम्। चित्तै-काग्र्यं भगवदुपासना तन्नामकीर्तनादेव लभ्येति। शास्त्रेष्वपि द्वैविध्यं संविभक्तं कर्मोपासनादिसाधनानि ज्ञाननिष्ठा च अविद्यामलोपाधिविनिर्मुक्तान्तःकरणैः धीरोपासकैः समनन्तरैव चतुर्विधपुरुषार्थैकक्कृतकृत्यता भवति। उभयेऽपि ऐहिकामुष्मिक-निरवधिसुखभाजः सन्तो निःसीम निज-निज कर्मोपासना-बलेन काले ते शुद्धान्तःकरणाःसन्त उत्तरभूमिकां नामानुकीर्तनात् प्राप्नुवन्ति। सर्वेषु वेदशास्त्रस्मृतिपुराणेषु एतदर्थं जेगीयते। तदेतत्सर्वमालोच्य परमपुरुषार्थसाधनंतद्देव्याआराधनं तन्नाम-कीर्तनञ्चेति हयग्रीवस्य मुखात् परमसाधकेन महामुनिनाऽगस्त्येन प्राप्तम्।

"इत्येवं नामसाहस्रं कथितं ते घटोद्भव।
रहस्यानां रहस्यञ्च ललिताप्रीतिदायकम्॥
सर्वरोगप्रशमनं सर्वसम्पत्प्रदायकम्।"

यद्यप्यन्यानि नैकशः सन्ति सहस्रनामानि परं तानि नैतस्य तुल्यतामर्हन्ति ललितासहस्रनामस्तोत्रमिदं भगवत्या वशिन्यादिशक्तिद्वारा क्षितितलमवातीतरत् ललितासहस्रनाम-स्तवके प्रत्येकं नाम मन्त्ररूपचमत्कारिकफलप्रदश्चान्ते भगवत्या सायुज्यप्रदमिति जेगीयते।

तथा च सौन्दर्यलहर्य्याम् द्वात्रिंशच्छ्लोके।

"भवानि त्वं दासे मयि वितर दृष्टिं सकरुणामिति स्तोतुं वाञ्छन् कथयति भवानि त्वमितियः तदैव त्वं तस्मै दिशसि निजसायुज्यपदवीं मुकुन्दब्रह्मेन्द्रस्फुटमुकुट नीराजितपदाम् २२।

अत्रेदं विचार्यं भगवत्यानामानुकीर्तनेन तदुपासनया निःश्रे-यसरूपः परमानन्दः प्राप्यते। परमानन्दप्राप्तिस्तु परब्रह्मैक्यनिष्ठा "सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म"। परब्रह्मावगति नामरूपाभ्यां न भवति नामरूपकल्पना अविद्ययाऽपरब्रह्मावसाना निर्गुणे निष्कले पर-ब्रह्मणि शब्दादिविषयानामगम्यत्वात् तर्हि कथं सहस्रनामजापी भगवत्या परया ब्रह्मशक्त्या सायुज्यं भवति।

शब्द चतुष्टया (जाति क्रिया भाव रूढ़ी) नां प्रवृत्तिः सकले अपरे ब्रह्मणि भवति। अशब्देऽगोचरे सत्यज्ञानादिलक्षणे पर-ब्रह्मणि नाम रूपाणामप्रवृतिः। ब्रह्म द्विविधं सकलं निष्कलं च।

"द्वे ब्रह्मणि वेदितव्ये परंचापरंच" सकलमपरब्रह्म द्विविधं जगदात्मकं जगन्नियन्ता च "शिवः कर्ता शिवोभोक्ता" देवीदात्री च भोक्त्री च।

अत्र पुंस्त्रीलिंगानामपि नियमो नास्ति। "पुं रूपं वा स्मरेद्देवि स्त्रीरूपं वा विचिन्तयेत् अथवा निष्कलं ध्यायेत् सच्चिदानन्द-लक्षणमिति।"

अन्यत्रापि'नत्वमम्ब पुरुषो नचांगना चित्स्वरूपिणी नषण्डोनापिते नापि भर्तुरपि ते त्रिलिंगिता त्वां विना न तदपि स्फुरेदियम्' अया ब्रह्मभावभक्तानानुजिघृक्षया तद्वासनानुसारेण गृहीतानां रूपाणामनन्तत्वात् तद्विशिष्टरूपेणानन्त्यमेव। तथा च वर्णितम्—

"गिरामाहुर्देवीं द्रुहिणगृहिणीमागमविदो।
हरेः पत्नीं पद्मां हरसहचरीमद्रितनयां॥
तुरीया कापि त्वं दुरधिगमनिःसीममहिमा।
महामाया विश्वं भ्रमयसि परब्रह्ममहिषि॥
"यथा मायैका भिन्नरूपेण कमलाख्या सरस्वती।"
सावित्री साच संख्या च भूता कार्यस्य भेदतः॥"
"उमेति केचिदाहुस्तां शक्तिं लक्ष्मीं स्तथापरे।
भारतीत्यपरे चैनां गिरिजेत्यम्बिकेति च॥"

देवीपुराणे—

"देव्या व्याप्तमिदं सर्वं जगत्स्थावरजंगमम्।
इज्यते पूज्यते देवैरन्नपानात्मिकेति सा॥
वृक्षेपूर्व्यां तथा वायौ व्योम्निचाग्नौ च सर्वदा।

कूर्मपुराणे हिमवन्तं प्रति देव्या वचनम्—

अशक्तो यदि मां ध्यातुमैश्वरं रूपमव्ययं।
तदा मे सकले रूपे कालस्याद्यन्त भेदिनी॥

यदेव रूपं मे तात मनसो गोचरस्तव ।
तन्निष्ठस्तत्परोभूत्वा तदर्चनपरोभव: ।।
यत्तुमे निष्कलं रूपं चिन्मात्रं केवलं शिवम् ।
सर्वोपाधिविनिर्मुक्तमेकमेवामृतं परं ।।
ज्ञानेनैव तु तल्लभ्यं क्लेशेन परम्पदम् ।

इत्याद्यागमादिप्रमाणैः मुमुक्षुणान्तःकरणशुद्धये सकलब्रह्मोपासना कर्तव्येति साचोपासना "इच्छा क्रिया ज्ञान" शक्ति त्रयात्मिका साधकैरुपास्या सैव चिच्छक्तिः परब्रह्मणःस्वात्मस्वरूपाभिव्यक्तिः शक्तिरुपास्या ।

श्रीगुरोः पादुका मूर्ध्नि श्रीचक्रं हृदिसंस्थितम् ।
श्रीविद्या यस्य जिह्वाग्रं स साक्षात्परमःशिवः ।।

इति विदुषाम्विधेयस्य

नववर्षारम्भः
विक्रम सं०
२०११

राजगुरुहरिदत्तशास्त्रिणः

॥ श्री मातृचरणाःप्रसीदन्ताम् ॥

आमुख

त्रिपुरां कुलनिधिमीड़ेऽरुणश्रियं कामराजविद्धांगीं त्रिगुणां देवैर्निनुतामेकान्तां विन्दुगां महारम्भाम्। सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म" ब्रह्मका निरूपण सत्यज्ञान अनन्तसे कहा है ब्रह्म नाम रूप से व्यावृत्त नहीं है।

"अस्ति भाति प्रियं रूपं नाम चेत्यंश पञ्चकम्।
आद्य त्रयं ब्रह्म रूपं जगद्रूपमथो द्वयम् ॥

परम पुरुषार्थ मोक्ष परब्रह्मावगति नाम रूप से अतीत होने पर भी अपर ब्रह्म की उपासना के लिए नाम रूपात्मिका उपासना भक्ति अन्तः करण शुद्धि द्वारा परब्रह्म (मोक्ष) दायिनी होने से वेदशास्त्र पुराण मीमांसा प्रतिपाद्य देवोपासना पूजा नामकीर्तन यज्ञादि सब परम्परा से मोक्ष प्रतिपाद्य है। धर्म कर्म उपासना वही है जिससे परम शान्ति समता का ज्ञान ब्रह्मात्मस्थितिका लाभ हो। यद्यपि वेद स्मृति पुराणादिकों में स्थान २ पर उपासना भक्ति से ब्रह्मसाक्षात्कार करने का वर्णन आया है तथापि उपासना का विशदी करण उसकी पृथक् २ भूमियों का निरूपण त्रिगुणात्मक संसार में साधक के प्रधान गुण और साध्य के गुणोंके संमिश्रण से गुणानुसार भी उपासना का निर्देश तन्त्रशास्त्र में किया है। भगवद् उपासना से उस

सच्चिदानन्द की शक्ति का विकाश करना बताया है जो मा
भावना से साध्य है तथा विश्व के विकाश में सहायक होती है।

मातृ शब्द में आर्त, जिज्ञासु अर्थार्थी एवं ज्ञानी सब की ह
समान रूप से भावना है। भगवत् शक्ति मातृ शक्ति में परिणत
होकर संसार को शैशवावस्था में देखकर उसका कष्ट निवारण
करती है।

मार्कण्डेय पुराण में आया है—

"तामुपैहि महाराज शरणं परमेश्वरीम्।
आराधिता सैवनृणां भोगस्वर्गापवर्गदा॥"

यही मातृ शक्ति भगवती उपासना द्वारा समाराधित भोग
स्वर्ग, मोक्ष दात्री होती है। भगवती ललिता के प्रसन्न होने
पर विष्णु का कटा शिर पुनः लग गया था। तब से हयग्रीव
रूपी भगवान् का अवतार पुराण प्रतिपाद्य है। हयग्रीव की
पुण्य रोचक कथायें पुराणों में है। महाविद्या के परमोपासक
अगस्त्य मुनि का हयग्रीव से सम्वाद पद्मपुराण आदि में आया है
मुनि अगस्त्य ने हयग्रीव से भगवती ललिता की उपासना विधि
सांगोपांग प्राप्त की थी। किन्तु सहस्रनामावली की प्राप्ति न होने
से मुनि व्याकुलता से बार २ हयग्रीव से जिज्ञासा करते रहे, उन्हें
सन्देह यह हुआ कि सहस्रनाम तो मुझे नहीं बताया है
कदाचित् मैं उसका अधिकारी नहीं हूं। ललितासहस्रनाम
का ज्ञान हयग्रीव को भी नहीं था। भगवती की आराधना करने
पर भगवती ने वशिन्यादि शक्तियों को प्रकट कर उनके द्वारा

एक २ नाम श्रीमाता से प्रारम्भ कर श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी श्री शिवा पर्यन्त सहस्रनामावली का विकाश कराया है। तब अगस्त्यजी को भगवान् हयग्रीव ने इन नामों का बोध कराया भगवती ललिता पराशक्ति मोक्ष स्वरूपा होने से उसके जाति, क्रिया, भाव, रूढ़ि चार प्रकार के नामों से व्यवहार अगम्य होनेपर भी अपर या सकल रूपात्मक में स्तवन करने से अन्तः-करण शुद्धि द्वारा ब्रह्मावगति हो जाती है। "यज्ञैर्यज्ञैर्महायज्ञै-र्ब्राह्मीयं क्रियते तनुः" यज्ञ उपासना से शुद्धान्तःकरण द्वारा ऋषि मुनियों को ब्रह्मावगति हुई है। गीता—"बहवो ज्ञानतपसा पूतामद्भावमागताः" तपस्या उपासनादि द्वारा शुद्धान्तःकरण होने से बहुत मनुष्य ब्रह्मभाव को प्राप्त हुए हैं। अतः तप उपा-सना कर्म भी मोक्ष मार्ग के साधक हैं। उपनिषद् में आया है "द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये' ब्रह्म के दोनों स्वरूप जानने चाहिए। परब्रह्म अपरब्रह्म; परब्रह्म ज्ञानगम्य है अपरब्रह्म भक्ति कर्मोपासनागम्य। अपर ब्रह्म के भी दो रूप जानने योग्य हैं, (१) जगन्नियन्ता (२) जगदात्मक। "स ऐक्षत एकोऽहं बहु स्याम्" यह स्फुरणा जिस अवस्थामें होती है वहां पर उसे जगन्नियन्ता कहा जाता है। जग-दात्मक पृथिव्यादि स्थावर जङ्गम, जरायुज, अण्डज, स्वेदज, उद्भिज्ज आदि चराचर नाम रूपात्मक जगत् ही जगन्नियन्ता जगदात्मक रूप में आभास होता है।

"शिवः कर्ता शिवो भोक्ता सर्वं शिवमयं जगत्"।

भोग्य एवं भोक्ता भी वही है।

"विसृष्टौ सृष्टिरूपात्वं स्थितिरूपा च पालने।
तथा संहृति रूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये'॥"

मा० पु०।

तुमही ब्रह्माण्ड रूपिणी, तुमही ब्रह्माण्ड रचयित्री हो।

"देवि दात्री च भोक्त्री च सर्वं देवीमयं जगत्।"

वही जगन्नियन्त्रिका शक्ति ज्ञानियों के ध्यान, पूजा निमित्त उनकी परा भक्ति पर नाम रूपात्मक होकर प्रकट होती है।

"मन्त्रिणी ज्ञानिनां चैव यतीनां योगिनां तथा।
ध्यानपूजानिमित्तं हि त्वनुगृह्णाति मायया॥"

भक्तों के हितार्थ अपनी त्रिगुणात्मक माया के द्वारा वह ब्रह्मसत्ता नामरूपात्मक हो जाती है। इसी आशय का भगवती पार्वती ने हिमालय को उपदेश दिया है।

"अशक्तो यदि मां ध्यातुमैश्वरं रूपमव्ययं।
यदेवरूपं मे तात मनसो गोचरस्तव॥
तन्निष्ठस्तत्परो भूत्वा तदर्चनपरो भव।
यत्तु मे निष्कलं रूपं चिन्मात्रं केवलं शिवम्॥
सर्वोपाधिविनिर्मुक्तमेकमेवामृतम् परं।
ज्ञानेनैव हि तल्लभ्यं क्लेशेन परमं पदम्॥

यदि हे पितः तुम मेरे चित्, (आत्मस्वरुप को प्राप्त न हो सको तो मेरे अनन्त नाम अनन्त रूप हैं। अथात् जहां रूप है वहां नाम भी है। अतः जो रूप नाम तुम्हारे मन को भावे उसी में निष्ठा कर उसी रूप का पूजन—उपासना करो।

आत्म स्थिति तो ज्ञान से ही गम्य है उपासना द्वारा मनः शुद्ध होने से ज्ञान निष्ठा प्राप्त होती है। ज्ञान निष्ठा जब तक न हो तब तक सकल ब्रह्मस्वरूपा में ध्यान रखना चाहिए। अशब्दमस्पर्श ब्रह्म का बोध साक्षात् शब्द द्वारा नहीं होता, लक्षण द्वारा होता है। जैसे तत्त्वमसीत्यादि में लक्षणा से बोध होता है। उपासना व कर्मकाण्ड का विधान भगवान् कहो या भगवती कहो, उसके नाम रूपात्मक विग्रह में होता है।

हयग्रीव ने अगस्त्यमुनि को भगवती ललिता के सहस्रनाम का माहात्म्य बताया है। जिस-जिस नाम से जो भावना बनती है उस-उस भावनात्मक कार्य की सिद्धि होने से ये सहस्रनाम एक-एक नाम मन्त्ररूपी देवता है। अगस्त्यसंहिता में आया है

"अस्या नामान्यनन्तानि तानि वर्णयितुं मया।
न शक्यानि मुनिश्रेष्ठ कल्पकोटिशतैरपि ॥"

भगवती के अनन्त नाम है। अनन्तनाम और नाम रूप रहित इन दोनों शब्दों का एक अर्थ है। प्रत्येक वस्तु अनन्त में एक हो जाती है यह नियम है। गुणकर्म से जो नाम होते हैं वे असंख्य हो सकते हैं परन्तु अनन्त नहीं।

देवी भागवतेः—

"असंख्यातानि नामानि तस्या ब्रह्मादिभिः सुरैः।
गुणकर्मविभागाद्यैः कल्पितानि च किं ब्रुवे ॥"

भगवती ललिता के "एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म" एक चिच्छक्ति के अनन्ता होनेपर भी गुण, कर्म तथा साधक की सिद्धि विशेष होने

से असंख्य नामों की कल्पना हुई है। उपनिषद् में आया है—"एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचन्द्रवत्" एक ही चन्द्रमा के असंख्य बिम्ब जैसे जल में दीख पड़ते हैं वैसे एक ही चिच्छक्ति के अनेक नामों के प्रतिबिम्ब शब्दात्मक महोदधि में दीख पड़ते हैं,यथा—"एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति अग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः" यथार्थ में एक ही अद्वैत शक्ति का अनेक रूप और नामों में आभास प्रतीत होता है यह सारा ब्रह्माण्ड उसीका आभास रूप है। आभासरूप ब्रह्माण्ड के आभासरूपी नामरूप ही हितकारी हैं। इनके ही अवलम्ब से सत्य प्राप्ति होती है। नाम ही मन्त्रात्मक देवता हैं। सम्पूर्ण शास्त्रों में प्रणव को भगवान् का मुख्य नाम माना है। "ओ३मित्येकाक्षरं ब्रह्म" यह नाम नित्य ब्रह्म की प्राप्ति का प्रतीक होने से जिसको प्राणोत्क्रमण काल में ॐकार शब्द में निष्ठा हो जाय वह दुःख निर्मुक्त शान्त ब्रह्मस्वरूप हो जाता है। मातृका कोश में ॐकार का स्वरूप सर्वात्मक बताया है—"ॐकारो वर्तुलाकारो मन्त्राद्यःप्रणवो ध्रुवः"। ॐकार अव्यक्त बिन्दु है यही सम्पूर्ण मन्त्रों का प्राण है। ॐकार का वर्णन माण्डूक्योपनिषद् में देखिये। वस्तुतः भगवती के नामकीर्तन से अनेकों को सिद्धि हुई वही मार्कण्डेय भगवती के नामकीर्तन से चिरजीवी है। रति, कामदेव, दुर्वासा, सूर्य आदि सभी को भगवती के नामकीर्तन से सिद्धि प्राप्त है।

भगवती के कोई नाम अवस्था भेद के हैं यथा, विश्वरूपा तैजसात्मिका ; कोई नाम विशेषण के हैं, मालिनी इत्यादि। कोई

स्थावरात्मिका के हैं मही इत्यादि। कोई सगुण ब्रह्म के विशेषण हैं मुकुन्द इत्यादि। इस प्रकार नाम बहुत प्रकार से आये हैं। जितनी भी शब्द साहित्य राशि है वह सब भगवती के ही नाम हैं तथापि भगवती के मुख से जो-जो नाम प्रकट हुए हैं तथा जिन-जिन नामों के जपने से भक्तों को देवी का साक्षात्कार हुआ है जिन-जिन नामों के कीर्तन से उनके मन के संकल्प सिद्ध हुए हैं उन-उन नामों का संग्रह किया है। यथा, मार्कण्डेयपुराण में "दुर्गे स्मृता हरसि भीतिम्"।

दुर्गानाम उच्चारण करने से ही भय दूर हो जाता है। राम-राम के जपने से ही वाल्मीकि, हनूमान् आदि भक्तों को भगवत्साक्षात्कार हुआ। कृष्णकृष्णेति से मीरा आदि भक्तों को। शिवेति मंगलं नाम शिव-शिव कहने से कितने ही पापी निर्मुक्त हुए हैं। अतः सिद्धि प्राप्त नामों का इसमें वर्णन हुआ है। जैसे, अन्न की कामनावाला अन्नदायैनमः इसका कीर्तन करता है। धनार्थी वसुदायैनमः राज्यार्थी श्रीमहाराज्ञ्यैनमः इत्यादि प्रत्येक नाम ललितासहस्रनाम के मन्त्र का बोधक है।

स्वपन्तिष्ठन् व्रजन् मार्गे प्रजपन् भोजने रतः।
कीर्तयेत् सततं देवीं स वै मुच्येत बन्धनात्॥

जो चलते-फिरते भी भगवती का नामकीर्तन करता है वह सब भयों से छूट जाता है। प्रत्येक भिन्न-भिन्न नाम में पृथक्-पृथक् फल है। यथा—

"उमानामामृतं पीतं येनेह जगतीतले।
न जातु जननिस्तन्यं स पिबेत् कुम्भसंभव !॥"

उमा नाम के कीर्तन से ब्रह्मज्ञान, दुर्गे नाम कीर्तन से भय का नाश, मातः नामकीर्तन से प्रेम का सञ्चार, महारानी नामकीर्तन से ऐश्वर्य, सर्वरोगप्रशमनी इस नामकीर्तन से बड़े-बड़े रोग दूर हो जाते हैं।

कालिकापुराण में आया है—

"ये त्वांस्तुवन्ति जगन्मात र्भवतीमम्बिकेति च।
जगन्मयीतिमायेति सर्वं तेषां प्रसीदति॥"

जो मनुष्य हे जगन्मातः ! हे अम्बिके इत्यादि नामों से भगवती का कीर्तन करते हैं उनकी सब कामना सफल हो जाती है। विष्णुपुराण में आया है—"येत्वां मायेति दुर्गेति वेदगर्भाम्बिके तथा। भद्रेति भद्रकालीति" इस प्रकार जो भगवती का कीर्तन करते हैं वे सब संकटों से मुक्त हो जाते हैं। ललितासहस्रनाम में नामों का संकलन किस प्रकार है—

त्रिपुरां कुलनिधिमीडेऽरुणश्रियं कामराज विद्धांङ्गीम्।
त्रिगुणैर्देवैर्निनुतामेकान्तां विन्दुगां महारम्भाम्॥

तीन रेखाओं त्रिकोण के मध्य विन्दु स्थान में जिसका (निवासस्थान) पुर है उसे त्रिपुरा नाम से संकेत है। यद्वा, वामा, ज्येष्ठा, रौद्री; यद्वा, इच्छा, क्रिया, ज्ञान इन तीन विमर्श सूचक त्रिकोण के मध्य बिन्दु में जिसका स्थान है। जैसे कालिका पुराण में दिखाया है—

त्रिकोणं मण्डलं चास्य भूपुरञ्च त्रिरेखकम् ।
मन्त्रोऽपि त्र्यक्षरः प्रोक्तस्तथा रूपत्रयं पुनः ॥
त्रिविधा कुण्डली शक्तिस्त्रिदेवानाञ्च सृष्टये ।
सर्वं त्रयं त्रयं यस्मात् तस्मात्तु त्रिपुरा मता ॥

सारा संसार तीन संख्या में ओत-प्रोत है। इस कारण महादेवी त्रिपुरा नाम से कही गई है। यह भगवती त्रिपुरा कुलनिधि अपने कुल की निधि सम्पत्ति है यद्वा, कुल-आचार की विकाश करनेवाली निधि है। इसकी उपासना से मानवता का सच्चा आचरण जीवन क्रम बनता है। यद्वा कुलनिधि कु-पृथ्वीतत्व जिसे आधारचक्र नाम से षट्चक्र में बताया है। उस आधार-चक्र में लय निवास करनेवाली कुलकुण्डलिनी शक्तिरूपा कामराज कामकला से जो मन्त्ररूपा होकर प्रकट हुई है; यद्वा, कामराज परमशिव उसका जिसमें प्रवेश है अर्थात् आत्मसाक्षात्कार जिसकी उपासना से होता है।

अरुणश्रियम्—प्रातःकालीन सूर्य की कान्ति के समान जिसकी कमनीय श्री-शोभा है। त्रिगुण (सत्व, रज, तम) इन गुणों की मूर्ति विष्णु, ब्रह्मा, रुद्र इन देवताओं से जिसकी उपासना की जाती है। एकान्ताम्—जिसकी उपासना सिद्धि से एकान्त "एक मेवाद्वितीयं ब्रह्म" एक आत्मनिष्ठा को छोड़ सब चेष्टा (कर्म) समाप्त हो जाते हैं; यद्वा, अकार शिव, इकार शक्ति जिसके ज्ञान से शिवशक्त्यात्मक सामरस्य भाव मिल जाता है।

विन्दुगाम्—विन्दु सर्वानन्दमय श्री विद्याचक्र के त्रिकोण का

बिन्दु उस सर्वानन्दमय चक्र में रहनेवाली आत्मानन्दस्वरूपिणी महारम्भाम् सृष्टि का सर्जन, पालन, संहाररूपी महान् कार्य करनेवाली मोक्षदात्री भगवती त्रिपुर सुन्दरी की ईड़े-स्तवना करते हैं। इसी मंगलाचरणात्मक श्लोक से भगवती के नामों का भी उद्धरण होता है। जैसा वररुचि ने संकेतोद्धार में बताया है—

> क ट प य वर्गभवैरिह पिण्डान्तै रक्षरैरंकाः।
> ने ये शून्यं ज्ञेयं तथा स्वरैः केवले कथिताः ॥

पिण्डान्तैः शब्द से व्यञ्जनाक्षरों का बोध समझना 'अङ्कानां वामतो गतिः इस न्याय से त्रिपुरा शब्द प कार एक संख्या रकार द्विसंख्या होने से एकविंशेति(इक्कीस) संख्या हुई। इससे त्रिनयन से त्रिकोणगा पर्यन्त २१ नाम होते हैं। निधि-नवनिधि का बोधक होने से "कुलामृतैकरसिका कुलरूपिणी तक नव नाम हैं। अरुण शब्द सूर्य का बोधक होने से श्रीमाता से श्रीशिवा पर्यन्त द्वादश नाम आते हैं। कामराज विद्धांगीम् षोडश नाम काशेवद्ध मांगल्य से कामकेलिम् तक।

विद्धांगीम्—विशुक्र प्राणहरणी से विरागिणी नाम तक एकोनचत्वारिंशत् ३९ नामावली बनती है। त्रिगुण से गुणनिधि, गुणप्रिया, गुणातीता, ये तीन नाम हैं। निर्मिताम् इस शब्द षष्टिनामावली निजारुणा नाम से निरालम्बपर्यन्त १०। एकान्त एक नाम बिन्दुगां से तीन नाम बैन्दवासना, बिन्दुभाण्डवासिनी

बिन्दुतर्पणसंतुष्टाम। महारम्भाम् से द्विचत्वारिंशनाम महालावण्य नाम से महेशपर्यन्त ४२ नाम हैं।

ललिता नाम सहस्रे छलार्णसूत्रानुयायिन्यः।
परिभाषा भाष्यन्ते संक्षेपात् कौलिकप्रमोदाय॥

ललितासहस्रनाम जहाँ कहीं भी छलाक्षर आगे हो वहाँ-वहाँ पर उन-उन नामों की परिभाषा बताई गई है जिससे साधक लोक छलाक्षर के कारण अर्थ संगति करने में भ्रम में न पड़ जायँ।

पञ्चाशदेक आदौ नामसु सार्द्ध द्व्यशीतिशतम्
षडशीति सार्द्धान्ते सर्वे विंशति शतत्रयंश्लोकाः

सहस्रनाम में प्रथम भाग में ५१ एकपञ्चाशत् श्लोक हैं। एक सौ अशीति १८६ अर्द्ध श्लोक है। अन्त में फलश्रुति के मिलाकर सब शतत्रय विंशति ३२० श्लोक हैं।

अक्षु शराच्छरवर्णांस्ततः समानन्तिमौ कचयोः
अथ मध्यान्यांस्तपयोर्द्वितीयमन्त्येत्यजेन्नवम्

अक्षु सोलह स्वरों में से अक्षु प्रथम पांच छोड़कर षष्ठ वर्ण से दशम तक पांच को छोड़कर नव अवशिष्ट समाक्षर द्वादश चतुर्दश षोडश बाकी है। क च योः कवर्ग चवर्ग के दो-दो अन्तिमाक्षर घकार, ङकार, झकार, और ञकार को छोड़ दिया है। टवर्ग में टवर्ग के मध्य के वर्ण डकार छोड़कर तवर्ग पवर्ग के द्वितीयाक्षर थकार फकार यवर्ग का नवमाक्षर लकार त्यागकर शेष

अक्षरों से नामावली बनी है। अर्थात् अवशिष्ट ३२ द्वात्रिंशाक्षरों से नामावली प्रकट हुई है। सूतसंहिता में आया है—

"द्वात्रिंशत् भेदभिन्नायां तां वन्देऽहं परात् पराम्।"

इत्थं शिष्टानुष्टुब् वर्णाख्येसु नामसु संख्याः। अर्व नट त्रिद्वि-ष्येक द्वीचतुः कञ्जपान वरधीराः।

इस प्रकार एकोनविंशति अक्षरों को त्याग कर शेष ३२ द्वात्रिंशत वर्णों से भगवती के सहस्रनामों का आविर्भाव हुआ है।

यथा अर्व, अकारादि ४० चत्वारिंशत् नट-आकारादि दश नाम त्रि इकारादि तीन नाम द्वि, ईकारादि दो नाम २, इषु, उका-रादि पञ्चनाम ५, एक, एकारादि एक नाम द्वि, ओकारादि २ दो नाम चतुः अंकारादि चार नाम कंकारादि एकाशीति ८१ नामानि पान खकारादि एक नाम १ वर गकारादि २४ चतुर्विंशतिनामानि धीर चकारादि एकोनत्रिशत् २९ नामानि।

किं धूप द्विस्तम्भ छलभय मांसे पदे वरः संगः।

प्रकट गया जलवाटी धुसिधर्मे माखखोल्कटिकाधीः।

किं छकारादि एक नाम १ धूप जकारादि एकोनविंशतिनामानि १९ द्वि ढुकारादीनि दो नाम २ स्तम्भ तकारादि ४६ षट्चत्वारिंशत् नामानि छल दकारादीनि सप्तत्रिंशत्नामानि ३७, भय, धकारादीनि चतुर्दशनामानि १४ मांसे, नकारादीनि पञ्चसप्त नामानि ७५ पदे, पकारादीनि एकाशीतिःनामानि ८१ वरः वकारादीनि चतुर्विंश-तिनामानि २४ सङ्गः भकारादि सप्तत्रिंशत् ३७ नामानि प्रकट मका-रादि द्वादशोत्तरशतनामानि ११२ गया, यकारादि त्रयोविंशना-

मानि २३ जल रेफादीनि ३८ अष्टत्रिंशत्नामानि वाटी लकारादीनि १४ चतुर्दश नामानि धुसि वकारादीनि एकोनाशीति ७९ धर्मे शकारादीनि ५९ नामानि मा षकारादीनि पञ्चनामानि ५ खखोल्क सकारादीनि द्वाविंशत्युत्तरशतम् १२२ नामानि टीका हकारादीनि एकादश ११ नामानि धी; क्षकारादीनि नव नामानि।

इत्थं नामसहस्रं साधकलोकोपकारकं विहितम्। इस प्रकार पराम्बा भगवती ललिता के सहस्रनाम वशिन्यादि शक्तियों के द्वारा भगवती ने संसार के उपकारार्थ विस्तृत किया है।

देवीभागवत में आया है--

न तदस्ति पृथिव्यां दिवि प्राप्यं सुदुर्लभम्।
प्रसन्नायां शिवायां यदप्राप्यं नृपोत्तम॥

कोई वस्तु ऐसी नहीं है जो भगवती के प्रसन्न होनेपर प्राप्त न हो सके। वहीं पर आया है—

मन्दास्तेऽतीव दुर्भाग्या रोगैस्ते समुपद्रुताः।
एषां चित्ते न विश्वासो भवेदम्वार्थनादिषु॥

वे मन्दभागी रोग दरिद्र के शिकार होते हैं जिनके हृदय में माता के नामोच्चारण पर विश्वास नहीं है। ब्रह्मा विष्णु, रुद्र कुबेर, लोपामुद्रा, सूर्य, चन्द्रमा ये सब भगवती के नाम मन्त्र के उपासक रहे हैं। कोई भी माता के कमनीय सरस नाम के निकलते ही जिह्वा में रस भर जाता है। इसी प्रकार मुख्य नाम शिवादि शब्दों के उच्चारणकीर्तन से सिद्धियां प्राप्त होती हैं। ध्रुव, प्रह्लाद कितने ही राम के नामकीर्तन से मुक्त हो गये हैं तथा शास्त्रानुसार

जिह्वा में जिस देवता का मन्त्र या नाम आता है उसी समय से उस देवशक्ति का विकाश होने लगता है। संसार के लोग भी तो यह जानते ही हैं। जिन नामों से जिस को प्रसन्न कर सकते हैं वे नाम नित्य उसके समीप व्यवहृत करने की नीतिज्ञता है।

भगवती ललिता के ये सहस्रनाम वशिन्यादि शक्तियों द्वारा प्रकट हुए हैं। इन प्रत्येक नाम के कीर्तन पूजन का फल ग्रन्थ के समाप्ति में लिखा है। नामकीर्तन की महिमा न केवल मन्त्र शास्त्र में ही है अपितु प्रायः सब शास्त्रों में है। जिस देवता के जिस गुणविशिष्ट जिस नाम का जो कीर्तन करता है उसके जीवन में वही प्रभाव आ जाता है। "हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामानुकीर्तनात्" भगवान के नामकीर्तन करनेवाले को यम यातना नहीं होती है। "श्रीविष्णोः श्रवणे परीक्षिदभवद् वैयासकिः कीर्तने" व्यासजी ने अष्टादशपुराणों में भगवत् कीर्तन ही बताया है। अतः भगवती के नामकीर्तन करनेवाले भवभय से मुक्त होकर शान्त शिवात्मक जीवन प्राप्त करते हैं। हे अम्बे भगवति तुम्हारी सहस्रनामावली का भाष्य लिखकर, अपने पुर में सतत निवासिनी भगवानी अम्बे तुम्हारी स्मृति में तुम्हें ही सादर समर्पण करता हूं। गुरुमण्डल के तत्वावधान में यह तुम्हारी पूजा है।

श्रीपञ्चमी
२०१० } राजगुरु—हरिदत्त शास्त्री

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

॥ श्रीमत्त्रिपुरसुन्दर्यै ललिताम्बायै नमः ॥

अथ

॥ ललितासहस्रनाम ॥

त्रिपुरां कुलनिधिमीडेऽरुणश्रियं कामराजविद्धांगीम्।
त्रिगुणैर्देवैर्निनुतामेकान्तां बिन्दुगां महारम्भाम् ॥१॥

टीका—तीनपुर रूपिणी मूर्ति यद्वा भूपुर मण्डल कोण रेखा-त्रयात्मक समूह जिसकी मूर्ति जैसे कालिका पुराण में दरशाया भी है।

त्रिकोणं मण्डलं चास्या भूपूरं च त्रिरेखकम्।
मन्त्रोऽपि त्र्यक्षरः प्रोक्तस्तथा रूपत्रयं पुनः॥
त्रिविधा कुण्डली शक्तिस्त्रिदेवानां च सृष्टये।
सर्वं त्रयं त्रयं यस्मात्तस्मात्तु त्रिपुरा मता॥

सब वस्तुओं के तीन भेद होने से भगवती का नाम त्रिपुरा शब्द से संकेत किया है यही शक्ति कुल साधक के वंश की निधि है। अर्थात् त्रिपुरा की उपासना से सब प्रकार की निधि प्राप्त होती है यह शक्ति कामराज शिव के साथ मिली है जैसे सूर्य के

साथ प्रकाश मिला रहता है। सत्व-रज-तम तीन गुणों से प्रकट हुए तीन देवता ब्रह्मा, विष्णु, शिव से उपासना की हुई एकान्त ब्रह्मस्वरूपिणी विन्दुगी सृष्टि के आदि अव्यक्त विन्दु में स्थित यद्वा श्रीयन्त्र में सर्वानन्दमयी मूल विन्दु में जिसकी पूजन स्थिति है। महारम्भां महान् ब्रह्माण्ड की रचना करनेवाली शक्ति माता त्रिपुरा की वन्दना करते हैं।

ललितानामसहस्रे छलार्णसूत्रानुयायिन्यः ।
परिभाषा भाष्यन्ते संक्षेपात्कौलिकप्रमोदाय ॥ २ ॥
पञ्चाशदेक आदौ नामसु सार्धद्व्यशीतिशतम् ।
षडशीतिः सार्धान्ते सर्वं विंशति शतत्रयं श्लोकाः ।३
दशभूः सार्धनृपाला अध्युष्टं सार्धनवषडध्युष्टम् ।
मुनिसूतहयाम्बाश्वाम्बाश्वोक्तिर्ध्यानमेकेन ॥ ४ ॥

अगस्त्यउवाच

अश्वानन महाबुद्धे सर्वशास्त्रविशारद ।
कथितं ललितादेव्याश्चरितं परमाद्भुतम् ॥१॥

देवीभागवत में अश्वानन का इतिहास इस प्रकार मिलता है कि भगवान् विष्णु यज्ञ संरक्षण के निमित्त बहुत काल तक जागृत रहने से मनुष्य शरीर को धारण किये शरीर के धर्म से श्रान्त हुए योग निद्रा में प्रसुप्त हो गये। इस अन्तराल में देव कार्य विशेष के कारण विष्णुभगवान् के समीप आये भगवान् शार्ङ्ग-धनुष की डोरी खींचे हुए सुप्त थे। विष्णु भगवान् को जागृति

कराने के निमित्त देवताओं ने वह्नि नाम के कीट को यज्ञभाग देकर विष्णु के जागृति के अर्थ नियुक्त किया उसने धनुष की रस्सी काटकर ज्योंही विष्णु के जगाने का यत्न किया धनुष प्रत्यञ्चा से छूटकर विष्णु के ग्रीवा पर लगने से शिर कट गया। जब ब्रह्मादि देवताओं ने भगवती ललिता की स्तुति की, भगवान् की आज्ञासे देवताओं ने घोड़ेका शिर लगाकर विष्णु को जीवित किया तब हय होकर विष्णु ने हयग्रीव दैत्य को मारा। वहाँ से यह कथा चली है। अगस्त्य ऋषि ललिता उपासक थे उन्होंने भगवान् हयग्रीव से कहा कि आपके मुख से भगवती का अद्भुत चरित्र सुना है।

पूर्वं प्रादुर्भवो मातुस्ततः पट्टाभिषेचनम्।
भण्डासुरवधश्चैव विस्तरेण त्वयोदितः ॥ २ ॥

प्रथम चित् सच्चिदानन्दरूपी ज्ञानकुण्ड अर्थात् अव्यक्त विष्णु से श्रीमाता का प्रादुर्भाव "देवानां कार्य सिद्ध्यर्थं" जब उस चित् शक्तिरूप का विमर्श प्रकट होता है उस दशा को माताकी उत्पत्ति शास्त्रों ने कही। उसके बाद पट्टाभिषेचन इसके अनन्तर भण्डासुर वध का वर्णन यह विस्तार से आपने कहा है।

वर्णितं श्रीपुरं चापि महाविभवविस्तरम्।
श्रीमत्पञ्चदशाक्षर्या महिमा वर्णितस्तथा ॥ ३ ॥

श्रीपुर का विभवशाली वर्णन यद्वा श्रीपुर श्रीयन्त्र का विधान तथा पञ्चदशाक्षरी मन्त्र का माहात्म्य आपने वर्णन किया है।

षोढान्यासादयो न्यासा न्यासखण्डे समीरिताः ।
अन्तर्यागक्रमश्चैव वहिर्यागक्रमस्तथा ॥ ४ ॥

न्यास खण्ड में षोढा न्यासादि जिन न्यासों के करने से साधक में देव शक्ति का विकाश होता है जिसके सम्वन्ध में कहा गया है—"देवी भूत्वा देवीं यजेत्" अन्तर्याग कुण्डलिनी का मार्ग वहिर्याग (पूजा पाठ) का क्रम आपने वताया है ।

महायागक्रमश्चैव पूजाखण्डे प्रकीर्तितः ।
पुरश्चरणखण्डे तु जपलक्षणमीरितम् ॥ ५ ॥

पूजा खण्ड में शक्ति के महायाग पुरश्चरण खण्ड में पुरश्चरण की विधि तथा जप की विधि का भी वर्णन किया है ।

होमखण्डे त्वया प्रोक्तो होमद्रव्यविधिक्रमः ।
चक्रराजस्य विद्यायाः श्रीदेव्या देशिकात्मनोः ॥६॥

होमखण्ड में हवन की विधि वताई है । हवन द्रव्य का विस्तार वताया तथा श्रीचक्र श्रीयन्त्र की पूजा विधि बताई है ।

रहस्यखण्डे तादात्म्यं परस्परमुदीरितम् ।
स्तोत्रखण्डे बहुविधा स्तुतयः परिकीर्तिताः ॥७॥

रहस्य खण्ड में भगवती के साथ तादात्म्य होने की भक्ति बताई है । स्तोत्र खण्ड में वहुत प्रकार के स्तोत्र एवं स्तुति सन्दर्भ आपने वर्णन किये हैं ।

मन्त्रिणी दण्डिनी देव्योः प्रोक्ते नामसहस्रके ।

सहस्र नाम में मन्त्रिणी दण्डिनी आदि शक्तियों के पृथक्-पृथक् नाम बताये हैं।

न तु श्रीललिता देव्या प्रोक्तं नामसहस्रकम् ।
तत्र मे संशयो जातो हयग्रीव दयानिधे ॥८॥

हे भगवान् हयग्रीव ! दया के सागर !! आपने ललिता देवी का सहस्र नाम मुझे नहीं बताया है, इससे मेरे मन में शंका हो रही है कि क्या मैं उसका अधिकारी नहीं था ?

किंवा त्वया विस्मृतं तज्ज्ञात्वा वा समुपेक्षितम् ।
मम वा योग्यता नास्ति श्रोतुं नामसहस्रकम् ॥९॥

क्या आप बताना भूल गये हो या इस बात को जानकर भी आपने मेरी उपेक्षा की है या मुझे ललिता सहस्र नाम सुनने के योग्य नहीं पाया है।

किमर्थं भवता नोक्तं तत्र मे कारणं वद ॥१०॥

भगवन् ! आपने ललिता सहस्र नाम क्यों नहीं प्रकट किया है, इसका कारण मुझे समझाइये।

सूतउवाच

इति पृष्टो हयग्रीवो मुनिना कुम्भजन्मना ।
प्रहृष्टो वचनं प्राह तापसं कुम्भसम्भवम् ॥११॥

सूत जी बोले कि—इस प्रकार प्रश्न-प्रति-प्रश्न करनेपर अगस्त्य मुनि ने भगवान् हयग्रीव को प्रसन्न किया। प्रसन्न होकर तपस्वी अगस्त्य को हयग्रीव भगवान् बोले—

लोपामुद्रापतेऽगस्त्य सावधानमनाः शृणु ।
नाम्ना सहस्रं यन्नोक्तं कारणं तद्वदामि ते ॥१२॥

हे लोपामुद्रा के पति अगस्त्य ? तुम अब सावधान होकर सुनो। मैंने ललिता सहस्र नाम अबतक क्यों प्रकट नहीं किया है।

रहस्यमिति मत्वाहं नोक्तवांस्ते न चान्यथा ।
पुनश्च पृच्छसे भक्त्या तस्मात्तत्ते वदाम्यहम् ॥१३॥

ललिता सहस्र नाम को रहस्य मानकर तुम्हें नहीं कहा है अब तुम दुवारा उसके सम्बन्ध में भक्तिपूर्वक जिज्ञासा कर रहे हो अतः मैं तुम्हें कहता हूं।

ब्रूयाच्छिष्याय भक्ताय रहस्यमपि देशिकः ।
भवता न प्रदेयं स्यादभक्ताय कदाचन ॥१४॥

यतः गुरु का धर्म है कि भक्ति सम्पन्न शिष्य को रहस्य भी बता देवे, तुम्हें चाहिये कि इस सहस्र नाम रूपी रहस्य को किसी भी अभक्त को न बताओ।

न शठाय न दुष्टाय नाविश्वासाय कर्हिचित् ।
श्रीमातृभक्तियुक्ताय श्रीविद्याराजवेदिने ॥१५॥

किसी दुष्ट, शठ, अविश्वासी को किसी दशा में भी न बताः भक्तिमान् श्रीविद्या के उपासक को ही यह सहस्र नाम बतान चाहिये।

उपासकाय शुद्धाय देयं नाम सहस्रकम् ।
यानि नाम सहस्राणि सद्यः सिद्धिप्रदानि वै ॥१६॥

शुद्ध चित्त से उपासना करनेवाले के प्रति ही बताना ये ललिता के एक-एक नाम एक-एक सिद्धि के देनेवाले हैं।

तन्त्रेषु ललितादेव्यास्तेषु मुख्यमिदं मुने ।
श्रीविद्यैव तु मन्त्राणां तत्र कादिर्यथा परा ॥१७॥

सम्पूर्ण तन्त्रों में ललिता देवी ही मुख्य देवी है और सम्पूर्ण विद्याओं में श्री विद्या मुख्य है उसमें भी कादि विद्या श्रेष्ठ है।

पुराणां श्रीपुरमिव शक्तीनां ललिता यथा ।
श्रीविद्योपासकानां च यथा देवो वरः शिवः ॥१८॥

नगरों में श्रीपुर शक्तियों में श्री ललिता इसी प्रकार श्री-विद्या के उपासकों को परम देव शिव बताया है।

तथा नाम सहस्रेषु वरमेतत्प्रकीर्तितम् ।
यथास्य पठनाद्देवी प्रीयते ललिताम्बिका ॥१९॥

इसी प्रकार सम्पूर्ण सहस्र नामों में ललिता सहस्र नाम श्रेष्ठ है। इसके पाठ से भगवती ललिता प्रसन्न होती है।

अन्यनामसहस्रस्य पाठान्न प्रीयते तथा ।
श्रीमातुः प्रीतये तस्मादनिशं कीर्तयेदिदम् ॥२०॥

अन्य सहस्र नाम से भगवती ललिता इतनी प्रसन्न नहीं होती जितनी ललिता सहस्र नाम से।

बिल्वपत्रैश्चक्रराजे योऽर्चयेल्ललिताम्बिकाम् ।
पद्मैर्वा तुलसीपत्रैरेभिर्नामसहस्रकैः ॥२१॥

जो साधक श्री यन्त्र से ललिता की पूजा, बिल्वपत्र, कमल-पत्र, तुलसी पत्र से सहस्र नाम पढ़ता हुआ करता है—

सद्यः प्रसादं कुरुते तत्र सिंहासनेश्वरी ।
चक्राधिराजमभ्यर्च्य जप्त्वा पञ्चदशाक्षरीम् ॥२२॥

सिंहासनेश्वरी माता ललिता तत्काल उसे प्रसाद देती हैं। श्री यन्त्र की पूजा कर द्वादशाक्षर मन्त्र से जो जप कर सहस्र नाम पढ़ता है।

जपान्ते कीर्तयेन्नित्यमिदं नामसहस्रकम् ।
जपपूजाद्यशक्तोऽपि पठन्नामसहस्रकम् ॥२३॥

जप के अवसान में ललिता सहस्र नाम का पाठ नित्य करे। जप तथा पूजा करने में अशक्त हो तो केवल सहस्र नाम का पाठ करे।

साङ्गार्चने साङ्गजपे यत्फलं तदवाप्नुयात् ।
उपासने स्तुतीरन्याः पठेदभ्युदयो हि सः ॥२४॥

सांग पूजन सांग जप से जो फल होता है वही फल जपान्त में केवल सहस्र नाम पाठ से मिल जाता है।

इदं नामसहस्रं तु कीर्तयेन्नित्यकर्मवत् ।
चक्रराजार्चनं देव्या जपो नाम्नां च कीर्तनम् ॥२५॥

इस सहस्र नाम को नित्यकर्म की भांति करे श्री यन्त्र का पूजन एवं सहस्र नाम का पाठ करे।

भक्तस्य कृत्यमेतावदन्यदभ्युदयं विदुः ।
भक्तस्यावश्यकमिदं नामसाहस्रकीर्तनम् ॥२६॥

भक्त को अभ्युदय प्राप्ति का यह साधन समझो। भक्त-उपासक को यह सहस्र नाम अवश्य पाठ करना चाहिये।

तत्र हेतुं प्रवक्ष्यामि शृणुत्वं कुम्भसंभव ।
पुरा श्रीललितादेवी भक्तानां हितकाम्यया ॥२७॥
वाग्देवीर्वशिनीमुख्याः समाहूयेदमब्रवीत् ।
वाग्देवता वशिन्याद्याः शृणुध्वं वचनं मम ॥२८॥

हे अगस्त्य, इसका कारण तुम सुनो। पूर्वकाल में भगवती ललिता ने भक्तों के हित के वास्ते वाग्देवी वशिनी आदि देवियों को बुलाकर यह आदेश दिया कि—देवियों? मेरे वचन सुनो।

भवत्यो मत्प्रसादेन प्रोल्लसद्वाग्विभूतयः ।
मद्भक्तानां वाग्विभूतिप्रदाने विनियोजिताः ॥२९॥

हे देवियों, तुम मेरे आशीर्वाद से वाणी के विलास में विकशित होकर मेरे भक्तों को इस ओर लगा दो।

मच्चक्रस्य रहस्यज्ञा मम नामपरायणाः ।
मम स्तोत्रविधानाय तस्मादाज्ञापयामि वः ॥३०॥

मेरे भक्त को मेरे यन्त्र का पूजा, मेरे सहस्र नाम का पाठ करने को कह दो। यह मैं तुम्हें आज्ञा देती हूं।

कुरुध्वमङ्कितं स्तोत्रं मम नामसहस्रकैः ।
येन भक्तैः स्तुताया मे सद्यः प्रीतिः परा भवेत् ॥३१॥

मेरे सहस्र नामों से भरे हुए इस सहस्रनाम स्तोत्र को मेरी प्रसन्नता के हेतु मेरे भक्त करें।

हयग्रीवउवाच

इत्याज्ञप्ता वचोदेव्यः श्रीदेव्या ललिताम्बया ।
रहस्यैर्नामभिर्दिव्यैश्चक्रुः स्तोत्रमनुत्तमम् ॥३२॥

हयग्रीव रूपी भगवान् बोले—

इस प्रकार भगवती की आज्ञा मिलने पर उन वशिन्यादि देवियों ने ललिता सहस्र नाम स्तोत्र का पाठ किया—

रहस्यनामसाहस्रमिति तद्धि श्रुतं परम् ।
ततः कदाचित्सदसि स्थिता सिंहासनेऽम्बिका ॥३३॥

एवं परम रहस्य ललिता के सहस्र नाम को सुना। तब एक समय सिंहासन में विराजमान होकर—

स्वसेवावसरं प्रादात् सर्वेषां कुम्भसंभव ।
सेवार्थमागतास्तत्र ब्रह्माणी ब्रह्मकोटयः ॥३४॥

भगवती ललिता ने उन सब देवियों को सेवा का सुअवसर दिया।

हे अगस्त्य मुने ! उस समय भगवती के सेवा के निमित्त कोटि-कोटि संख्या में ब्रह्माणी ब्रह्मा की शक्तियां उपस्थित थीं।

लक्ष्मीनारायणानां च कोटयः समुपागता।
गौरीकोटिसमेतानां रुद्राणामपि कोटयः ॥३५॥

एवं लक्ष्मीनारायण भी कोटि-कोटि संख्या में वहां पर थे तथा गौरी एवं रुद्र भी कोटि संख्या में थे।

मन्त्रिणीदण्डिनीमुख्या सेवार्थं याः समागताः।
शक्तयो विविधाकारास्तासां संख्या न विद्यते ॥३६॥

उस समय मन्त्रिणी दण्डनी आदि अनेक शक्तियां उस स्थान में उपस्थित थी जिनकी संख्या नहीं कही जा सकती। अर्थात् असंख्य शक्ति समूह उपस्थित था।

दिव्यौघा मानवौघाश्च सिद्धौघाश्च समागताः।
तत्र श्रीललितादेवी सर्वेषां दर्शनं ददौ ॥३७॥

वहां पर दिव्यौघ, सिद्धौघ, मानवौघ आदि सब आये हुए थे। उन सबके समक्ष भगवती ललिता साक्षात्कार हुई।

तेषु दृष्ट्वोपविष्टेषु स्वे स्वे स्थानं यथाक्रमम्।
तत्र श्रीललितादेवीकटाक्षाक्षेपनोदिताः ॥३८॥

जितने वहां पर बैठे हुए थे, भगवती ने उन सब के ऊपर दृष्टि डाली।

उत्थाय वशिनीमुख्या बद्धाञ्जलिपुटास्तदा।
अस्तुवन्नामसाहस्रैः स्वकृतैर्ललिताम्बिकाम् ॥३९॥

तब वशिन्यादि देवियों ने अञ्जली बांधकर सहस्र नाम पाठ से भगवती की स्तुति की।

श्रुत्वा स्तवं प्रसन्नाभूल्ललिता परमेश्वरी।
सर्वे ते विस्मयं जग्मुर्ये तत्र सदसि स्थिताः ॥४०॥

ललिता सहस्र नाम सुनकर भगवती प्रसन्न हुई तथा जो देवी-दिव्यौघादि वहां बैठे थे, भगवती के अपूर्व दर्शन से सब चकित हुए।

ततः प्रोवाच ललिता सदस्यान्देवतागणान्।
ममाज्ञयैव वाग्देव्यश्चक्रुः स्तोत्रमनुत्तमम् ॥४१॥

तब भगवती ललिता ने कहा—मेरी ही आज्ञा से वाग्देवियों ने यह सहस्र नाम स्तोत्र का पाठ किया है।

अङ्कितं नामभिर्दिव्यैर्मम प्रीतिविधायकैः।
तत्पठध्वं सदा यूयं स्तोत्रं मत्प्रीतिवृद्धये ॥४२॥

यह सहस्र नाम मेरे दिव्य नामों से अंकित है। अतः तुम सब मेरी प्रसन्नता के निमित्त इसका पाठ करो।

प्रवर्तयध्वं भक्तेषु मम नामसहस्रकम्।
इदं नामसहस्रं मे यो भक्तः पठते सकृत् ॥४३॥
मम प्रियतमो ज्ञेयस्तस्मै कामान्ददाम्यहम्।
श्रीचक्रे मां समभ्यर्च्य जप्त्वा पञ्चदशाक्षरीम् ॥४४॥

मेरे भक्तों में इसका प्रचार करो। जो भक्तिपूर्वक भक्त एक

वार भी पढ़े तो वह मेरा अत्यन्त प्रिय है। जो श्रीचक्र में मेरा पूजन करके पञ्चदशी का जप करे वह मुझे बहुत ही प्रिय है।

पश्चान्नामसहस्रं मे कीर्तयेन् मम तुष्टये।
मामर्चयतु वा मा वा विद्यां जपतु वा न वा ॥४५॥

जो मेरी प्रसन्नता के निमित्त इस सहस्र नाम मात्र का ही पाठ करता है वह पूजन करे या न करे मैं उसपर प्रसन्न हो जाती हूं।

कीर्तयेन्नामसाहस्रमिदं मत्प्रीतये सदा।
मत्प्रीत्या सकलान् कामाँल्लभते नात्रसंशयः ॥४६॥

जो मेरी प्रसन्नता के हेतु इस सहस्र नाम का पाठ करता है मैं उसकी सब कामनाओं को सफल कर देती हूं।

तस्मान्नामसहस्रं मे कीर्तयध्वं सदादरात् ॥४७॥

अतः इस ललिता सहस्र नाम का तुम सब सदा आदर से पाठ करो।

हयग्रीवउवाच

इति श्रीललितेशानी शास्ति देवान् सहानुगान्।
तदाज्ञया तदारभ्य ब्रह्मविष्णु महेश्वराः ॥४८॥

हयग्रीव भगवान् बोले—

इस प्रकार भगवती ललिता देवी के अनुशासन से ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर ललिता सहस्र नाम का पाठ करने लगे।

शक्तयो मन्त्रिणीमुख्या इदं नामसहस्रकम् ।
पठन्ति भक्त्या सततं ललितापरितुष्टये ॥४६॥

ललिता भगवती के सन्तुष्ट करने को मन्त्रिणी आदि शक्तियां इसका पाठ करने लगी ।

तस्मादवश्यं भक्तेन कीर्तनीयमिदं मुने ।
आवश्यकत्वे हेतुत्वे मया प्रोक्तो मुनीश्वर ॥५०॥

इस प्रकार मेरे भक्तों को चाहिये कि आवश्यक कार्य पर इस ललिता सहस्र नाम का पाठ कर मुझे प्रसन्न करे ।

इदानीं नाम साहस्रं वक्ष्यामि श्रद्धया शृणु ॥५१॥

अब इस ललिता सहस्र नाम को मैं तुम्हारे लिये कहती हूं ।

अथ ध्यानश्लोकः

—:०:—

सिन्दूरारुणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुरत्तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीनवक्षोरुहाम् । पाणिभ्यामलिपूर्णरत्नचषकं रक्तोत्पलं बिभ्रतीं सौम्यां रत्नघटस्थरक्तचरणां ध्यायेत्परामम्बिकाम् ॥५१॥

श्रीमाता श्रीमहाराज्ञी श्रीमत्सिंहासनेश्वरी ।
चिदग्निकुण्डसम्भूता देवकार्यसमुद्यता ॥ ५२ ॥

श्रीमाता—संसार में जब कोई कष्ट होता है तो उस अवस्था में "मा !" यह शब्द निकलते हैं माता को छोड़ कठिन कष्ट से छुटकारा नहीं होता। श्री क्या है ?

"या श्रीः स्वयं सुकृतिनां" ये अच्छे कर्म करनेवालों के घरों में यह मा श्री के रूप में विश्व को पालन करनेवाली जो माता है वह सुकृतशाली मानवों के घर में श्रीरूप में विलास करती हैं। "श्रीरमृता सताम्" "पद्माश्रियं लक्ष्मीमार्तिपरिच्छिनत्ति" अर्थात् परम शिव की परा भट्टारिका शिव की आत्मशक्ति ही अभिप्रेत है। यह श्री शब्द आत्मा का विमर्श—स्पन्दन रूप का बोधक है, सम्पूर्ण नामावली में किसी नाम की उच्चकाष्ठा का वर्णन जहां पर किया जाता है वहां पर श्री शब्द का प्रयोग होता है यथा, श्रीचक्र, श्रीविद्या, श्रीशैल, श्रीफल। जहां से सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति होती है वह श्री है मंत्रमय विग्रह में "कूटत्रय कलेवरा" ऐसा आता है। अतः श्रीमाता का अभिप्राय हुआ जगन्माता। वह जगन्माता जिससे सम्पूर्ण सृष्टि की अभिव्यक्ति होती है। "यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते" वेद कहते हैं।

श्री महाराज्ञीः—सारे प्रपञ्चजाल को पालन करनेवाली जैसे श्रुति में आता है "येन जातानि जीवन्ति" श्रीविद्या में निगूढ़ाक्षर त्रय हैं उनका ही उद्धरण इनमें होता है। इनमें सोलहवीं कला

है "सच्छिष्यायोपदेष्ट्या सच्छिक्षाय सफलाकला" जैसे सौन्दर्य-लहरी में आया है "शिवः शक्तिकामः।" इसके लिये सङ्केत-पद्धति में आया है—

अकारः सर्ववर्णाग्र्यः प्रकाशः परमः शिवः।
हकारोऽन्त्यः कलारूपो विसर्गाख्यः प्रकीर्तितः॥

अकारः—जितने में वर्ण (रंग, अक्षर) हैं उनमें सर्व प्रथम अकार है हकार अन्त्य कलारूप है अन्तिम अक्षर है।

मध्यविन्दुविसर्गान्तः समास्थानमये परे।

इससे स्पष्ट है कि सारे अनन्त ब्रह्माण्डों का पालन करनेवाली श्रीमहाराज्ञी है।

श्रीमत्सिंहासनेश्वरी—सिंहः=श्रेष्ठः (सिंहोवर्ण विपर्ययात्) सारे संसार को लय करनेवाली "यत्प्रपन्त्यभिसंविशन्ति"। जहां देवी का आततायी वधार्ह को संहार का अवसर आया है वहां सिंहस्कन्धाधिरूढ़" आदि पदों से इसे विभूषित किया है।

"पञ्चसिंहासन गता कथं सा त्रिपुरा परा।"

श्रीपार्वती ने भैरव से पूछा था उसका यह उत्तर दिया कि पहले सृष्टि के वनाने में ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई वह निश्चेतन रहा उन्होंने त्रिपुरसुन्दरी की आराधना की इससे प्रसन्न होकर त्रिपुर सुन्दरी ने उन्हें सृष्टि के कर्त्ता की शक्ति प्रदान की। इन तीन नामों से सृष्टि स्थिति और लय ये जो ब्रह्मा के लक्षण हैं ये आते हैं—

माता=सर्जनकारिणी, स्थिति और लय कारिणी।

अब इस सारे प्रपञ्च का तिरोधान और आविर्भाव कैसे होता है यह बताया जाता है।

चिदग्निकुण्डसम्भूता—चित् केवल ब्रह्म वही है।

अग्निकुण्ड—अर्थात् अविद्या लक्षण रूप जो तम है उसे नाश करनेवाली।

अन्तरनिरन्तरनिरन्धनमेधमाने।
मोहान्धकारपरिपन्थिनिसम्विदग्नौ (ज्ञानाग्नौ)
चिद्वन्हि अवरोधपदे छिन्नाऽपि चिन्मात्रयोः।

चितिरेव विश्वः=ग्रसनशीलत्वात्—सारा विश्व इसी में लय होता है। चैतन्यधर्मवाली अग्नि यह है उससे यह साक्षात् उत्पन्न होती है।

चिच्छक्तिः परमेश्वरस्य विमला चैतन्यमेवोच्यते।

देखिए—

ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन।

उस चिदग्नि कुण्ड से आप स्वयं उत्पन्न हैं।

श्रीरेणुका पुराण में भी आता है—इक्ष्वाकु वंश में रेणुक नाम राजा हुआ उसने भगवती की आराधना की और एक सुन्दर कुण्ड में भगवती को होम किया वहां उसका प्रकरण आता है।

यह अध्यात्म दृष्टि—

ऐतिहासिक दृष्टि—कुण्डं योजनविस्तार।

इतने योजन विस्तृत कुण्ड में यज्ञ किया और उसमें उद्यार्क
समप्रभा भगवती चित्कुण्डसमुद्भवा महादेवी उत्पन्न हुई।

रेणुक ने कुण्ड बनाया उसमें—

प्रादुर्बभूव परमं तेजः पुञ्जं महत्।

कोटिसूर्यप्रतीकाशं चन्द्रकोटिसुशीतलाम्।
तन्मध्यतः समुद्भूच्चक्राकारमनौपमम्॥
तन्मध्यतः समुद्भूच्चक्राकारमनोहरम्।
तन्मध्यतो महादेवीमुद्यार्कसमप्रभाम्॥

से लेकर—

तां विलोक्य महादेवीं देवाः सर्वे सवासवाः।
प्रणेमुर्मुदितात्मानो भूयो भूयोऽखिलात्मिकाम्॥

देवकार्य समुद्यता—

देवानां कार्यसिद्ध्यर्थमाविर्भवति सा यदा।
उत्पन्नेति तदा लोके सा नित्याप्यभिधीयते॥

(मार्कण्डेयपुराण)

देवताओं के कार्यों की सिद्धि के लिये जब चिदग्निकुण्ड से
आविर्भूत होनेवाली, हिमालय के यहां—

अहं वै याचिता च देवैः सस्मृता कार्यगौरवात्।
विनिन्द्य दक्षं पितरं ममेश्वरविनिन्दकम्॥
धर्मं संस्थापनार्थाय तवाराधनकारणा।
मेनादेहात्समुत्पन्ना त्वामेवपितरंश्रिता॥

देवताओं के कार्य के लिये उद्यत—

जैसे – गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥

चिदग्नि कुण्ड से स्वयं भगवान आविर्भूत होते हैं—

उद्यद्भानुसहस्राभाचतुर्बाहुसमन्विता।
रागस्वरूपपाशाढ्या क्रोधाकाराङ्कुशोज्ज्वला॥५३॥

उद्यद्भानुसहस्राभा=लालिमायुक्त कान्तिसम्पन्न उदय होने-वाले हजारों सूर्य की कान्ति के समान कान्ति वाली लालिमा। भानुना सहस्रं भानुसहस्रं उद्यच्चासौ भानुसहस्रं तस्या-भैवाभेति।

स्वात्मैवदेवता प्रोक्ता ललिता विश्वविग्रहा।
लौहित्यंतद्विमर्शः स्यादुपास्तिरिति भावना॥
स्वयंहि ललिता देवी लौहित्यंतद्विमर्शनम्॥

ईदृश प्रकाशविमर्श—

इसी तरह भगवती जगदम्बा के तीन रूप—प्रकाश, विमर्श, आमर्ष है। जिन्हें दूसरे शब्दों में स्थूल, सूक्ष्म और पर कहते हैं।

स्थूल=हस्तपादादियुक्त मूर्त्ति।

सूक्ष्म=मन्त्रमय शरीर को सूक्ष्म रूप वताया है।

पर=वासनामय रूप है।

अवजानन्तिमां मूढा मानुषीं तनुमाश्रिताः।
सामान्य परमंचेति द्वे रूपे विद्धि मेऽनघ॥

पाण्यादियुक्तं सामान्यं यत्तुमूढा उपासते ।
परं रूपमनाद्यन्तं यन्ममैकमनामयम् ।।
ब्रह्मात्मपरमात्मादि शब्दैनैतदुदीर्यते ।

गङ्गादि का स्थूलरूप चतुर्थ ।

"तरुणेन्दुभालनयनां अरुणां करुणारसेन परिपूर्णाम् । वन्
समन्दहसितां ईषद्धास्यां वराभयं दधतीम् ।"

चतुर्बाहुसमन्विता—ध्यान के मन्त्र में अवयवों के वर्ण
का यह उपलक्षण है । बाहु के प्रसङ्ग से उनके आयुधों क
वर्णन हैं ।

. रागस्वरूपपाशाढ्या—राग=अनुराग चित्त की एक वृत्ति है
राग ही जिसका वासनामय रूप है । स्थूलदेह में हाथ में रस्
(पाश) वह राग का द्योतक है । सम्पूर्ण संसार में यह राग ह
बन्धन है । अतः यह नीचे बायें हाथ के आयुधरूप में है । रा
आसक्ति क्रोध आसक्ति को दूर करनेवाला द्वेषरूप शरीर क
वृत्ति चित्त की है वह है अङ्कुश क्रोधरूपी अङ्कुश जगन्मात
भगवती के है ।

चतुश्शती तन्त्र में आया है—

पाशाङ्कुशौ तदीयौ तौ रागद्वेषात्मकौस्मृतौ ।

तन्त्रराज में भी—

मनो भवेदिक्षुदण्डः धनुः पाशोराग उदीरितः ।
द्वेषः स्यादङ्कुशः पञ्चतन्मात्रा पुष्पसायकः ।।

और भी—

इच्छा ज्ञान क्रिया।

इच्छाशक्तिमयं पाशमङ्कुशज्ञानरूपिणम्।
क्रियाशक्तिमयं बाणं धनुर्धीदधदुज्ज्वलम्॥

पाश इच्छा शक्तिमय है अङ्कुशज्ञानरूप है। क्रिया शक्तिमय वाण है और धनुष उज्वल है।

मनोरूपेक्षुकोदण्डा पञ्चतन्मात्रसायका।
निजारुणप्रभापूरमज्जद्ब्रह्माण्डमण्डला॥५४॥

मनोरूप—संकल्प-विकल्पात्मक क्रियारूपी जो मन है वही इक्षु दण्ड है। कहा भी है पञ्चतन्मात्रा शब्दादि, (रूप रस, गन्धादि) यही उसके विषय है। यही पञ्चतन्मात्रा पञ्चभूतों के रूप हैं।

कहा भी है—"भूतमात्रस्वरूपोऽयं विशेषाणां निरूपकः।
शव्दस्तु शव्द तन्मात्रं मृदूष्णकविनिश्चयः॥
विशिष्ट स्पष्टरूपश्च सर्वदा तन्मात्र संज्ञकः।
नीलपीतत्वशुक्लत्वविस्पष्टरूपमेव च॥
रूपंतन्मात्र इत्युक्तं मधुरत्वाम्लतायुतं।
रस तन्मात्र संयन्तु सौरभ्यादिविशेषतः॥
गन्धंस्यात् गन्धतन्मात्रं तेभ्यो वै भूतपञ्चकम्।

यही पञ्चतन्मात्रा जिसके ऊपर के दाहिने हाथ में (बाजूके) बाण है। तन्त्र में कहा भी है कि भगवती के पञ्चतन्मात्र बाण और मन जो है वह धनुष है।

वाण तीन प्रकारके हैं। स्थूल, सूक्ष्म और पर। स्थूल पुष्प
सूक्ष्म मन्त्ररूपी वाण और पर वासनारूपी वाण हैं।

स्थूल पुष्परूप—कमल, कैरव, रक्त, कल्हार और इन्दीव
ये पाँच है। सहकार (आम्रमञ्जरी)

सूक्ष्म वाण—हर्षण, रोचन, मोहन, शोषण तथा मारण
पाँच हैं तथा मुनियों को भी मोहजाल में फँसानेवाले हैं
तन्त्रान्तर में इन वाणों को इस नाम से भी वोध किया है जैसे-

क्षोभण, द्रावण, प्राकर्षण, वशीकरण तथा उन्मादन।

मन्त्ररूप—

अव र+आग स्वरूप—रश्च, अगश्च, स्वश्च तेषां समाहा
रगस्वं अगशब्देन स्थाणोर्हकारः (हः शिवः गगनं स्थाणुरि
कोशः) सविन्दुक ईकारस्तेन रेफ हकारेकार विन्दु समाहा
विन्दुरूपं सूक्ष्मरूपं यस्य सः पाशाः हकारोत्तरमिहरेफोऽहावग
न्तव्यः क्रोच धश्च आच=क्रोधाः। तदुपरि श्रूयमाणाकारः प्रत्य
द्वन्द्वान्तत्वात् प्रत्येकं सम्वध्यते। क्रो कारधराकारा इत्यर्थ
अङ्कुशेन समुज्ज्वला इति सम्वन्धः अङ्कुशेन=अनुस्वारेण। कौ
इति कुशः। अकाराभिन्नः कुश इति अङ्कुशः। मनोरूपः कोदण्डः
क्रोधाकारा इत्यादि नामसु दकार रेफ ककार लकार यकार शका
वकारः अंकुशे अनुस्वारेण शोभमानाः। कौ शेते इति कुश
अकाराभिन्नः कुशरूपी अङ्कुशः। मन इति थकारस्यसंज्ञा थक
राधिकारे दक्षनासाधिपोमनः। कोदण्डोऽनुस्वारः। "अकारश्च
ञ्चुकोदण्डः। मनोरूपः कोदण्डस्थकाराभिन्नो कोदण्डः क्रोधा

कारीत्यादिनामसु । दकाररेफककार लकार यकार शकार वकाराः। अ आ इ उ स्वरा सबिन्दुका विवक्षिताः क्रोधाकारा-ङ्कुशोज्ज्वलाः इत्यत्र। अं आ इतरदविवक्षितम् तेषां यथा सम्प्रदाययोगवाणबीजानि सिद्ध्यन्ति" यं शं वं इत्यादि हैं।

निजारुणप्रभापूरमज्जद्ब्रह्माण्डमण्डलाः।

अपनी जो लालिमा है उसीकी चमक (प्रभा) से परिपूर्ण (उससे सारा ब्रह्माण्ड डूबा हुआ है)। प्रातःकालीन सौभाग्य लक्ष्मी भगवती का ध्यान है वह इसमें अभिप्रेत है। जिसकी लालिमा में सम्पूर्ण ब्रह्माण्डमण्डल निमज्जित है।

अपनी अरुणिमा के तेज से सारा ब्रह्माण्डमण्डल व्याप्त है।

अग्निकुण्ड से भगवती का जो स्थूल रूप प्रादुर्भाव हुआ उसका इन नामों में शिर आदि पादान्त वर्णन आता है।

चम्पकाशोकपुन्नागसौगन्धिकलसत्कचा ।
कुरुविन्दमणिश्रेणीकनत्कोटीरमण्डिता ॥५५॥

यद्यपि चम्पक अशोकादि ये वृक्षों के नाम हैं परन्तु यहां लक्षणा से ये सब वनके पुष्पों को बोधन करते हैं—चम्पक आदि पुष्पों से जिसके कच शोभायमान है जैसे सौन्दर्यलहरी में।

वसन्त्यस्मिन्मन्ये वलमथनवाटी विटपिनाम्।

अर्थात् इन्द्र की पुष्पवाटिका के पुष्प भगवती के केशकलाप में सुगन्धि देने को आते हैं। "पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च" श्रीगीता।

जानासि पुष्पगन्धान् भ्रमरत्वंब्रूहि तत्त्वं मे ।
दे॒व्याः केशकलापे गन्धः केनोपमीयते ॥

कुरुविन्दमणिश्रेणी—कुरुविन्दमणयः पद्मरागाख्याः ।

कुरुविन्द पद्मराग को कहते हैं। वे लाल होते हैं जो का॰ और अनुराग को उत्पन्न करते हैं। गरुड़पुराण के रत्नाध्याय ॰ कुरुविन्द का वर्णन आया है :—

तस्यास्तटेपूज्ज्वलचारुरागा
भवन्तितोयेपु च पद्मरागा ।
सौगन्धिकोत्था कुरुविन्दजाश्च
महागुणास्फाटिकसम्प्रसूताः ॥

सुगन्धि के देनेवाले कुरुविन्द पाषाण में से निकलते हैं। ॰ चमकीले और दाड़िम के बीज के समान लालवर्णवाले होते हैं।

ये तु रावण गंगायां जायन्ते कुरुविन्दवः ।
पद्मरागघनाकारं विप्राणां सुस्फुटार्चिषः ॥

इसका अन्यत्र भी वर्णन आया है—वह जीवित मणि है—

कामानुरागः कुरुविन्दजेषु
शनैर्नताद्दक्स्फटिकोद्भवेषु ।
मांगलययुक्ता हरिभक्तिदाश्च
वृद्धिप्रदास्ते स्मरणाद्भवन्ति ॥

इस प्रकार की मणि जिनके मुकुट में लगी हुई है। कोटीरेण मुकुटेन मण्डिता जैसे सौन्दर्य लहरी में लिखा है—"किरीटं ते हैमं हिमगिरिसुते कीर्तयति यः।"

गतैर्माणिकत्वं गगनमणिभिः सान्द्रघटितम्—

अष्टमीचन्द्रविभ्राजदलिकस्थलशोभिता ।
मुखचन्द्रकलङ्काभमृगनाभिविशेषका ।।५६।।

चन्द्रस्य—

जिस तिथि में चन्द्रमा की आठवीं कला होती है वह अष्टमी है। कृष्णपक्षमें ह्रसिमान घटने की कलायें रहती और शुक्लपक्ष में वर्द्धमान बढ़ती है उसमें अष्टमकला जिस तिथि में चन्द्रकी हो वह अष्टमी है। चन्द्र के वृत्त का अर्धवृत्त ही आठ कला युक्त है उससे विराजमान अलिक ललाटस्थल में शोभित होता है। अर्ध चन्द्र के वृत्त से जिसका ललाट प्रदेश शोभायमान हो रहा है।

मुखचन्द्रकलङ्काभ मृगनाभिविशेषकाः—

सम्पूणमुखरूपी चन्द्रमा में पूर्णता को मृगलाञ्छन के समान भगवती के कस्तूरी का तिलक शोभित है। जैसा कि लिखा है— कस्तूरी तिलकं ललाटे।

वदनस्मरमाङ्गल्यगृहतोरणचिल्लिका ।
वक्त्रलक्ष्मीपरीवाहचलन्मीनाभलोचना ।।५७।।

मुख कामदेव माङ्गल्य गृह है उसका भ्रूलता भ्रूपंक्ति तोरण है।

वक्त्रलक्ष्मीपरीवाहचलन्मीनाभलोचना ।

मुख लक्ष्मी का जो प्रवाह-प्रसरण है उसमें चञ्चल नेत्र रूपी मत्स्य रहते हैं ।

मुखारविन्द की कान्ति की जो लहरें चल रही हैं उसमें चञ्चलनेत्ररूपी मत्स्य जिस मुखरूपी कान्ति के प्रवाह में दिख-लाये गये हैं दृष्टिगोचर होते हैं। मत्स्य की दृष्टिमात्र से ही उसके बच्चों का पालन किया जाता है। अभिवृद्धि होती है। इसी प्रकार भगवती के कृपा के कटाक्ष से सन्तान की वृद्धि न कि स्तन-पान से। निक्षेप दृष्टि से ही भक्तों का कल्याण होता है।

नवचम्पकपुष्पाभनासादण्डविराजिता ।

ताराकान्तितिरस्कारिनासाभरणभासुरा ॥५८॥

नवीन नूतन चम्पकपुष्प जो थोड़ा-थोड़ा विकसित है उसके समान नासादण्ड से शोभायमान। नासा के अभूषण जो लगे हुए हैं वे मंगल बुधके तारागणों की कान्ति को भी फीका बनाने-वाले हैं उससे शोभित देदीप्यमान कान्तिवाली ।

कदम्बमञ्जरीक्लृप्तकर्णपूरमनोहरा ।

ताटङ्कयुगलीभूततपनोडुपमण्डला ॥५९॥

कदम्ब की मञ्जरी से रचित कर्णपूर उससे मनोहर जो ताटंक युगल है वे सूर्य चन्द्रमण्डलों के समान ।

सूर्यचन्द्रस्तनौ देव्यास्तावेवनयने स्मृतौ ।

उभौ ताटंकयुगलमित्येषा वैदिकी श्रुतिः ॥

पद्मरागशिलादर्शपरिभाविकपोलभूः ।
नवविद्रुमबिम्बश्रीन्यक्कारिरदनच्छदा ॥६०॥

पद्मरागमणि की जोशिला है उसके समान निर्मल है कपोल भगवती के दो कपोल पद्मराग शिला की सुन्दरता को भी नीचा दिखानेवाले हैं। नये जो प्रवाल की तुण्डी उनको ओठ की छटा ने तिरस्कार कर दिया है।

यह लक्षण—

शुद्धविद्याङ्कुराकारद्विजपंक्तिद्वयोज्ज्वला ।
कर्पूरवीटिकामोदसमाकर्षिदिगन्तरा ॥६१॥

दान्तों की पंक्ति। अविद्या मल की प्रतिस्पर्द्धिनी षोडशी शुद्धविद्या ।

शुद्ध विद्या के जो अङ्कुर होते हैं उसकी तरह से आकार है। यतः वह श्रीमाता के मूलाधारादि से परापश्यन्ती मध्यमा रूप इस क्रम से वैखर्यात्मिका मुखारविन्द से षोडशी विद्या निकल रही है। पीछे कर्णाकण के उपदेश से अक्षरमालिका इस दन्त-पंक्ति से निःसृत हो रही है। यहां इन दन्तपंक्तियों से जो वीज की पहली अवस्था है परा। उसके स्फुट होनेपर, विकाश होनेपर पश्यन्ती में (स्फोट हो) उससे मुकुलित दो दलों में मध्यमा के रूप में आई वे पूर्ण विकास से प्रसारित हों इसी तरह अङ्कुर पदसे यह प्रगट है कि दो दो दान्तों से अक्षरैकक उत्पन्न हुई।

द्विजपंक्ति शब्द से दीक्षा का प्रादुर्भाव भी यहां से होता है।

३२ दन्तसंख्यारूपी सम्पत्ति ही उसके दांत है। यहां द्विज शब्द श्लेषात्मक है।

"विद्याह वै ब्राह्मण मा जगाम"

फिर ब्राह्मणों—

इससे यह भी मिलता है कि ब्राह्मण ही विद्या के अङ्कुर है। ब्राह्मणों के मुख से विद्या निकलती है। एतावता वे शुद्धविद्या के दूसरी बात है ? शुद्धविद्या।

शुद्धविद्या च वाला च द्वादशार्धामतङ्गिनी— यहां से लेकर अनुत्तर पर्यन्त ये, ३२ प्रकार की दीक्षा तन्त्रों में आई है। एक तो दीक्षा जन्म दूसरे उपनयन।

मातु रुद्राज्जन्मैकम्। मेलनाभिप्रापकत्वेन द्वितीयम्, दीक्षा जन्म तृतीयम्। शुद्ध विद्या तीन अक्षरों की होती है यही सब मन्त्रों (विद्याओं) का अङ्कुर है।

शुद्धविद्याङ्कुराकारा—

कर्पूरवीटिकाकारा—एलालवङ्गकर्पूरकस्तूरीकेसरादिभिः। जातीफलदलैः पूगैर्लाङ्गल्यूषणनागरैः। भूर्जैः खादिरसारैश्च युक्ता कर्पूरवीटिका।

ये कर्पूरवीटिका जिस ताम्बूल में पड़ी है उससे चारों दिशाओं में परिमल खिल उठा है सभी दिशा में शोभित हो रही है। जिसकी वीटीका के आमोद से चारों दिशाओं में आकर्षण हो रहा है।

निजसंलापमाधुर्यविनिर्भर्त्सितकच्छपी ।
मन्दस्मितप्रभापूरमज्जत्कामेशमानसा ॥६२॥

स्वकीय जो ब्रह्म विषयक आलाप वर्णात्मक शब्द के माधुर्य की मञ्जुलता से सरस्वती की वीणावादन से निकले स्वरों को भी तिरस्कार कर दिया है ।

विश्वावसोश्चबृहती तुम्बरोश्च कलावती ।
नारदस्य च महती सरस्वत्यास्तु कच्छपी ॥

वर्णाभिव्यक्तेरभावेऽपि षड्जादिभिरभिव्यक्ति—भगवती के मुखारविन्द से जो वर्ण निकलते थे उनमें इतना माधुर्य था कि

विपञ्च्या गायन्ती विविधमपदानं पशुपते-
स्त्वयाऽऽरब्धे वक्तुं चलितशिरसा साधुवचने ॥
तदीयैर्माधुर्यैरपलपिततन्त्रीकलरवां ।
निजां वीणां वाणीं निचुलयति चोलेन निभृतमिति ॥

भगवती के मन्दहास्य की प्रभापूरित ध्वनि से कामेश्वर का मन उसमें मज्जित हो गया ।

अनाकलितसादृश्यचिबुकश्रीविराजिता ।
कामेशबद्धमांगल्यसूत्रशोभितकन्धरा ॥६३॥

यह वाग्देवता से लेकर जो वर्णन है उसे ही कवि प्रतिपादित करता है । उपयुक्त वाग्देवता का सादृश्य किसी में नहीं आ सकता है और कुछ भी मुखसे निकला है उसका सादृश्य केवल चिबुक गालों की श्रीसे थोड़ा मिलता-जुलता है । कामेश्वर

परम शिव श्रीशंकर जी के साथ जो मङ्गल सूत्र सौभाग्याभरण बांधा गया है उससे उसके कन्धर शोभित होते हैं।

कनकाङ्गदकेयूरकमनीयभुजान्विता।
रत्नग्रैवेयचिन्ताकलोलमुक्ताफलान्विता ॥६४॥

अब स्थूल रूप का वर्णन हो रहा है—

सुवर्ण रूपी जो शरीर है उसमें केयूर से कमनीय है भुजा जिससे—

ब्रह्मोत्तर खण्ड में भी शिवजी के ध्यान में आया है—

दधानं नागवलयं केयूराङ्गदमुद्रिका।

अन्यत्र—

नागवलय और केयूराङ्गदमुद्रिका।

केयूराङ्गद हार कङ्कणमुखालङ्कारविभ्राजिता।

भगवती के केयूर अङ्गद-हार और कङ्कण अलङ्कार से शोभित थी।

अग्निपुराण में इसका वर्णन आया है—

केयूर—भुजाओं का आभूषण। दूसराभरण चिन्तामणि और रत्नाभरण हार हैं।

ग्रीवा में जिनका ध्यान लगा हुआ है उसे ग्रैवेयचिन्ताक तृण के साथ जो मुक्ताफल हैं (लोलसत्तृणयोः) उत्तम मध्यम एवं अधम इस प्रकार तीनो तरह के अधिकारियों को उनकी उपासना का फल देनेवाले हैं।

कामेश्वरप्रेमरत्नमणिप्रतिप्रणस्तनी।
नाभ्यालवालरोमालिलताफलकुचद्वयी ॥६५॥

कामेश्वर जो शिव हैं उन्हें प्रेम के प्रतिपण में (सौदे में) स्तनरूपी मणि अर्पण की है (स्तन रत्नं दत्वा प्रेमरत्नं प्रीतवती) स्तनरत्न देकर प्रेमरत्न लिया इससे भगवती के पातिव्रत्य का अतिशय दिखलाया गया है। नाभिरेव आलवाल—नाभिरूपी जो पुष्करिणी है उसमें रोमावलीरूपी लता है उसमें फल कुचद्वय है।

लक्ष्यरोमलताधारतासमुन्नेयमध्यमा ।
स्तनभारदलन्मध्यपट्टबन्धवलित्रया ॥६६॥

लक्ष करनेवाले रोमावली का जो आधार है उनसे नाभि के अधः प्रदेश में मध्यमाख्या रोमलता से ऊंचे हुए हैं मध्य या स्तन जिसके—

निराधारो हा रोदिमि कथय कस्याग्रपुरतः ।

नाभि के ऊपर स्तनभार पट्टरूपी वलित्रय यह जिसको हटा रहे हैं ऐसी भगवती हैं।

अरुणारुणकौसुम्भवस्त्रभास्वत्कटीतटी ।
रत्नकिङ्किणिकारम्यरशनादामभूषिता ॥६७॥

अतिशयेनारुणमरुणारुणम्—

अत्यन्त अरुण जो कुसुम्भ के वस्त्र है उनसे देदीप्यमान है कटितटी जिसकी रत्नमयी जो पायजेब किंकिणिका है उससे बहुत रमणीय सुवर्ण के मेखलासूत्र से भूषित—

कामेशज्ञानसौभाग्यमार्दवोरुद्वयान्विता ।
माणिक्यमुकुटाकारजानुद्वयविराजिता ॥६८॥

कामेश शिवजी के जानने पर सौभाग्य के लिये मृदुलावण्य कोमल ऐसे दो जङ्घाओंवाली माणिक्य के मुकुटाकार आभूषण जानुओं में जिसके विराजित हैं ।

इन्द्रगोपपरिक्षिप्तस्मरतूणाभजङ्घिका ।
गूढगुल्फा कूर्मपृष्ठजयिष्णुप्रपदान्विता ॥६९॥

इन्द्रगोप—इन्द्रगोप एक कृमि विशेष है जो वर्षाकाल में होते हैं उनसे रचित जो कामदेव का तूणीर है उसके समान हैं दो जङ्घाएं जिसकी पिण्डली जिसकी मांसल है। कूर्म पीठवाले भ्राजिष्णु जयको देनेवाले दोनों पैर है अर्थात् पैरों में लालिमा आई हुई है ।

नखदीधिति सञ्छन्ननमज्जनतमोगुणा ।
पदद्वयप्रभाजालपराकृतसरोरुहा ॥७०॥

नखानां पादनखचन्द्राणां—

पैर के नखरूपी जो चन्द्रमा है उनकी जो किरणे हैं उनसे अच्छी प्रकार आच्छादित हो गये हैं। प्रणाम करते हुए ब्रह्मा, विष्णु, महेशादि के तमो अन्धकार है वह दूर हो गया। अभिप्राय यह है कि भगवती के चरणों में जो नत हो जाते हैं उनका अज्ञानान्धकार दूर हो जाता है—

इसी प्रकार मत्स्यपुराण और पद्मपुराण में पार्वतीजी के सामुद्रिक के प्रकरण में नारदजी के कहे गये वर्णन आते हैं।

जैसे,

न जातोऽस्या पतिर्भद्रे लक्षणैश्चविवर्जिता।
उत्तानहस्ता सततं चरणैर्व्यभिचारिभिः।
स्वच्छायया भविष्येयं किमन्यद्वहु भाषसे॥

इस प्रकार जब उन्होंने कहा तो मेनका और हिमालय को बड़ा दुःख हुआ और हिमवान ने नारदजी से पूछा—

हर्षस्थानेऽपि महति त्वया दुःखं निवेद्यते।
अपरिच्छिन्नवाक्यार्थो मोहं यासि महागिरे॥

हे नारदजी ! आपने हर्ष के स्थान में बड़ा भारी दुःख का वचन कह दिया है कि इसका पति कोई उत्पन्न नहीं होगा यह जो आपने कहा उससे मुझे सन्तोष नहीं हुआ।

नारद ने उत्तर दिया—मैंने जो वर्णन किया इसका अभिप्राय समझो—

चरणौ पद्मसंकाशावस्याः स्वच्छनखोज्वलौ।
सुरासुराणां नमतां किरीटमणिकान्तिभिः॥
विचित्रवर्णैर्हास्यन्ती स्वच्छायाप्रतिबिम्बितः।
प्रविश्य नाशयिष्यन्ति तेषां हार्दं तमोगुणम्॥

पद्मद्वयस्य प्रभा जालेन—

इसके पद्मद्वय की प्रभा की किरणों से कमलों की कान्ति

फीकी पड़ गई है। अर्थात् इनके पैरों की लालिमा के साम
कमलों की लालिमा मुर्झा गई है। इसके चरणों की कान्ति
ब्रह्मादि देवता नतमस्तक रहेंगे इसके ऊपर किसी का नियन्त्र
नहीं रहेगा सर्वाधिष्ठात्री यही है कोई भी इससे ऊपर नहीं रहेगा
यह मेरी उक्ति का अभिप्राय था।

सिञ्जानमणिमञ्जीरमण्डितश्रीपदाम्बुजा ।
मरालीमन्दगमना महालावण्यशेवधिः ॥७१॥

सिञ्जाना=भूषणजन्य शब्दविशेषं कुर्वाणा।

चरणरूपी कमल जिसकी मणिमय मञ्जीर के झंकार
मण्डित हैं यहां पर चरणकमल के आगे श्री शब्द आया है इसक
अभिप्राय है श्रीचरण जिन चरणों पर मस्तकनत करने
साधक को श्री की प्राप्ति होती है। हंसी के समान मन्द गमन
वाली (गतिवाली) अतिशय लावण्य की निधिरूपा है। "शेव
निधिः"। जैसा कहा है—शेवध्यै नमः।

सर्वारुणानवद्याङ्गी सर्वाभरणभूषिता ।
शिवकामेश्वराङ्कस्था शिवा स्वाधीनवल्लभा ॥७२॥

जिसके सम्पूर्ण अङ्ग वस्त्राभूषणादि अरुण है और कोई
अङ्ग सामुद्र शास्त्र के अनुसार निन्दित एवं दोषपूर्ण नहीं (निर्दो
है। सम्पूर्ण आभूषणों से आभूषित (सर्वैश्चूड़ामणिप्रभृतिपाद
ङ्गुलिभिः)।

कालिकापुराण में ४० लक्षण जो स्त्रियों के बतलाये हैं उन

पार्वतीजी सम्पन्न थी। इस प्रकार देवीजी का स्थूलरूप बता करके वह स्थूल रूप कहां पर है यह बताते हैं—

यथेच्छ रूप जिसका है ऐसा रूप अपनी इच्छानुसार रूप बनानेवाला जैसे ऐन्द्रजालिक बनाता है।

जगत्सु कामरूपत्वे त्वत्समो नैव विद्यते।
अतिस्त्वं कामनाम्नाऽपि ख्यातोभव मनोभव॥

"यदन्यद्द्रष्टुमिच्छसि" भगवान ने श्री गीताजी में कहा है। संसार में आपके समान कोई कामरूप स्वेच्छा का काम नहीं हैं। इसलिये संसार में आपका नाम मनोभव हुआ। श्रुति कहती है।

"प्रज्ञानमेव वा कामः"

तथा च श्रुति कहती है—

यदेतद्हृदयं मनः चैतत्सञ्ज्ञानमज्ञानम्विज्ञानम्प्रज्ञानम्मेधा दृष्टिर्धृतिर्मतिर्मनीषा जूतिः स्मृतिः सङ्कल्पः क्रतुः रसः कामोवश इति सर्वाण्येवैतानि प्रज्ञानस्यनामधेयानि भवन्ति।

तत्र प्रज्ञा शब्द से शिव ही कहा जाता है। अर्थात् शिवकी गोद में (ज्ञान में) जिसकी स्थिति है।

स्कन्दपुराण में ब्रह्मगीता प्रकरण में वर्णन आता है:—

शंकराख्यं तु विज्ञानं बहुधा शब्द्यते बुधैः। केचिद्हृदयमित्याहुः शिवः स्वाधीनमेव च। केचित्सर्वाणि सन्ततम्।"

इसका अभिप्राय है शिव=प्रज्ञानघन यह सम्पूर्ण सुन्दरता ज्ञान में हैं। संसार की सृष्टि की इच्छा जब महादेव ईश्वर

करते हैं उस समय उस अवस्था को काम नाम दिया है। "आत्मै
वेदमग्र आसीत्। एक एव सोऽकामयत एतान्वै काम इत्यन्तम्।"

काम शब्द इसमें सर्जनात्मक शिव का वाचक है। शिवा
उसके अङ्क में स्थूलरूप में विराजती है। इच्छारूपायाः शिवाधार-
कत्वात्" शिवा और शिव अभेद हैं।

शिवा=मङ्गलमूर्ति, कल्याणमूर्ति। स्वाधीन=पति जिसके
अधीन है।

तत्र शैवागम में लिखा है—

समेधयति यं नित्यं सर्वार्थानामुपक्रमम्।
शिवेति तन्मनुष्याणां तस्मादेव शिवःस्मृतः॥

भारते—

समा भवन्ति मे सर्वे दानवा मानवाः सुराः।
शिवं करोमि भूतानां शिवत्वं तेन मे सुराः॥
परमात्मा शिवः प्रोक्तः शिवा सैव प्रकीर्तिता।
समस्तभुवनव्यापी भर्ता सर्व शरीरिणाम्॥
पवनात्मा बुधैर्देव ईशान इति कथ्यते।
शिवा भार्या बुधैरुक्ता पुत्रश्चास्य मनोजव॥

समस्त भुवन भर्ता—समस्त भुवन को पालन करने वाला।

शिवं मोक्षं ददातीति शिवः। मोक्ष में उसकी स्थिति है।
अपनी आत्मा में कामेश्वर जिसका है शिव शक्ति के अधीन
रहता है। कालिकापुराण में आता है—

नित्यं वसति तत्रात्मा पार्वत्या सह नर्मकृत् ।
मध्ये देविगृहे तेन तदधीनस्तु शंकरः ॥

इसीलिये सौन्दर्य लहरी में कहा है—

शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुम् । न चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि ।

जब शिव शक्ति से मिलता है तभी यह सामर्थ्यवान् होता है।

शर्याति राजा की लड़की सुकन्या के सामने अश्विनी-कुमारों ने उसके पति के समान रूप बनाया तो अपने पातिव्रत की रक्षा के लिये उसने भगवती की उपासना की—

"शरणन्ते जगन्मातः प्राप्ताऽस्मि भृशदुःखिता ।
रक्षमेऽद्यसती धर्मं नमामि चरणौ तव ॥"

कि हे मातः मेरे सतीधर्म की रक्षा कीजिये ।

एवं स्तुतातदादेवी तया त्रिपुरसुन्दरी ।
हृदि तस्या ददौ ज्ञानं येनाधीनपतिर्भवेत् ॥

इस प्रकार उसके प्रार्थना करने पर भगवती त्रिपुर सुन्दरी ने उसे ज्ञान दिया जिससे उसका पति उसके आधीन हो जाय अर्थात् उसके पति के समान अश्विनीकुमारादि को छोड़ स्वयं अपने पति को पकड़ लिया ।

सुमेरुश्रृङ्गमध्यस्था श्रीमन्नगरनायिका ।
चिन्तामणिगृहान्तस्था पञ्चब्रह्मासनस्थिता ॥७३॥

सुमेरु पर्वत के श्रृङ्ग में निवास करनेवाली जिसका वर्ण
ललितास्तवराज में आया है—

सजयति सुवर्णशैलसकलजगच्चक्रसङ्घटितमूर्तिः । काञ्चन
निकुञ्जवाटी कन्दन दमरी प्रपञ्चसंगीतः । हरिहरनैॠत मारुत
हरितामन्ते सुवस्थितन्तस्य । विनुमः सानुत्रितयं विधिहरिगौरी
शविष्टपाधारम् । मध्ये पुनर्मनोहररत्नरुचिस्तवकरञ्जितदिगन्तम्
उपरि चतुः शत योजनमुत्तुङ्गं श्रृङ्गपुङ्गवमुपासे ।

ऐसे सुमेरु के तीन श्रृङ्गों में मध्य ऊंचे शिखर पर वास
करनेवाली ।

श्रीमन्नगरनायिका—लक्ष्मीवत् जो नगर है उसकी अधि-
नायिका । यह नगर दो प्रकार का है—एक मेरु के बीच में है
जिसका वर्णन ललितास्तवराज में आया है । चार सौ योजन
विस्तार में देवशिल्पी विश्वकर्मा ने इसे बनाया जिसमें नाना-
विध नगर है ऐसा निर्माण किया । "चत्वारि शतानीतिविग्रहः ।"
उसमें नगरनायिका नाना पञ्च विंशति तरह के साल लगे
थे । रत्नद्वीप नामक नगर है इसका रुद्रयामल तन्त्र में वर्णन
आता है ।

अनेक कोटिब्रह्माण्डकोटीनांबहिरूर्ध्वतः ।
सहस्रकोटिविस्तीर्णं सुधासिन्धोस्तु मध्यमे ॥

करोड़ों ब्रह्माण्ड जिसके आगे ऊपर लगे हैं उनके बीच में यह नगर है। "सुधा सिन्धोः मध्ये सुरविटपवाटी परिवृते" सौन्दर्य लहरी में आया है। अनेक ब्रह्माण्ड जिसके चारों तरफ हैं और सुधासिन्धु के बीच में यह विराजमान है।

रत्नद्वीपे जगद्द्वीपे शतकोटिप्रविस्तरे।
पञ्चविंशतितत्त्वात्मपञ्चविंशतिवप्रकैः ॥
त्रिलक्षयोजनोत्तुंग श्रीविद्यायाः पुरं शुभम्।

"श्रीमन्नगर" शब्द श्री चक्र का वाचक है। चक्र नगर और मकान इनके नाम विश्वकोश में पर्यायरूप में आये हुए हैं।

चिन्तामणिगृहान्तस्था—चिन्तामणिगणरचितं चिन्तां दूरी करोतु मे सदनम्" ललितास्तव में चिन्तामणि नामक भगवती का जो स्थान है उसमें निवास करनेवाली—

और गौड़पादीयसूत्र भाष्य में आया है—

सर्वेषां चिन्तितार्थप्रदमन्त्राणां निर्माणस्थानम् तदेवं तस्य चिन्तामणिगृहत्वम्—

उपासकों को सम्पूर्ण चिन्तित अर्थ कामनाओं को सफल करनेवाले मन्त्र इस स्थान पर निर्माण होते हैं अतः इसे चिन्तामणिगृह कहते हैं उसमें विराजनेवाली भगवती। अर्थात् जिस यन्त्र में अभिलषित कार्य सिद्धि के मन्त्र उत्पन्न होते हैं उसमें निवास करनेवाली।

पञ्चब्रह्मासनस्थिता—

पांच ब्रह्म जो हैं उनका आसन बना हुआ है—

"तत्र चिन्तामणिमयं देव्या मन्दिरमुत्तमम् ।
शिवात्मके महामञ्चे महेशानोपबर्हणे ॥
अतिरम्यतले तत्र कशिपुश्चसदाशिवः ।
मृतकाश्च चतुष्पादाः महेन्द्रश्च पतद्ग्रहः ॥
तत्रास्ते महेशानी महात्रिपुरसुन्दरी ।

"चार भृत्य—द्रुहिण, हरि रुद्र, ईश्वर और सदाशिव मिलकर पञ्चब्रह्मासन हैं। आग्नेयादि ईशानपर्यन्त चार दिशाओं में ये चार रहते हैं।

महापद्माटवीसंस्था कदम्बवनवासिनी ।
सुधासागरमध्यस्था कामाक्षी कामदायिनी ॥७४॥

महापद्माटवीसंस्था=महान्ति पद्मानि यस्यां ईदृश्यामटव्यांवने सम्यक्तिष्ठति ।

महापद्म का रुद्रयामल में तीन लक्ष योजन जिसका आयात (विस्तार) है उसमें निवास करनेवाली। ललिता सहस्रनाममें—

पाटीर पवन बालक घाटी निरयत्पराग पञ्जरिताम् । पद्माटवीं भजामः परिमल कल्लोलपक्ष्मलोपान्ताम् ॥

ब्रह्मरन्ध्र में जो सहस्र दल है उसे भी पद्माटवी कहते हैं। सौन्दर्य-लहरी में आया है—

सहस्रारे पद्मे सरहसि पत्या विहरसि ।

स्वच्छन्द तन्त्र में आया है—

तस्मादूर्ध्वं कुलं पद्मं सहस्रारमधोमुखम् ।

इस प्रकार प्रारम्भ कर अग्रिम समाप्ति में कहा है—

महापद्म वनं चेदं तत्रमानं तस्य चोपरि ।

यहां ब्रह्माण्ड और पिण्ड का ऐक्य जहां पर होता है उसे पद्माटवी कहा गया है ।

कदम्बवनवासिनी—कदम्ब वनमें निवास करनेवाली। चिन्ता-मणि के मन्दिर के चारों ओर मणिमण्डप है और उस मण्डप के चारों तरफ कदम्ब वन है । भैरव यामल में श्रीयन्त्र में कदम्ब वन बताया है (निर्देश किया)—

विन्दुस्थानं सुधासिन्धुः पञ्चयोन्यः सुरद्रुमाः ।
तत्रैव नीपश्रेणी च तन्मध्ये मणिमण्डपम् ।।

तत्र चिन्तामणिमयं इत्यादि प्रतिपादन किया है ।

कनक—

सुवर्ण, चान्दी के प्राकार वाला वीच के सात योजनवाला है उससे दो योजन अधिक कदम्ब के वृक्षों का वन है ।

पिण्डाण्ड में विन्दुस्थान में सहस्रारकर्णिका में जो चन्द्र है । उसके वीच के स्थान में यह स्थान है ।

सुधासागरमध्यस्था—सुधासिन्धु जो पञ्चयोन्यात्मक है उसके वीच में है । यह पुरी अमृत से आवृत है यहां यह सहस्र दल कमल में जो विन्दुस्थान है उसमें भगवती स्थित है ।

कामाक्षी—सुन्दर नेत्रवाली, यद्वा कामेश्वर जो शिव है वही जिसके नेत्रों में बसे हैं, यद्वा कामनाओं को परिपूर्ण करने-वाली । ब्रह्माण्डपुराण में कामाक्षी का वर्णन आया है—

सर्वज्ञा साक्षिभावेन तत्तत् कामानपूरयत् ।
तद्दृष्ट्वा चरितं देव्या ब्रह्मा लोकपितामहः ।।
कामाक्षीति तदा नाम ददौ कामेश्वरीति च ।

अर्थात् मनुष्य के मनोरथों को इच्छाओं को परिपूर्ण करनेवाली होने से इनका नाम कामाक्षी हुआ ।

कामदायिनी—कामं द्यति खण्डयति वा कामदः शिवस्तेन अयिनी (शुभावहोविधिः) ।

कामदायिनी शंकर भगवान के साथ रहनेवाली भगवती की आराधना करने से मनुष्य काम शक्ति पर विजय कर सकता है ।

देवर्षिगणसंघातस्तूयमानात्मवैभवा ।
भण्डासुरवधोद्युक्तशक्तिसेनासमन्विता ।।७५।।

देवर्षिगणसंघात—देवगण और ऋषिगण के संघात से जिसकी स्तुति की जाती है ।

आत्मवैभवा—ब्रह्माण्डपुराण में इस आत्मज्ञान का वर्णन है यह विभव जिसका अर्थात् मोक्ष (कैवल्य) को देनेवाली । भण्डासुर के वध होनेपर देवताओं ने जय-जय-जय जगन्मातः यह देवताओं के स्तुति करने पर भगवती ने कहा—“आप लोग वर मांगिये । इसपर देवता बोले ।”

यदि तुष्टाऽसि कल्याणि वयं दैत्येन्द्रपीड़िताः ।
दुर्लभं जीवितं चापि त्वां गताः शरणार्थिनः ।।

अयं भण्डासुरो देवि बाधते च जगत्त्रयम् ।
त्वयैकेनैव जेतव्यो न शक्तस्त्वपरैः सुरैः ॥

वस्तुतः देवता ब्रह्मादि ऋषि वशिष्ठादि देवर्षि नारदादि और गण आदित्यविश्वावसु आदि ।

साध्य=रुद्रादि इनके समुदायने अनेक कोटि दिग्पालों के साथ भगवती की स्तुति की (भगवती के आत्मविभव की) लिखा है—

स्वात्मैव देवता प्रोक्ता ललिता विश्वविग्रहा ।

सब देवता ललिता की आत्मा से अभिन्न थे । जो देवताओं में विभव है उसका कारण ललिता है । "देवकार्यसमुद्यता" यह पहले श्लोक में आया है उसे ही विस्पष्ट करते हैं ।

भण्डा=अज्ञानरूपी असुर को नाश करनेवाली भण्डा निर्लज्ज जो आत्मा जीवरूप हो गया है उसके जीवत्व को हटाकर ब्रह्म भाव में लानेवाली ।

सच्चित्सुखात्मा जीवत्व को नाश कर "अहं ब्रह्मास्मि'' प्रत्य-गभिन्न चैतन्य का साक्षात्कार करानेवाली । इस अज्ञान को दूर करने के लिये जो विवेक वैराग्यादिशक्ति हैं उनसे युक्त ।

मनुष्य में जो शक्ति है उसका उसे ज्ञान नहीं होता वह तिरोहित रहती है । भगवती की उपासना करने से मनुष्य की तिरोहित ज्ञान शक्तियों का विकास हो जाता है । जैसे बच्चेको बाल्यकाल में पुंस्त्व शक्ति रहती है और युवावस्था आने पर उसका

विकास होता है वैसे ही भगवती की समाराधना से मनुष्य की उस शक्ति का विकास होकर उसे सब कुछ प्राप्त हो जाता है।

सम्पत्करी समारूढसिन्धुरव्रजसेविता।
अश्वारूढाधिष्ठिताश्वकोटिकोटिभिरावृता ॥७६॥

सम्पत्करी—सम्पत्ति को देनेवाली त्रिपुरसुन्दरी को सम्पत्करी कहा है—स्वतन्त्रतन्त्र में—यथा,

"सम्पत्करीतिकाप्यास्ति विद्या साचिन्त्यवैभवा।
एवं त्रिवर्णा साविद्या विधानं चात्र कथ्यते ॥"

वह त्रिपुरासुन्दरी विद्या है।

समारूढ़सिन्धुर व्रजसेविता—चारों ओर हाथियों के समुदाय से सेवित ; जैसे आया है—

"रणकोलाहलं नाम समारोहमतङ्गजम्।
तामन्वगाययुः कोटिसंख्यकाः कुञ्जरोत्तमाः ॥

अर्थात् हाथियों के तीन प्रकार के समूह होते हैं। भद्रसञ्ज्ञक मन्द्रसञ्ज्ञक और मृदुसञ्ज्ञक इन सबका समुदाय भगवती के साथ रहता है। यद्वा सुखसम्पत्ति को देनेवाली एक चित्तवृत्ति है जिसे सम्पत्करी। शब्दादि जो विषय हैं उनका नियन्त्रण करनेवाली है।

जैसे कहा है—

मन मतङ्ग हाथी भयो ज्ञान महावत कीन।
ज्यों-ज्यों चले कुपंथ में त्यों-त्यों अंकुश दीन ॥

भगवती की आराधना करने से विषयों पर नियन्त्रण हो सकता है।

एक देवी का नाम तन्त्र में अश्वारूढ़ा है। इस देवी के १३ अक्षरों का मन्त्र है। जिसका वर्णन ब्रह्माण्डपुराण में निम्न-लिखित आया है—

अथ श्री ललितैशान्या पाशायुधसमुद्भवा।
अतित्वरितविक्रान्ती अश्वारूढ़ा चलत्पुरा॥
अपराजितनामानं समारुह्य हयं ययौ।
बहवोवातजवना वाजिनस्तां समन्वयुः॥

इस प्रकार अश्वारूढ़ा का वर्णन आया है—

यद्वा इन्द्रिय रूप जो अश्व हैं उनपर आरूढ़ मन है। एक ही मन से असंख्य इन्द्रियों में अधिकार उन-उन सुखों का आस्वादन करनेवाली है। अतएव अश्वारूढ़ा कहा है।

भाव यह है कि योगी आत्म देवता स्वरूप वह उपासना के अभ्यास से इच्छा मात्र से ही सम्पूर्ण शरीरों में गमन करता है। योग की अनन्त इन्द्रियों से आवृत होकर योगी अपने भोग भोगता है।

इन्द्रियों में चलकर अनन्त जो मन है उनपर अधिकार कर लेता है।

"आराधनपरा तद्वत् इच्छाशक्तिस्तु योगिनः।
अयमेवस्फुटोपायो दृष्टोऽनुत्तरदेशिकैः॥"

चक्रराजरथारूढसर्वायुधपरिष्कृता ।
गेयचक्ररथारूढमंत्रिणोपरिसेविता ।।७७।।

चक्रराज का जो रथ है उसमें विराजमान अर्थात् श्रीयन्त्र के बिन्दु में निवास करनेवाली अथवा, रथशास्त्र में चक्रराज करि-चक्र और ज्ञेय चक्र ये रथों के भेद बतलाये गये हैं जो ललिता के उपाख्यान में आते हैं। यह वर्णन आकर्षक है एवं देखने योग्य है—

यह परिभाषा चक्र में लागू होती है—

आनन्दध्वजसंयुक्तो नवभिःपर्वभिर्युतः ।
दशयोजनमुन्नम्रः चतुर्योजन विस्तृतः ।।
महाराज्ञा चक्रराज रथेन्द्रः प्रचलन् बभौ ।
मन्त्रिताभा महाचक्रे गीतिचक्रे रथोत्तमे ।।
सप्तपर्वाणि चोक्तानि तत्र देव्यश्चताःशृणु ।
करिचक्ररथेन्द्रस्य पञ्चपर्वसमाश्रयाः ।।
देवताश्च शृणु प्राज्ञ नामानि शृण्वतां जयः ।
चक्रराजरथोयत्र तत्रज्ञेयरथोत्तमः ।।
यत्रज्ञेयरथस्तत्रकरिचक्ररथोत्तमः ।
एतद्रथत्रयं यत्तत्त्रैलोक्यमिव जङ्गमम् ।।

युद्धकाल में भगवती चक्रराज में बैठकर सम्पूर्ण आयुधों से सुसज्जित होकर बैठती है। यद्वा, चक्रराज श्रीचक्र है, उसमें विन्दुरूप से भगवती निवास करती हैं। उसमें आयुध जो है वे

सब आत्मज्ञान के साधन है। या चक्रराज जो रथ है वह आधार उसमें बैठकर सब आयुध कर्मादि रूप हैं। जैसे—"सर्वकर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते" ये सब ज्ञान में शुद्ध विद्या में परिसमाप्त हो जाते हैं। तब वह शुद्ध विद्या—

सा शुद्धा निर्मलाविद्या तदीयादुदयात्स्फुटा।
उन्मज्जनासचिच्छक्तिमात्मनो नित्यसामृपिः॥
यदायोगी तदातस्य चक्रेसत्वमनुत्तरम्।
माहेश्वर्याः समावेशो कर्षात्सिद्ध्यतियोगिनः॥

ज्ञेयचक्ररथारूढ़ा—ज्ञेय चक्र जो है साम के गायन करने से या प्रणव ॐ के उच्चारण करने से एक चक्राकारवृत्ति के रूप में उनमें मन्त्रिणी परिसेविता (मन्त्रिणी प्रणव की मात्राओं से वह पूरित है) या ज्ञेय जो त्रिपुरसुन्दरी का मुख्य चक्र है उसमें आरूढ़ अर्थात् अनुसन्धान करने से मन्त्रबीजों को विषय करनेवाली, अभिप्राय यह है—"मन्त्र में जो शक्ति है उसका अनुभव साधक को होने लग जाता है। जैसे आया है—

"महाह्रदानुसन्धानान्मन्त्रवीर्यानुभवः।"
महाह्रदइति प्रोक्ता शक्तिर्भगवती परा॥
अनुसन्धान मिति प्रोक्तं तत्तादात्म्यविमर्शनम्।

पराशक्ति को महाह्रद कहते हैं। उसके साथ तादात्म्य विमर्श करना ही अनुसन्धान कहलाता है।

करिचक्ररथारूढ़दण्डनाथपुरस्कृता।
ज्वालामालिनिकाक्षिप्तवह्निप्राकारमध्यमा॥७८॥

"करिर्वराहः"—वराह की आकृति के करिचक्र जो हैं उसमें वाराही की शोभा है। सदा ही इस वाराही शक्ति के हाथ में दण्ड रहता है। इसलिये "दण्डनाथ पुरस्कृता कहा अथवा करि-चक्रय" करि=किरणों का बोधक। सृष्टि स्थिति और लयरूपी जो चक्र है इसको चलानेवाले उसके आगे यमराज को आगे किया हुआ है। सृष्टि स्थिति योगी श्रीविद्या उपासक सृष्टि स्थिति लय में घूमता हुआ भी यमयातना का विषय नहीं होता है।

ज्वालामालिनिका। ज्वाला मालिनी नामवाली चतुर्दशतिथि वन्हि का जो प्राकार है उसमें निवास करनेवाली। श्रीमा का आकार चिदग्नि अग्निकुण्ड से है।

ज्वालामालिनिं प्रतिः।

देवी का ज्वालामालिनि देवी ने ज्वालामालिनि के प्रति जो कहा है देखिए—

वत्से त्वं वन्हिरूपाऽसिज्वालामालामयाऽऽकृति त्वया विधी-यतां रक्षा बालस्यास्य महीयसः।

यह भगवती बच्चों की रक्षा में आती है। अथवा, ज्वालाओं की जो माला है पंक्ति है उससे प्रगट है स्फुलिङ्ग बीच में उद्धृत हैं उनमें रहनेवाली अग्निकरण संसार की उत्पत्ति और विनाश का लेश जिसमें नहीं होता है। निर्विकारा सृष्टि के कर्तृत्व और संहार का रूप नहीं आता है। संसार के लय होने पर जिसकी स्थिति रहती है और संसार की स्थिति रहने पर जिसमें विकार नहीं आता है वह—

शक्तयश्च जगत्कृत्स्नं शक्तिमांस्तुमहेश्वरः ।
इत्यागमदिशाविश्वं स्वशक्तिप्रभवो यथा ॥
शिवस्य तत्समस्यापि तथाऽस्य परयोगिनः ।

अथवा ज्वालामालिनिका=शक्ति के पांच त्रिकोण हैं, जैसे श्रीयंत्र में उसके वीच में विन्दु रहता है। यह चार जो शिव और पञ्चशक्ति है उसके संयोग से नवकोण वना और उसमें स्थित विन्दु का सृष्टि और संहार से अतीत होना प्रकट है। इसीलिये वह्नि प्राकारमध्यगा कहा। शक्ति पञ्चक सृष्टि और लय से और चतुर्वह्नि से चक्र वना जिसमें सृष्टि और लय होते हैं। विन्दु उससे रहित है।

भण्डसैन्यवधोद्युक्तशक्तिविक्रमहर्षिता ।
नित्यापराक्रमाटोपनिरीक्षणसमुत्सुका ॥७९॥

भण्डासुर की चतुरंगिणी सेना के संहार में उद्यत नकुलिनी आदि शक्तियों के पराक्रम से हर्षित होनेवाली।

भण्ड जो जीवभाव है आत्मा का वह सैन्य है संसार की विविधता, विचित्रता, विषय और विषयिता के साथ सम्बन्धित जीव की विषयाकारा जो वृत्ति है वही सैन्य है। इन्हें वध करने में उद्यत अद्वैत वृत्ति (ब्रह्म भाववृत्ति) के विक्रम से प्रसन्न होनेवाली। अभिप्राय यह है कि आवरण और विक्षेप का

श्रीविद्या की साधना से नाश हो जाता है उससे आध्यात्मिक प्रकाश का हो जाना ही हर्ष है। शक्ति सूत्र में आता है—

"तदपरिज्ञाने सशक्ति व्यामोहिता संसारित्वम्।"

उस अव्यक्त आत्मा के अनुभव न होने से अविद्या की शक्तियों से व्यामूढ़ हो जाना ही संसार है। वह शक्तियां क्या हैं जो व्यामोह करती हैं। खेचरी, गोचरी, दिग्चरी, भूचरी इन शक्तियों से व्यामोहित संसारित्व है। इसमें दो भूमिका होती है। एक पशुभूमिका और दूसरी पतिभूमिका जिसका अर्थ है एक अन्तःकरण और एक बहिःकरण। इससे विषय भाव का जो आवरण पड़ता है तथा इनके ज्ञान से चित्त में अन्तर्मुखी भाव होना यही एक वृत्ति विशेष रूपी शक्ति है उससे प्रसन्न होनेवाली।

नित्या·········समुत्सुका—

साधारण भावार्थ—नित्य जो कामेश्वरी आदि पञ्चदश तिथि नित्य देवता हैं उनका जो पराक्रम है, चमत्कार है उनके आटोप विस्तार से समुत्सुक, अथवा नित्य अनादिसिद्धा स्वात्मशक्तय उनके पराक्रम से ज्ञानकला एकबार भी विकास हो जाय तो उस अन्तर्मुखवृत्ति के बनाने में उसका उत्साह रहता है जैसा योगवाशिष्ठ में आया है।

सर्वा एव कलाजन्तोः (र) अनायासेन नश्यति।
इयं ज्ञानकलात्वन्तः सकृज्जाताऽपि वर्द्धते॥

भण्डपुत्रवधोद्युक्तबालाविक्रमनन्दिता ।
मन्त्रिण्यम्बाविरचितविषङ्गवधतोषिता ॥८०॥

भण्डासुर के तीस पुत्र चतुर्बाहु आदि उनके वध करने में उद्यत बाला भगवती नववर्षीया उनकी पुत्री उसके विक्रम से आनन्दित हुईं ।

ब्रह्माण्डपुराण में आया है ।

"ताभिर्निर्वेद्यमानाऽपि सा देवी ललिताम्बिका ।
पुत्र्याऊर्ज्जस्वि पदानि श्रुत्वा प्रीतिं समाययौ ॥"

उन शक्तियों ने जब भगवती ललिताम्बिका को कहा तो वे पुत्री के साथ श्यामलाम्बा भगवती ने विषङ्ग वध की रचना की और उसके वध से प्रसन्न हुईं । विषङ्ग भण्डासुर का भाई था ।

विशुक्रप्राणहरणवाराहीवीर्यनन्दिता ।
कामेश्वरमुखालोककल्पितश्रीगणेश्वरा ॥८१॥

विशुक्र नामक दैत्य के प्राणों को हरण करने से वाराही नामिका शक्ति से दण्डिनी देवी प्रसन्न हुईं त्रिपुरासिद्धान्त में वाराही पद का निर्वचन इसी प्रकार किया है—

वराहनन्दनाथस्य प्रसन्नत्वान्महेश्वरी ।
वराहीतिप्रसिद्धेयं वराहवदनेन च ॥

दूसरे पक्ष में भण्डपुत्रा आणवादयोमला—
भण्डपुत्र थे आणविकमल उनके विरुद्ध सुन्दोपसुन्द आदि

विषयाभिलाष=विषङ्ग (विषयाभिलाप) अतएव, यो विषयस्थः ज्ञानशक्तिर्हेतुश्चेति विषयः।

विरुद्धं शुक्रंतेजोयः सः जिसका विरुद्ध तेज है। अर्थात् वहिर्मुख-वृत्ति जीवाभाव उस जीव भावको दूर करनेसे हर्ष लाभ होता है।

वाराहीशक्ति के वीर्यनन्दिता उसके पराक्रम से प्रसन्न है।

केवल निर्गुण शिव के अनुभव करने से गणेश की पूर्यष्टका विधीश्वरत्व जीव पद वाच्य का ज्ञान जन्य से नाश होने पर कामेश्वर निष्कलब्रह्म के अनुकरण से रचित है पूर्यष्टक भाव है जिसका। अर्थात् जिसकी उपासना से चिदानन्द रूपी लाभ होता है।

महागणेशनिर्भिन्नविघ्नयन्त्रप्रहर्षिता ।
भण्डासुरेन्द्रनिर्मुक्तशस्त्रप्रत्यस्त्रवर्षिणी ।।८२।।

महागणेश के द्वारा विघ्नों को नाश करने से हर्षित ललितोपाख्यान में एक कथा आती है—

एक शिलापट्ट में अलसादि देवताष्टक पुटिक शूलाष्टक बनाकर जवविघ्न नामक एक यन्त्र असुरों ने देवी की सेना में डाला था तब उसको श्रीगणपति ने चूर्ण कर दिया। भण्डासुर ने जितने भी शस्त्र चलाये थे उनके प्रतीकार में प्रत्यस्त्र से खूब वर्षा कर संहार करने के कारण प्रसन्न—

धनुर्वेद में इसका वर्णन आया है—"धृत्वा प्रहरणं शस्त्रं मुक्त्वा त्वस्त्रमितीरितम्। अर्थात् अध्यात्म में मन में भण्डरूप

मन है जितनी भी मनमें कल्पनायें उठती है उन्हें ब्रह्मभाव से दूर करनेवाली माता।

करांगुलिनखोत्पन्ननारायणदशाकृतिः।
महापाशुपतास्त्राग्निनिर्दग्धासुरसैनिका ॥८३॥

भगवती के बायें और दाहिने हाथ की नखसन्धि से नारायण के मत्स्यादि दशावतार प्रगट हुए जब कि भण्डासुर ने असुरों से सम्पूर्ण दैत्यों को उत्पन्न करने के शस्त्र को भेजा था उस समय भगवती ने इन दश अङ्गुलियों से दश अवतार बनाये थे।

मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, भार्गव, राम, बलराम, कृष्ण और कल्कि। इन दश अवतारों को उत्पन्न कर असुर को नाश किया।

ब्रह्माण्डपुराण में इसका वर्णन इस प्रकार आया है—

दशहस्ताङ्गुष्ठनखान् महाराज्ञा समुत्थितः।
महामत्स्याकृतिः श्रीमान्नादिनारायणो विभुः॥

इत्यादि दशावतार आगे आता है—

दशावतारनाथास्ते कृत्वेत्थं कर्म दुष्करम्।
ललिताम्बां नमस्कृत्य बद्ध्वाञ्जलिपुटास्थिताः॥

इन दश अवतारों ने अञ्जलि बांधकर भगवती ललिता को प्रणाम किया।

पक्षान्तर में—जीव सम्बन्धी जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति, अवस्था। पञ्च-ईश्वर सम्बन्धी तुरीया ईश्वरादि सृष्ट्यादि कृत्य ये दशाकृति

भगवती के केवल नखमात्र में ही उत्पन्न होती हैं। नारायण शब्द जीव और ईश्वर का उपलक्षक है। दशाशब्द अवस्था का वाचक है। कृति शब्द कृत्य का वाचक है। षडक्षरपाशुपतास्त्र मन्त्र महापाशुपतास्त्रमन्त्र—

"रुद्रादयः पिशाचान्ताः पशवः परिकीर्तिताः।
तेषां पतित्वात्सर्वेशोभवः पशुपतिःस्मृतः॥
पशुपतेरिदम्पाशुपतम्।

पशुपति का जो शस्त्र या मन्त्र है वह पाशुपत है। उस महापाशुपत अस्त्र ज्ञानाग्नि से निर्दग्ध भण्ड की अज्ञान की सेना—

भगवती की पूजन करने से वेदान्त का अभ्यास होता है जिसके तारतम्य से अविद्या कृत वृत्तियों का ह्रास (नाश) निर्मूल होता है।

महापाशुपत शिवजी के षडक्षर मन्त्र से दूसरा है। महापाशुपतास्त्र इसमें दो देवता हैं पहले षट्क में ईश्वर और दूसरे षट्क में हैं सदाशिव। शिवजी का बड़ा शस्त्र पिनाक है उसकी अग्नि से दग्ध है असुर सैनिक।

कामेश्वरास्त्रनिर्दग्धसभण्डासुरशून्यका।
ब्रह्मोपेन्द्रमहेन्द्रादिदेवसंस्तुतवैभवा॥८४॥

महादेव के तृतीय नेत्र की अग्नि से भस्म हुए कामदेव को संजीवन करनेवाली आप औषधिरूपा है। उसके सम्बन्ध में ब्रह्माण्डपुराण में कथा आई है—

जब सब राक्षसों को मारने के बाद भण्डासुर अकेला रह गया तो क्रोध से जल्पना करते हुए भण्डासुर को महाकामास्त्र से जो हजार आदित्य के तेज के समान था भगवती ने वध किया इसका नाम कामेश्वरास्त्र था। उसके मारने से सम्पूर्ण नगर शून्य हो गया।

अध्यात्म=आत्मरूपी देवता ने कामेश्वर को जीवदशा में प्राप्त किया उस आत्मतत्त्व को शिव तुल्य स्थिति में सायुज्य मुक्ति में रक्खा प्रारब्धकर्म वशात् जो द्वैताभाव उसमें था वह लिङ्गशरीर, सूक्ष्मशरीर और परशरीरादि रूप में था इस सबके साथ उसे चिदग्नि से दग्ध कर दिया गया। अर्थात् भगवती ललिता की उपासना करने से जीवत्वभाव, आत्मभाव में लय हो जाता है।

ब्रह्मा विष्णु इन्द्रादि देवताओं द्वारा जिसके वैभव की स्तुति की गई अर्थात् इस अवसर पर भण्डासुर के नाश होने पर देवता सब प्रसन्न हुए और भगवती की उपासना में गये। यह वर्णन ब्रह्माण्ड पुराण में आता है।

हरनेत्राग्निसन्दग्धकामसंजीवनौषधिः।
श्रीमद्वाग्भवकूटैकस्वरूपमुखपङ्कजा ॥८५॥

महादेवजी के ज्ञाननेत्र से पूर्ण भस्म किये कामदेव के संजीवन करने की औषधि-विरक्त पुरुष को भी कामना की तरफ अभिमुख करनेवाली भगवती पराम्बा ही है -

ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा।
बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति ॥

इतिहास– भण्डासुर के वध के अनन्तर ब्रह्मादिक सुरों ने ललिताम्वा की कामदेव को जिलाने के निमित्त प्रार्थना की थी इसका वर्णन ब्रह्माण्ड पुराण में आता है। अभिप्राय यह है कि शंकर ने काम को जलाया भगवती ने उसे पुनर्जीवित कर दिया।

पित्रा निर्भर्त्सितो वालो मात्रेवाश्वास्यते किल।

इसी आशय को लेकर ब्रह्मवैवर्त पुराण में आया है—

हरौ रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन।

श्रीमद्वाग्भवेति भगवती के सूक्ष्म, सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम भेद से तीन प्रकार के रूप हैं। पञ्चदशी विद्या सूक्ष्मरूप। कामकलाक्षर-सूक्ष्मतर (इ) कुण्डलिनी सूक्ष्मतम। इन तीन नामों से भगवती वतलाई गई हैं। ज्ञान को देनेवाली होने से उसका वाग्भवस्वरूप वर्णित किया गया है।

जैसे,—"विद्याः समस्तास्तवदेवि भेदाः।"

वाग्भवकूट पांच अक्षरों का जो समुदाय है उसे कहते हैं। ये पञ्चदशी के प्रथम पांच अक्षर है। यही ललिताम्वा का मुख कमल है।

नेत्रोष्ठापरगलवर्ण शालिवाचम्।
सम्भूतिर्मुख मिति वाग्भवाख्यकूटम् ॥

कण्ठाधःकटिपर्यन्तमध्यकूटस्वरूपिणी ।
शक्तिकूटैकतापन्नकट्यधोभागधारिणी ॥८६॥

अब कण्ठ से नीचे कटिपर्यन्त मध्यभाग है यह कामराज कूट का बना है जिसमें छै अक्षर होते हैं (षडक्षरात्मक है) कटि के नीचे का जो भाग है वह शक्ति कूट है वह चतुरक्षरात्मक है। शक्तिकूट में सर्जन शक्ति और मध्यकूट में पालन शक्ति और वाग्भवकूट में लय होता है ।

कामस्ते हृदि वसतीतिकामराजम् ।
स्रष्टुत्वात्तदनुतवाम्ब शक्तिकूटम् ॥

चतुर्विध पुरुषार्थ की मूल कारण होने से मूल पञ्चदशाक्षरी विद्या मननात् त्रायते इति मन्त्रः मनन करने से जो जननमरण से रहित करता है वह मंत्र है। इससे आत्म स्वरूप का विकास होता है। जैसे, कहा है—

पूर्ण हन्तानुसन्ध्यात्मा स्फूर्जन्मननधर्मतः ।
संसाररक्षणक्षत प्राण धर्मतो मन्त्र उच्यते ॥

मूलमन्त्रात्मिका मूलकूटत्रयकलेवरा ।
कुलामृतैकरसिकाकुलसंकेतपालिनी ॥८७॥

मूल—त्रिकूट ; वाग्भव कामराज और शक्ति कूट ही कलेवर है स्थूल रूप है जिसका। मूलमंत्र, स्थूलरूप है और कूटमय कलेवर सूक्ष्मरूप है ।

वस्तुतः मूल मन्त्र से काम कलाक्षर मन्त्र अभिप्रेत है कूटत्रय—

इति कामकला विदिता येन सभवति त्रिपुरासुन्दरी योगः।

यह कामकला विद्या गुरुमुख से गम्य है। ऊर्ध्व विन्दु और उसके नीचे दो विन्दु।

शिवः शक्तिःकामः क्षितिरथ रविःशीतकिरणः।
स्मरो हंसः शक्रस्तदनुचपरामारहरयः॥
अमी हृल्लेखाभिस्तिसृभिरवसानेषु घटिता।
भजन्ते वर्णास्ते तव जननि! नामावयवताम्॥

मुखं विन्दुं कृत्वाकुचमध—

उसके नीचे अर्धकला यह तीन अवयव की कामविद्या गुरुमुख से जाननी चाहिये।

यह क्रम से मुखाद्यवयव इस प्रकार परिणत हुई हैं सूक्ष्म=मंत्रमय है। कुण्डलिनी सूक्ष्मतर रूप है। सूक्ष्मतम है समष्टि और व्यष्टि का मिल जाना (ऐक्य) अण्ड-पिण्ड का ऐक्य है।

योगी षट्चक्र भेदन करके सहस्रार में जब कुण्डलिनी को और उसकी कर्णिकाओं से चन्द्रमण्डल से अमृत को श्रावित करता है उस समय सहस्रार से जो अमृत—इसे अयोगी व्यक्ति नहीं जान सकता उसकी भावना करने से माग :का ज्ञान हो सकता है।

कुलामृतैकरसिका—कुलरूपी जो अमृत है।

सहस्रदल कमल से निश्चलित जो अमृत है उसका नाम है

कुलामृत। उस कुलामृत से इसका आश्वादन करनेवाली कुण्डलिनी शक्ति है। यद्वा,—"नकुलं कुलमित्याहुराचारः कुलमुच्यते" इस वचन से आचार को भी कुल कहते हैं। उस आचाररूपी अमृत की रसिका लेनेवाली श्री पराम्बाजी हैं।

कुलसंकेतपालिनी – कुल का जो संकेत हैं।

अर्थात् कुण्डलिनी के उत्थान आरोह और अवरोहरूपी संकेत हैं उनकी रक्षा करनेवाली।

कुलाङ्गना कुलान्तस्था कौलिनी कुलयोगिनी।
अकुला समयान्तस्था समयाचारतत्परा ॥८५॥

कुलाङ्गना—पातिव्रत्यादि गुण राशिशील जो वंश है उसे पालन करनेवाली। अर्थात् सतीधर्म पालन करनेवाली। जैसे कुलाङ्गना गुप्त रहती है—वैसे यह विद्या गुप्त रहती है।

अन्यास्तु सकलाविद्या प्रकटा गणिकाइव।
इयं तु शाम्भवी विद्या गुप्ता कुलवधूरिव॥

कुलाङ्गना=कुलवती स्त्री।

मातृमेय में मितिरूप से स्थित यद्वा कुलशास्त्र में ज्ञेयत्व से स्थिति। यद्वा प्रत्येक शरीर में, प्रत्येक गृह में, प्रत्येक स्थान में जो पूज्यभाव से स्थित है उसे कुलान्तस्था कहते हैं।

पूजनीया जनैर्देवि! स्थाने-स्थाने पुरे पुरे।
गृहे गृहे शक्तिपरैः ग्रामे ग्रामे वने वने॥

सहस्रदल के नीचे जो शक्तिमाला है उसे भी कुल कहते

उसकी कर्णिका में कुलदेवी कही जाती है। जैसे कौल में आया है—

कुलं शक्तिरिति प्रोक्तमकुलं शिव उच्यते।
कुलेऽकुलस्य सम्बन्धः कौलमित्यभिधीयते॥

"शिवशक्तिसामरस्यं कौलन्तद्वती कौलिनी।

कुलयोगिनी—कुले उक्तार्थः। ऊपर जो कुल बताया है।

सुषुम्ना के ऊपर सहस्रार पद्म में मुकुलित होने (मिलने) से कुलयोगिनी कुण्डलिनी का नाम पड़ा है।

अकुला समयान्तस्था समयाचारतत्परा।

जिसका देहरूपी वंश सम्बन्ध नहीं है। अर्थात् दिव्या समयान्तस्था=सम्पूर्ण योग शास्त्रकारों ने निर्णय किया है कि दहराकाश में जो चक्र है उसके पूजन को समय कहते हैं। उसके प्रतिपादन करनेवाले वशिष्ठ, शुक्र, सनक, सनन्दन एवं सनत्कुमार इनके जो तन्त्र है उनमें यही अभिप्रेत अर्थ प्रतिपादन किया गया है।

अथवा, समं=साम्यं यत् याति साम्य को प्राप्त होता है शिव। समया=देवी।

समयान्तस्था=शिव के अन्तर अवस्थान भैरवादिरूपवाली।

समयाचारतत्परा=समय का आचार=दीक्षा।

महावेधादि उड्डीयान महावेध पश्चिमोत्तानादि वह जो आचार है, योग का उसमें लगी हुई कुण्डलिनी शक्ति है।

रुद्रयामल में आचार और समयाचार का वर्णन किया है।

यतः तन्त्रशास्त्र आचार और भावना परक है—यथा पश्वाचार, वीराचार, दिव्याचार, वामाचार, कौलाचार आदि-आदि।

मूलाधारैकनिलया ब्रह्मग्रन्थिविभेदिनी।
मणिपूरान्तरुदिता विष्णुग्रन्थिविभेदिनी ॥८६॥

मूलाधारैकनिलया=मूलाधार में है स्थिति जिसकी—

या मूलाधार में निवास करनेवाली जैसे षट्चक्र वर्णन में आया है—

तस्योर्ध्वे बिसतन्तुसोदरकला सूक्ष्मा जगन्मोहिनी। ब्रह्मद्वारमुखं मुखेन मधुरं सञ्छादयन्ती स्वयम्। शंखावर्तनिभा नवीन चपला मालाविलासास्पदा सुप्ता सर्वसमा शिवोपरिलसत्सार्धत्रिवृत्ताकृतिः।

मूलाधाराख्य—जो चतुर्दल का कमल है उसकी कर्णिका के बीच में जो बिन्दु है उसका नाम कुलकुण्ड है, उसमें अपने मुख को आच्छादन करके कुण्डलिनी सोये हुए सर्प के समान रहती है। यह सुषुम्ना का मूलस्थान है इसमें (षट्चक्र में)।

मूलाधार में इसका स्थान है एक चक्र का आरम्भ और दूसरे का अन्त। जैसे, मूलाधार का आरम्भ और स्वाधिष्ठान का अन्त। इस प्रकार ब्रह्मग्रन्थि को भेदन करके प्रगट करनेवाली यह है।

नाभि में जो दशदल का कमल है वह मणिपूर है। देवी यहां पर मणियों से खचित है। उसके अन्दर जो ग्रन्थि है उसे

भेद कर जो भगवती कुण्डलिनी उद्भूत होती है। मणिपूर में जो ग्रन्थि है उसे विष्णुग्रन्थि कहते हैं।

आज्ञाचक्रान्तरालस्था रुद्रग्रन्थिविभेदिनी।
सहस्राराम्बुजारूढा सुधासाराभिवर्षिणी ॥६०॥

भ्रूमध्य में जो दो दल हैं उसे आज्ञाचक्र कहते हैं जो आज्ञा-चक्र में ध्यान करते है उनका सभी भृत्यवर्ग कहा माना करते हैं। इसमें श्रीगुरु की स्थिति है इसीलिये इसे आज्ञाचक्र कहा गया है। मन के निग्रह के अभ्यास से इसके ज्ञान की अभि-व्यक्ति होती है और रुद्रग्रन्थि का भेदन होता है। तब सुषुम्ना सहस्रार में जाती है।

श्रीविद्याके चार खण्ड है, आग्नेय, सौर, सौम्य और चन्द्रकला इसमें यथाक्रम, वाग्भव, कामराज, शक्ति और तुरीय कूट हैं। इनके बीच में तीन हृल्लेखायें हैं वह तीनों क्रम से ब्रह्मग्रन्थि, विष्णु ग्रन्थि और रुद्रग्रन्थि नामसे कही गयी हैं। वस्तु-तस्तु मूलाधारादिक जो छै चक्र है उन्हें दत्तात्रेय संहिता में कुल कहा है और जो तीन मूर्त ग्रन्थियाँ है उन्हें तीन देवी चक्र कहा है पृथ्वी, जल इसे ब्रह्मग्रन्थि कहा है वन्हि और सूर्य का संयोग इसे विष्णुग्रन्थि कहा है। वायु और आकाश का संयोग रुद्रग्रन्थि कहा गया है। सहस्रदल इसके आरा हैं इसकी कर्णिकाओं में अमृत जो स्रवण होता है इसे सहस्रदल कहते हैं यह भगवती का स्थान है यहां शिव के साथ वह विहार करती है।

तडिल्लतासमरुचिः षट्चक्रोपरि संस्थिता ।
महासक्तिः कुण्डलिनी बिसतन्तुतनीयसी ॥६१॥

सुधा सहस्रदल कमल में हज़ारदल वाले में अमृत की धारा वरसानेवाली विद्युत् प्रभा की तरह भासुर कान्तिवाली छः चक्र मूलाधार स्वाधिष्ठान मणिपूरादि पर रहनेवाली।

महान् शक्ति जो कुण्डलनी है जो प्रसुप्त भुजगाकार त्रिरावृता सुषुम्ना के बीच में रहनेवाली जैसे आया है—

"सुषुम्नामध्ये देशे सा यदा कर्णद्वयस्य तु पिधाय न शृणोत्यन्य ध्वनिं तदा तस्य मृतिः।

यह कुण्डलिनी जीव शक्ति है। अंगूठे से कर्णों को बन्द करने से यदि शब्द सुनाई नहीं दे तो समझना कि जीवन समाप्त हो गया। इसी प्रकार योग वाशिष्ठ में चूडाल के उपाख्यान में आया है—

"पूर्यष्टका पराख्यस्य मनसोजीवनात्मिकाम्।"
वृद्धिकुण्डलिनीमन्तरामोदस्येव मंजरी॥

महा वाग्भव वीज की कुण्डलिनी संज्ञा है विसतन्तु कमलनाल के तन्तु के समान सूक्ष्म है। श्रुति में आया है—निवारसुक-वतूतन्वी पीताभास्वदणुप्रभा। यहां कुण्डलिनी का वर्णन आया है। कुलामृत से प्रारंभ का विसतन्तु तनीयसि कहकर कुण्डलिनी के स्वरूप को स्पष्ट लिखा है। जैसे इसीका विशदीकरण आया है।

भुजगाकाररूपेण मूलाधारं समाश्रिता।

भवानी भावनागम्या भवारण्यकुठारिका ।
भद्रप्रिया भद्रमूर्तिर्भक्तिसौभाग्यदायिनी ॥६२॥

भवं—महादेवं संसारं कामं वा आनयतीति भवानी ।

महादेव, संसार वा इच्छा शक्ति को जीवन देनेवाली को भवानी कहते हैं । देवीपुराण में इसका ऐसा वर्णन आया है ।

रुद्रो भवोभवः कामो भवसंसार सागरः ।
तत्प्राणनादियं देवीभवानीति प्रकीर्तिता ॥

या—

जड़मूर्तेः परमेश्वरस्य भवइतिसञ्ज्ञा तस्यपत्नी उषानाम्नी । लिङ्गपुराण में इसका वर्णन इस प्रकार आया है—

भव इत्युच्यते देवैर्भगवान् वेदवादिभिः ।
संजीवनेन लोकानां भवस्य परमात्मनः ॥
उषा संकीर्तिता भार्या सुतः शुक्रस्यसूरिभिः ।

वायुपुराण में भी—

भवस्य या द्वितीया तु तनुरापःस्मृतीतिवै ।
तस्योषानामिकापत्नी पुत्रश्चाप्यसुनास्मृतः ॥

भव शब्द का निर्वचन भी यहां पर किया गया है :—

यस्माद्भवन्ति भूतानि ताभ्यस्ताभावयन्तिच ।
भावनाद्भावना चैव भूतानां स भवः स्मृतः ॥

भवानी=जीवनरूप जो भावना करनेवाली शक्ति से भवानी शब्द बना । भावना दो प्रकार की होती है शाब्दी भावना और

आर्थी भावना। शाब्दी भावना वैदिक शब्द में उच्छ्वास योग और क्षेम के लिये आये हैं, जो ईश्वर की इच्छा है उसे शाब्दी भावना कहते हैं। आर्थी भावना कहते हैं प्रवृत्ति रूप उरू भावना को जिसने गम्य को निर्देश करते हैं। कूर्मपुराण में आयाहै—

ब्राह्मी माहेश्वरी चैव तथैवाक्षरभावना।
तिस्रस्तु भावना रुद्रे वर्तन्ते सततं द्विज॥

इसके आगे विशदीकरण किया है—

त्रिविधां भावनां ब्रह्म प्रोच्यमानां निबोध मे।
एका मद्विषया तत्र द्वितीयाव्यक्तसंश्रया॥
अनया तु सगुणा ब्राह्मी विज्ञेया त्रिगुणा त्रिधा।

इन भावनाओं से जो गम्य है उसे भवानी कहते हैं।

भावना गम्य ...

भवारण्य कुठारका—=भव=संसार जो अतिगहन अरण्य है उसे नाश करने के लिये कुठारका अर्थात् जन्म-मरणरूपी दुःख जिससे दूर हो जाते हैं।

भद्रप्रिया—गजविशेष का नाम भद्र है। भव्यमूर्ति स्वरुप ब्रह्म मंगलमूर्ति वह जिसे प्रिय है।

भक्तों को सौभाग्य देनेवाली। पद्मपुराण में आया है।

इक्षवस्तरुराजश्च निष्पावा जीरधानके।
विकारवच्च गोक्षीरं कौसुम्भं कुसुमन्तथा।
लवणं चाष्टमन्तद्वत सौभाग्याष्टकमुच्यते॥

भक्तिप्रिया भक्तिगम्या भक्तिवश्या भयापहा।
शाम्भवी शारदाराध्या शर्वाणी शर्मदायिनी॥६३॥

ये मङ्गल कार्य के उपलक्षण हैं—

भक्तिप्रिया—भक्ति से प्रसन्न होनेवाली। भक्ति दो प्रकार की होती है मुख्य और गौण। ईश्वर के विषय में जो चित्तवृत्तियों का अनुराग है उसका नाम है मुख्य भक्ति ; जैसा, शाण्डिल्य ने कहा है—"सापरानुरक्तिरीश्वरे"। यहां परा शब्द का अभिप्राय है मुख्य।

गौणी—समाधि की सिद्धि अर्थात् गौणी भक्ति सेवारूप भक्ति है। गरुड़पुराण में आया है—

भज इत्येष वै धातुः सेवायां परिकीर्तितः।
तस्य सेवा बुधैः प्रोक्ता भक्तिःसाधनभूयसी ॥

गौणी=इसके भेद स्मरणकीर्त्तनादि वहुत हैं। किसी ने इसके आठ किसी ने नौ और किसी ने दश भेद बतलाये हैं। इस प्रकार भक्तिपदार्थ जिसे प्रिय है वह भक्तिप्रिया भगवती है। आराधन करने से जिसका प्रत्यक्ष साक्षात्कार हो वह भक्तिप्रिया है। जैसे श्रुति में आया है—

पराञ्चि खानि व्यतृणत्स्वयम्भूः।
तस्मात्पराङ्पश्यतिनान्तरात्मन् ॥
कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षत्।
आवृत्तचक्षुरमृतत्वमिच्छन् ॥

इस प्रकार भक्ति का आराधन बतलाया है। स्मृति में आया है—

योगिनस्तं प्रपश्यन्ति भगवन्तं सनातनम् ।

योगसूत्र में भी आया है ।

"ईश्वरप्रणिधानाद्वा ।"

"भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप ॥"

यह प्रवेष्टुं शब्द ब्रह्मीभाव या मोक्ष का प्रतिपादक है । जैसे, आगे व्याख्यान किया गया है । "ब्रह्मसंस्थोऽमृतत्वमेति ।"

उत्तर मीमांसा में भी आया है—

"तन्निष्ठस्य मोक्षोपदेशात" इति ।

अर्थात् ब्रह्म में निष्ठा करनेवाला ही मोक्ष का अधिकारी है । भक्ति - भक्ति का जो लक्षण है उससे उसका बोध होता है । त्रिशतीतन्त्र में कहा है —

देवी की भक्ति ।

भयापहा—भय को दूर करनेवाली है । जैसे वेद में आया है—"आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्न बिभेति कुतश्च न" ब्रह्मानन्द का जब अनुभव हो जाता है तब उस व्यक्ति को जननमरण का कोई भय नहीं होता है ।

वायु—

अरण्ये प्रान्तरे वाऽपि जले वाऽपि स्थलेऽपि वा ।
व्याघ्रकुम्भीरिचौरेभ्यो भयस्थाने विशेषतः ॥
आधिष्वपि च सर्वेषु देवीनामानि कीर्त्तयेत् ।

इसके नाम कीर्तन से ही भय दूर हो जाता है। मार्कण्डे
पुराण में—

दुर्गे! स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः।

आप स्मरण करते ही सम्पूर्ण जन्तुओं का भय दूर करती है

शाम्भवी—शम्भु की शक्ति। शाम्भव जो लोग हैं उन
माता। योगशास्त्र में आया है—अन्तर्लक्ष्यं बहिर्दृष्टिर्निमेषोन्मे
वर्जिता। एषा सा शाम्भवीमुद्रा सर्वतन्त्रेषु गोपिता।"

आंख खुली है लक्ष्य अन्तः है।

कल्पसूत्र में भी आया है—

शाम्भवी दीक्षा बताते हैं—

दीक्षास्तिस्रः—शक्ति, शाम्भवी मान्त्रिकीचेति। देवीभागव
में कन्याका नाम भी शाम्भवी आया है—"अष्टवर्षा च शाम्भवी

शारदाराध्या=नवरात्र शरद् ऋतु में आराधन करने से प्रस
होती हैं—मार्कण्डेयपुराण—"शरत्काले महापूजा क्रियते या
वार्षिकी।" जैसे इसमें भी आया है।

शरत्काले पुरा यस्या नवम्यां बोधितासुरैः।
शारदा सा समाख्याता पीठे लोके च नामतः॥

शर्वाणी=शर्वस्य शक्तिः शर्वाणी। लिङ्गपुराण में आया है।

चराचराणां भूतानां धाता विश्वम्भरात्मकः।
शर्व इत्युच्यते देव सर्वशास्त्रार्थपारगैः॥
विश्वम्भरात्मनस्तस्य शर्वस्य परमेष्ठिनः।
सुकेशीत्युच्यते पत्नी तनुजोऽङ्गारकःस्मृतः॥

शर्मदायिनी=सुखं, कल्याण को मङ्गल को देनेवाला जिसका शील है वह शर्मदायिनी यही देवीभागवत में आया है।

सुखं ददाति भक्तेभ्यस्तेनैषा शर्मदायिनी।

भक्तों को जो सुख देती है अतः शर्मदायिनी है।

शांकरी श्रीकरी साध्वी शरच्चन्द्रनिभानना।
शातोदरी शान्तिमती निराधारा निरञ्जना॥६४॥

शांकरी=शं=सुखं तस्यकरी। शंकर की शक्ति सुख शक्ति को कहते हैं।

कालिकापुराण में आया है—

प्रतिसर्गादिमध्यान्तमहं शंम्भुं निराकुलम्।
स्त्रीरूपेणानुयास्यामि प्राप्यदक्षादहंतनुम्॥
ततस्तु विष्णुमायां मां योगनिद्रां जगन्मयीम्।
शांकरीति स्तुविष्यन्ति रुद्राणीति दिवौकसः॥

श्रियः करी=श्रीकरी=श्रीकर विष्णु की शक्ति को श्रीकरी कहते हैं। "श्रीधरः श्रीकरः श्रीमान्" यह विष्णुसहस्रनाम में आया है।

साध्वीः—भगवती पार्वती इन्हीं का नाम सती पतिव्रता कहा गया है। सौन्दयलहरी में आया है।

कलत्रं वैधात्रं कति कति भजन्तीह कवयः।
श्रियोदेव्या को वा न भवति पतिः कैरपिधनैः॥

महादेवं हित्वा तव सती सतीनामचरमे ।
कुचाभ्यामासंगकुरभकतरो रक्तसुलभः ॥

शरच्चन्द्रनिभानना=शरत्कालीन चन्द्रमाके तुल्य जिसकामुख

शातोदरी=शातोदरस्य—अनन्तगुहस्यइयम् हिमालय लड़की ।

शान्तिमती=शान्ति जिसमें हैं अर्थात् भक्तों को शा देनेवाली ।

निराधारा=निर्गत आधार ।

सारे संसार के आधारभूत । निराधार पूजा को भी कहते जिसका वर्णन सूतसंहिता में आता है :—

वाह्याभ्यन्तरभेदेन द्वैविध्यमुक्त्वा ।
साधारा च निराधारा निराधारा महत्तरा ॥
साधारा या तु साधारा निराधारा तु सम्विधिः ।
आधारे वर्णसंक्लप्त विग्रहे परमेश्वरीम् ॥
आराधयेदतिप्रीत्या गुरुणोक्तेन वर्त्मना ।
या पूजासम्विधिः प्रोक्ता सा तु तस्यांमनोदयः ॥
अतः संसारनाशाय साक्षिणीमात्मरूपिणीम् ।
आराधयेत्परांशक्तिं प्रपञ्चोल्लासवर्जिताम् ॥

निरञ्जना जिसमें कोई मल नहीं है। निरञ्जना=नि मञ्जनं मलः यस्याः सा निरवद्यं निरञ्जनं यह ब्रह्मका वा है (अविद्या के सम्पर्क से रहित) मिथ्या रूप जो अविद्य उससे रहित ।

जिसका किसी में राग नहीं है रक्तिमा नहीं है।

निर्लेपा निर्मला नित्या निराकारा निराकुला।
निर्गुणा निष्कला शान्ता निष्कामा निरुपप्लवा ॥६५॥

निर्लेपा—जिससें कोई कर्म बन्धन का लेप नहीं हैं। जो कर्म बन्धन के लेप से रहित है।

गीता में आया है—

"न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा"

यहां वैभव खण्ड में भी आया है।

कर्मभिः सकलैरपि लिप्यते ब्रह्मवित्परश्चनसर्वथा पद्मपत्रमिवाम्भसा। "लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा।" श्रीगीता

निर्मला—आणव जो मल है उससे रहित अर्थात् नित्यमुक्त।

नित्या=नित्य रहनेवाली कालत्रयावाधित स्थिति सम्पन्न।

निराकार=गुण के संयोग से जो आकार बनते हैं उससे पृथक्। जैसे विष्णुपुराण में आया है।

स वै न देवासुरमर्त्य तिर्यङ् न स्त्री न पण्ढो न पुमान्न जन्तुः।
नायं गुणः कर्म न सन्नचासन् निषेधशेपोजयतादशेषः॥

निराकुला—प्रलयकाल में भी आकुल नहीं होनेवाली, नित्य प्रफुल्ल रहनेवाली।

निर्गुणा—सत्त्वरज माया के गुणों से रहित शुद्ध ब्रह्मस्वरूपा।

निष्कला—"निष्कलं निष्क्रियं शान्तं उपनिषद्।" जिसमें कोई कलना (हलचल) नहीं होती है।

शान्ता=सत्यस्वरूप निष्कामा जिसमें इच्छा नहीं है क्योंकि सम्पूर्ण कामना उन्हें प्राप्त है। जैसे—

"अवाप्त कामस्य कृतात्मनश्च।
इहैव सर्वे प्रविशन्ति कामाः॥"

"न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिपुलोकेषु किञ्चन।
नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि॥"

अवाप्त काम कोई कामना नहीं रहती है। जिसके लिये "पूर्णमदः पूर्णमिदं" आया है।

निरुपप्लवा=उपप्लव=नाश उससे रहित जो नित्य मुक्तस्वरूप है।

नित्यमुक्ता निर्विकारा निष्प्रपंचा निराश्रया।
नित्यशुद्धा नित्यबुद्धा निरवद्या निरन्तरा॥६६॥

नित्यमुक्ता – मोक्षस्वरूपिणी।

निर्विकारा—विकार रहित जैसे सांख्यतत्वकौमुदी में आया है।

मूल प्रकृतिरविकृतिर्महदाद्या-
प्रकृतिविकृतयः सप्त।
षोडशकस्तु विकारो
न प्रकृतिर्नविकृतिः पुरुषः॥

निष्प्रपंचा—प्रपंच रहित। जैसे उपनिषद् में आया है—

"प्रपंचोपशमं शिवं शान्तमद्वैतम्।"

निराश्रया—जिसका किसी पर आश्रय नहीं।

नित्यशुद्धा—कालत्रय में शुद्ध, जैसे—

अत्यन्त मलिनो देहो देही चात्यन्तनिर्मलः।
उभयोरन्तरं ज्ञात्वा कल्पसिद्धि र्भविष्यति ॥

नित्यबुद्धा—नित्य ज्ञानस्वरूप "सत्यंज्ञानमनन्तं" ब्रह्म।

निरवद्या—नरकादि दुःख जिसमें नहीं है। जैसे कूर्म पुराण में आया है—

तस्मादहर्निशं देवीं संस्मरेत् पुरुषो यदि।
न याति बन्धं नरकं संक्षीणाशेषपातकः ॥

निरन्तरा—जिसमें अवकाश की अवधि का भेद नहीं है अर्थात् एक रूपा है। जैसे उपनिषद् में आया है—

एतस्मिन्नुदरमन्तरं कुरुते अथ तस्यभयं भवति।

निष्कारणा निष्कलङ्का निरुपाधिर्निरीश्वरा।
नीरागा रागमथनी निर्मदा मदनाशिनी ॥६७॥

निष्कारणा—सब का कारणभूत जिसका कोई और कारण नहीं। यथा—

न तस्य कार्यं करणं च विद्यते
स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च।
सकारणं करणाधिपाधिपो
न चास्य कश्चित् जनिता न चाधिपः ॥

निष्कलङ्का—कलङ्कं पापं पापरहिता। यथा; "श्रुतिशुद्धमपाप विद्धम्।"

निरुपाधिः—जो उपाधि रहित हो।

निरीश्वरा—जिस पर कोई अन्य नियन्त्रण करनेवाल नहीं है।

नीरागा—जिसमें से राग द्वेष निकल गये हों। अर्थात् रागद्वेष रहित हो।

रागमथिनी—रागद्वेष अभिनिवेशादि क्लेशों को दूर करने वाली।

निर्मदा—जिसमें किसी प्रकार का मद (अभिमान) न हो।

मदनाशिनी—मदं धत्तूरं अश्नाति।

जो मद धत्तूर को खानेवाली। काम क्रोधादि जन्य जो मद हैं उनको नाश करनेवाली।

निश्चिन्ता निरहङ्कारा निर्मोहा मोहनाशिनी।
निर्ममा ममताहन्त्री निष्पापा पापनाशिनी ॥६८॥

निश्चिन्ता—दुःखजनक जो स्मृति है उससे मुक्त। जैसे कहा है—

"चिन्ता चिता समा ज्ञेया चिन्ता वै विन्दुनाधिका।
चिता दहति निर्जीवं चिन्ता दहति जीवितम्॥"

निरहङ्कारा—अहङ्कार जो देहाध्यास है उससे मुक्त।

निर्मोहा—मोह जो अज्ञान है उससे रहित।

मोहनाशिनी—मोह जो अज्ञान है उसको नाश करनेवाली।

निर्ममा—ममता से रहित।

ममताहन्त्री—ममता को दूर करनेवाली।

जैसे—

"स्वकर्मव्याघ्रेण स्फुरति निजकालादि महसा। समाघ्रातः साक्षाच्छरणरहिते संसृतिवने। प्रिया मे पुत्रो मे द्रविणमपि मे मे गृहमिदं, वदन्नेवं मे मे पशुरिव जनो याति मरणम्।"

ममता विशिष्ट मनुष्य पशु की तरह मारा जाता है।

निष्पापा—पापरहिता।

पापनाशिनी—पापों को नाश करनेवाली। जैसे देवी-भागवत में आया है—

प्रणम्य शिरसा देवीं न सपापैर्विलिप्यते।
सर्वावस्थांगतोऽवापि मुक्तो वा सर्वपातकैः॥
दुर्गां दृष्ट्वा नरः पूतः प्रयाति परमं पदम्।

निष्क्रोधा क्रोधशमनी निर्लोभा लोभनाशिनी।
निःसंशया संशयघ्नी निर्भवा भवनाशिनी ॥६६॥

निष्क्रोधा—भक्तों के अरिषट् वर्ग को शमन करनेवाली अर्थात् नाश करनेवाली। क्रोध जो है वह सर्वस्व नाश करनेवाला होता है। जैसे गीता में—

क्रोधाद् भवति संमोहः संमोहात् स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति॥

जैसे लिखा है—

क्रोधयुक्तो यज्जपति यज्जुहोति यदर्च्चति ।
स तस्य हरते सर्वमामकुम्भो यथोदकम् ।।

निर्लोभा—लोभरहित क्योंकि लोभ भक्तों को नाश करता है।

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ।।

लोभनाशिनी—लोभ को नाश करनेवाली ।

निःसंशया—जिसमें कोई सन्देह नहीं है । जैसे—

"छिद्यन्ते सर्वसंशयाः"

निर्भवा—उत्पत्तिरहिता । यथा—

अनादिमत् परंब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते ।

भवनाशिनी—भवं संसारं नाशयति या सा—जन्म-मरण को नाश करनेवाली। जैसे शक्ति रहस्य में—

"नवम्यां शुक्लपक्षे तु विधिवत् चण्डिकां नृपः ।
घृतेन स्नापयेद्यस्तु तस्य पुण्यफलं शृणु ।।
दशपूर्वान्दशापरानात्मानञ्चविशेषतः ।
भवार्णवात् समुद्धृत्य दुर्गालोके महीयते ।।"

निर्विकल्पा निराबाधा निर्भेदा भेदनाशिनी ।
निर्नाशा मृत्युमथनी निष्क्रिया निष्परिग्रहा ।।१००।।

निर्विकल्पा—जिसमें कोई विकल्प नहीं है ।

निराबाधा—बाधारहित ।

निर्भेदा—भेदरहित। यथा, "सर्वंखल्विदंब्रह्म।"

यथा कूर्मपुराण में—

"त्वमस्ति परमा शक्तिरनन्ता परमेष्ठिनी।
सर्वभेदविनिर्मुक्ता सर्वभेदविनाशिनी॥

भेदनाशिनी—सब भेदों को नाश करनेवाली।

जैसे, "सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म।"

निर्नाशा—भक्तों को मृत्यु पाश से छुड़ानेवाली।

मृत्युमथनी—अमृत स्वरूपा।

निष्क्रिया—क्रिया रहित।

निष्परिग्रहा—परिग्रह से रहित। एकाकी। एकमेवाद्विती-यं ब्रह्म।

निस्तुला नीलचिकुरा निरपाया निरत्यया।
दुर्लभा दुर्गमा दुर्गा दुःखहन्त्री सुखप्रदा॥१०१॥

निस्तुला—कोई भी पदार्थ ऐसा उपलब्ध नहीं जिसके साथ इसकी तुलना की जाय।

नीलचिकुरा जिसके चिकुर=कुन्तल=केश नीले हैं।

निरपाया—नाशरहित।

निरत्यया—अत्ययो अतिक्रमः। अतिक्रम से रहित।

दुर्लभा—योगिनामपि असाध्या योगियों के लिये भी अगम्य।

दुर्गमा—दुःखेन प्राप्यते क्लेशेनाप्यधिगन्तुमशक्या—क्लेश से प्राप्त होने योग्य।

दुर्गम एक राक्षस का नाम था उसे मारने से भी इसको दुर्गमा कहते हैं।

मार्कण्डेयपुराण में—

अत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्यं महासुरम्।
दुर्गा देवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति॥

दुःखहन्त्री—दुःखों को नाश करनेवाली। यथा—

दुर्गे स्मृताहरसिभीतिमशेषजन्तोः।

जिसके स्मरण करने से दुःख नाश हो जाते हैं। जनन और मरणरूपी दुःख नाश करनेवाली।

सुखप्रदा—ऐहिक आयुष्मिक कैवल्य जो सुख है उन्हें देने वाली। जैसे—

"श्रीसुन्दरीसेवनतत्पराणां भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव।"
उपनिषद् "रसङ्ध एवायं लब्ध्वा आनन्दीभवति।"

दुष्टदूरा दुराचारशमनी दोषवर्जिता।
सर्वज्ञा सान्द्रकरुणा समानाधिकवर्जिता॥१०२॥

दुष्टदूरा—दोषवाले (पापियों) को अप्राप्त 'न भजन्तिकुतर्कज्ञा देवीं विश्वेश्वरीं शिवाम्।'

दुराचारशमनी—शास्त्रविरुद्धाचार को शमन कर लेती है।

अपनी उपासना करनेवालों का नित्यकर्मानुष्ठनादि के प्रत्यवा-यादि अकरण दोष दूर हो जाते हैं।

नित्यकर्माननुष्ठानान्निषिद्धकरणादपि।
यत्पापं जायतेपुंसांतत्सर्वं नश्यति द्रुतम् ॥

दोषवर्जिता—रागद्वेषाभिनिवेश से वर्जित।

सर्वज्ञा—सर्वं जानातीति सर्वज्ञा "यः सर्वज्ञः स सर्ववित्" श्रुति में आता है।

सान्द्रकरुणा—जिसकी करुणा बहुत महती है। माता पुत्र पर नैसर्गिकी सान्द्रकरुणा करती है।

कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।

समानाधिकवर्जिता—समान और अधिक से वर्जित न कोई उस भगवती के समान है और न कोई उससे अधिक है।

सर्वशक्तिमयी सर्वमङ्गला सद्गतिप्रदा।
सर्वेश्वरी सर्वमयी सर्वमन्त्रस्वरूपिणी ॥१०३॥

सर्वशक्तिमयी—सम्पूर्ण देवतावृन्द की शक्ति का समूह स्वरूपा है। जैसा पञ्चरात्र लक्ष्मीतन्त्र में आया है—

महालक्ष्मीरहंशक्र पुनः स्वायंभुवेऽन्तरे।
हिताय सर्वदेवानां जाता महिषमर्दिनी ॥
मदीया शक्तिलेशा ये तत्तद्देवशरीरगाः।
आयुधानि च देवानां यानि यानि सुरेश्वर ॥
मच्छक्तयस्तदाकाराः आयुधानितदाऽभवत्।

अर्थात् सब प्रकारकी आधिभौतिक, आधिदैविक, आध्यात्मि[illegible] वैज्ञानिक, आर्थिक और नैतिक आदि सम्पूर्ण शक्तियां भक्ति क[illegible] आराधना से उपलब्ध हो जाती हैं।

सर्वमङ्गला—सब प्रकार के मङ्गल को देनेवाली जैसे दे[illegible] भागवत में आया है—

शोभनानि च श्रेष्ठानि या देवी ददते हरेः।
भक्तानामार्तिहरणी तेनेयं सर्वमङ्गला ॥

सद्गतिप्रदा—ब्रह्म की गति को देनेवाली।

सैषा प्रसन्ना वरदा नृणाम्भवति मुक्तये।

इस भगवती की प्रसन्नता में मोक्षरूपी सद्गति प्रा[illegible] होती है।

त्रिकालं पूजयेद्यस्तु चतुर्दश्यां नराधिप।
स गच्छति परं स्थानं यत्र देवी व्यवस्थिता ॥

सर्वेश्वरी—सब की स्वामिनी, सब पर अनुशासन करने[illegible] वाली। ब्रह्मा आदि देवता वायु आदि पञ्चभूत सब पर शासन करनेवाली।

सर्वमयी—पृथिव्यादि जितने तत्त्व हैं उन सब में मिली हुई[illegible]

सर्वमन्त्रस्वरूपिणी—जितने मन्त्र हैं वे हैं जिसके स्वरूप जैसे लिखा है—"मन्त्रात्मका हि देवाः।"

सर्वयन्त्रात्मिका सर्वतन्त्ररूपा मनोन्मनी।
माहेश्वरी महादेवी महालक्ष्मी मृडप्रिया ॥१०४॥

सर्वयन्त्रात्मिका—सम्पूर्ण जितने यन्त्र हैं वे ही जिसके स्वरूप हैं। अर्थात् सम्पूर्ण प्राणियोंका यन्त्रारूढवत् परिचालन करनेवाली।

सर्वतन्त्ररूपा—सम्पूर्ण तन्त्रों ने जिसका निरूपण किया है। जैसे कहा है—रघुवंश के दशम सर्ग में।

बहुधाऽप्यागमैर्भिन्नाः पन्थानः सिद्धिहेतवः।
त्वय्येव निपतन्त्येते स्रोतस्विन्य इवार्णवे॥

इस प्रकार साधक को भगवती का तन्त्रात्मक रूप का चिन्तन करना बताया है।

मनोन्मनी—मन को लय करनेवाली।

जैसे कहा है—

भ्रूमध्यादष्टमं स्थानं ब्रह्मरन्ध्रादधस्तनं।
मनोन्मनीति कथिता तद्रूपा परमेश्वरी॥

मनोन्मनीरूपा शिव की शक्ति है। जैसे—त्रिपुरोपनिषद् में आया है।

निरस्तविषयासङ्गं सन्निरुद्धं मनोहृदि।
यदा यात्युन्मनीभावं तदा तत्परमं पदम्॥

उन्मनी योगशास्त्र में एक मुद्रा का नाम कहा गया है। जैसे आया है—

नेत्रे ययोन्मेषनिमेषयुक्ते
वायुर्यथावर्जितरेचपूरः।
मनश्चसंकल्पविकल्पशून्यं
मनोन्मयी सा मयि सन्निधत्ताम्।

ध्यान ध्यातृ ध्येय भाव जिस अवस्था में एक हो जाता है उसे मनोन्मयी अवस्था कहते हैं।

माहेश्वरी=त्रिगुणातीत महेश्वर की शक्ति। जैसे महेश्वर का स्वरूप आया है। लिङ्गपुराण में—

तमसा कालरुद्राख्यः रजसा कनकाण्डजः।
सत्त्वेनसर्वगोविष्णुः नैर्गुण्येन महेश्वरः॥

महेश्वर की शक्ति—अर्थात् महेश्वर स्वरूप जो आत्मा है उसकी शक्ति।

महादेवी—महती च सा देवी च महादेवी स्वयं महादेवी। महा=प्रमाण से अगम्य जिसका शरीर है वह महा। जैसे देवीपुराण में आया है—

बृहदस्य शरीरं यदप्रमेयं प्रमाणतः।
धातुर्महेति पूजायां महादेवी ततःस्मृता॥
सोमात्मको बुधैर्देवो महादेव इति स्मृतः।
सोमात्मकस्य देवस्य महादेवस्य सूरिभिः॥

"शालग्रामे महादेवी" देवी के तीर्थों के वर्णन महालक्ष्मी में आता है।

महालक्ष्मी—महती च सा लक्ष्मीः महाविष्णु की शक्ति-स्वरूपा। तन्त्र में इसका वर्णन आया है—

महालल्लामकं देवं सखि क्षपयतीति च।
महालसा महालक्ष्मीरिति च ख्यातिमागताः॥

मार्कण्डेयपुराण में आया है—

सर्वस्याद्या महालक्ष्मीस्त्रिगुणा सा व्यवस्थिता ।

धौम्य ने त्रयोदश वर्षकी कन्या को महालक्ष्मी कहा है। त्रयोदशे महालक्ष्मीः ।

"मृडप्रिया" मृड कहते हैं सुख को। सुखरूपी जो शिव है उसकी सुखरूपिणी शक्ति। जैसे महिम्नस्तोत्र में आया है—

"जनसुखकृते सत्त्वोद्रिक्तौ मृडाय नमोनमः ।"

महारूपा महापूज्या महापातकनाशिनी ।
महामाया महासत्त्वा महाशक्तिर्महारतिः ॥१०५॥

महारूपा—महान् जो पुरुष है।

विराट रूप को धारण करनेवाली। महापूज्या बड़ी पूजा के योग्य अर्थात् ब्रह्मादि शिव पर्यन्त सब की पूजा के योग्य। सब देवता आपकी पूजा करते हैं।

महापातकनाशिनी—ब्रह्महत्यादिक जो घोर पाप हैं उनका नाश करनेवाली।

कृतस्याखिलपापस्य ज्ञानतोऽज्ञानतोऽपिवा ।
प्रायश्चित्तं परं प्रोक्तं परास्मृतेःपदस्मृतिः ॥

अर्थात् भगवती के पादचरणों को स्मरण करने से ही सब पाप दूर हो जाते हैं।

महामाया—सारे संसार को विष्णु आदि को बोध करनेवाली शक्ति को महामाया कहा है।

मार्कण्डेयपुराण में आया है—

"ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ।"
बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति ॥

तन्त्रान्तर में—

आमोद युक्तं व्यसनासक्तं जन्तुं करोति या ।
महामायेति सम्प्रोक्ता तेन सा जगदीश्वरी ॥

महासत्त्वा—महान्ति सत्त्वानि यस्याः सा । सम्पूर्ण जगत् का निर्वाह की शक्तिवाली । सारी जगत् का निर्वाह करनेवाली ।

महाशक्तिः—कुण्डलिनीरूपा भगवती महाशक्ति । जैसे श्रुति में आया है—

'न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते ।' जिनसे बड़ी शक्ति कोई नहीं है ।

महारतिः—विषय रति से भी करोड़ों गुणा अधिक प्रीति सम्पन्न । यद्वा कामेश्वर की शक्ति होने से महारति इसे कहते हैं ।

महाभोगा महैश्वर्या महावीर्या महाबला ।
महाबुद्धिर्महासिद्धिर्महायोगेश्वरेश्वरी ॥१०६॥

महाभोगा=सारा ब्रह्माण्ड जिसका भोगस्वरूप है ।

महैश्वर्या=महान् जिसका ऐश्वर्य है ।

महावीर्या=महातेजस्विनी, अद्वितीय पराक्रमशील ।

महाबला=महा बलवाली ।

महाबुद्धिः=महती बुद्धि । जिस बुद्धि के जानने से कोई भी चीज अछूती नहीं रहती अर्थात् जिस भगवती की आराधना से सब ज्ञान हो जाता है ।

महासिद्धि=जिसकी उपासना से अणिमादि सिद्धियाँ प्रगट हो जाती है।

स्कन्दपुराण में आया है—

रसानां स्वत उल्लासः प्रथमा सिद्धिरीरिता।
द्वन्द्वैरनभिभूतश्च द्वितीया सिद्धिरुच्यते॥

अधमोत्तमताभाव स्तृतीया सिद्धिरुत्तमा।
चतुर्थी तुल्यता तेषा मायुषः सुखदुःखयोः॥

कान्तेर्बलस्य वाहुल्यं विशोका नाम पञ्चमी।
परमात्मपरत्वेन तपोध्यानादिनिष्ठता॥

षष्ठी निकामचारित्वं सप्तमीसिद्धिरुच्यते।
अष्टमी च तथा प्रोक्ता यत्र क्वचनशायिता॥

महायोगेश्वरेश्वरी=महतां योगेश्वराणां ईश्वरी। बड़े योगियों को योगशक्ति देनेवाली।

महातन्त्रा महामन्त्रा महायन्त्रा महासना।
महायागक्रमाराध्या महाभैरवपूजिता॥१०७॥

महातन्त्रा=अनेक प्रकार के तन्त्रों का विस्तार करनेवाली। जैसे सौन्दर्यलहरी में आया है—

चतुः षष्ट्यातन्त्रैः सकलमपि सन्धाय भुवनम्।
स्थितःस्तत्तत्सिद्धिः प्रसभपरतन्त्रः पशुपतिः॥

परस्त्वन्निर्बन्धा अखिलपुरुषार्थैकघटना।
स्वतन्त्रंते तन्त्रं क्षितितलमवातीतरदिदम् ।।

महातन्त्रा—महामन्त्र=सम्पूर्ण विद्याओं का श्रीविद्या ही महातन्त्र है। जैसे, नित्यतन्त्र में लिखा है—

'श्रीविद्यैवतु मन्त्राणां'

ललिता विद्यया विद्या मन्यामन्त्रेणवाऽमुना।
यन्त्रमन्यत्समंवेत्ति योऽसौ स्यान्मूढ़चेतनः ।।"

महायन्त्रा=श्री यन्त्रस्वरूपिणी श्रीयन्त्र में सभी यन्त्र आया है।

महासना—क्षित्यादि छब्बीस तत्त्व जिसके आश्रय में है। जैसे आया है—

एषा भगवतीसर्वतत्वान्याश्रित्य।

महाराध्या—महायाग का जो क्रम है उससे आराधना करने के योग्य। ब्रह्मा के अंशभूत अदः अक्षोभ्यादि चतुः षष्टि योगिनी पूजा से इसे महायाग कहते हैं। उस महायाग की जिसको सृष्टि स्थिति पर संहारकारी तत्त्व को महाभैरव कहा है। यह पद्मपुराण में प्रकरण आया है—

"शंभुः पूजयते देवीं मन्त्रशक्तिमयीं शिवाम्।
अक्षमालाङ्कतं धृत्वा न्यासेनैव भवोद्भवः ।।"

महेश्वर महाकल्पमहाताण्डवसाक्षिणी।
महाकामेशमहिषो महात्रिपुरसुन्दरी ।।१०८।।

महेश्वरमहाकल्प महाताण्डवसाक्षिणी—महाप्रलय में विश्व

का उपसंहार करने का जो ताण्डव नृत्य है, लीला है उसमें सिवाय इस शक्ति के और कोई भी समर्थ नहीं है। उस महाताण्डव को संहार की साक्षी देनेवाली आप ही हैं।

पञ्चदशी में आया है—

"कल्पोपसंहरणकल्पितताण्डवस्य।
देवस्य खण्डपरशोः परभैरवस्य॥
पाशांकुशेक्षवशरासनपुष्पवाणैः।
सा साक्षिणी विजयते तवमूर्त्तिरेका॥
एषा संहृत्य सकलं विश्वं क्रीड़ति संक्षये।
लिङ्गानि सर्वशरीराणां स्वशरीरे निवेश्य च॥

महाकामेशमहिषी=महाकामेश=शिव=उसकी कृताभिषेका पट्ट महिषी।

महात्रिपुरसुन्दरी—मातृमानमेयानां त्रयाणां मातृ, मान मेय इन तीनों को अपने में रखनेवाली।

चतुःषष्ट्युपचाराढ्या चतुःषष्टिकलामयी।
महाचतुःषष्टिकोटि योगिनीगणसेविता॥१०६॥

चौसठ जो उपचार हैं उनसे भगवती की पूजा की जाती है जिनका परशुराम ने कल्पसूत्र में वर्णन किया है। इसके अतिरिक्त और भी आठ उपचार तन्त्रों में आये हैं।

यथा—

शिवपादप्रसूनानां धारणं चात्मरोपणम्।

परिवारविसृष्टिश्च गुरुभक्तार्चनं तथा ॥
शैवपुस्तकपूजा च शिवाग्नियजनं ततः ।
शिवपादोदकादानं साङ्गं प्राणाग्निहोत्रकम् ॥
एते चतुःषष्टि युता उपचाराः द्विसप्ततिः ।

चतुःषष्टिकलामयी=चौसठ कला जिसमें है। कथाकोश में आया है—

वैलक्षण्येन गणितास्तान्निष्कृष्य लिख्यन्ते अष्टादशलिपिबोध-स्तल्लेखनशीघ्रवाचनेचित्रम् बहुविधभाषाज्ञानंतत्कविताश्रुतनिगदि-ता द्यूतम् वेदा उपवेदाश्चत्वारः शास्त्राङ्गषट्के द्वे तन्त्रपुराणस्मृतिकं काव्यालङ्कारनाटकादिद्वे शान्तिर्वश्याकर्षण विद्वेषोच्चारणमारणानि षट् । गतिजलवृष्ट्याग्न्यायुधवाग्रेतः स्तम्भसप्तकं शिल्पम् । गजहयरथ नरशिक्षा सामुद्रिकमल्ल सूदगारुडकाः तत्तत् सुशिरानद्धः धनेन्द्रजारनृत्ययगीतरसवादौ रत्नपरीक्षाचौर्यं धातु परीक्षाप्य-दृश्यत्वम् । इति भास्करसुधियोक्तानिष्कृष्यकलाश्चतुःषष्टीति ।

कलाशब्द तन्त्रपरक है। चतुः षष्टितन्त्र में वामकेश्वर तन्त्र में बतलाये हैं जिन्हें हमने सौन्दर्यलहरी के 'चतुःषष्ट्यातन्त्रै' इस श्लोक में प्रतिपादित किया है।

, अक्षोभ्यादिशक्ति अष्टक और महाचतुः षष्टि को योगिनीगण शेखर उनकी स्वामिनी कोटि संख्यक जो गण हैं वे उनके पीछे सेवा में लगे हैं ये श्रीविद्या में चतुषष्टि कला हैं। एक २ में एक-एक करोड़ हैं।

९ नौ त्रैलोक्यमोहिनी (नौ) चक्र है इनमें प्रतिचक्र में भिन्न-भिन्न चतुःषष्टि कोष्ठ्यात्मक संख्यक योगिनीवृन्द रहते हैं। इन्हीं योगिनीओं से जो सेवित है।

मनुविद्या चन्द्रविद्याचन्द्रमण्डलमध्यगा ।
चारुरूपा चारुहासा चारुचन्द्रकलाधरा ॥११०॥

मनुविद्या=भगवती की उपासनामन्वादि ने की थी वही मनुविद्या है। यथा—

मनुचन्द्रःकुबेरश्चलोपामुद्रा च मन्मथः ।
अगस्तिरग्निः सूर्यश्च इन्द्रः स्कन्दः शिवस्तथा ॥
क्रोधभट्टारकोदेव्याः द्वादशामी उपासकाः ।

ये मनुविद्या और चन्द्रविद्या रूपा भगवती स्वयं है।

चन्द्रमण्डलमध्यगा=चन्द्रमण्डल के वीच जानेवाली कुण्डली का सहस्रार्क में चन्द्रभेदन करना है उसे चन्द्रमण्डलमध्यगा वताया है।

शिवपुराण में आता है—

अहमग्निः शिरोनिष्ठः त्वं सोमशिरसि स्थिता ।
अग्निषोमात्मकं विश्वमावाभ्यां सम्प्रतिष्ठितम् ॥

चारुरूपा=रूप लावण्य उत्तम एवं सुन्दर है। जिसका रूप वर्णन सौन्दर्यलहरी में आया है।

"त्वदीयं सौन्दर्यं तुहिनगिरिकन्ये तुलयितुम् ।"

चारुहासा=मन्दस्मित परमानन्द को देनेवाला है।

चारुचन्द्रकलाधरा=स्पृहणीय चन्द्रमा की जो कला है उनको धारण करनेवाली आप हैं।

चराचरजगन्नाथा चक्रराजनिकेतना।
पार्वती पद्मनयना पद्मरागसमप्रभा ॥१११॥

जंगम और स्थावरात्मक जो संसार है उसकी अधीश्वरी।

चक्रराजनिषेविता - त्रैलोक्यमोहनादि जो श्रीचक्र भवयोन्यात्मक निवासस्थान है उसमें निकेतन आपका है।

पार्वती=पर्वतराज की कन्या।

पद्मनयना=पद्मपत्र के समान जिसकी आँखें हैं।।

पद्मरागसमप्रभा=पद्म की अरुणिमा के समान कान्ति जिसकी सम्पन्न है।

पञ्चप्रेतासनासीना पञ्चब्रह्मस्वरूपिणी।
चिन्मयी परमानन्दा विज्ञानघनरूपिणी ॥११२॥

पञ्च=पञ्चप्रेत जो ब्रह्मरुद्रादि हैं उनके ऊपर आसन बनाकर बैठनेवाली।

जैसे ज्ञानार्णव में आया है।

पञ्चप्रेतान् महेशान ब्रूहि तेषान्तु कारणम्।
निर्जीवा अविनाशास्ते नित्यरूपाः कथं वद ॥

इस प्रकार देवी ने पूछा—

साधु पृष्टस्त्वया भद्रे पञ्चप्रेतासनं कथम्।

हे भद्रे आपने उचित प्रश्न किया है कि पांचप्रेत भगवती के आसन क्यों है।

ये पांचप्रेतनिश्चल—

ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और सदाशिव।

पञ्चप्रेता वरारोहे निश्चला एव ते सदा।
वामाशक्तिस्तु सा ज्ञेया ब्रह्मा प्रेतो न संशयः॥
ब्रह्मणः परमेशानी कर्तृत्वे सृष्टिरूपकम्॥
शिवस्य करणं नास्ति शक्तेस्तु करणं यतः।
सदाशिवोमहाप्रेतः केवलोनिश्चलोभवेत्।
शक्त्याविनाकृतोदेवि कथञ्चिदपि न क्षमः॥

पञ्चब्रह्मरूप से स्थित ईशान, तत्पुरुष, अघोर, वामदेव एवं सद्योजात ये पञ्चब्रह्म हैं। ये ही इसके स्वरूप है।

आकाशादि पञ्चभूत को प्रकट करनेवाली यज्ञवैभव में आया है।

एक एव शिवः साक्षात्सत्यज्ञानादिलक्षणः।
विकाररहितः शुद्धः स्वशक्त्या पञ्चधा स्थितः॥

सृष्टि स्थिति आदि पञ्च कृत्य की शक्ति है वह सद्योजातादि पञ्च रूप में हुई है।

चिन्मयी=चिच्छक्तिस्वपिणी अभेद परमोत्कृष्ट आनन्द जिसका स्वरूप परमानन्दा है। "योवै भूमा तत्सुखम्"

विज्ञानघनरूपिणी=विज्ञानघन ही जिसका स्वरूप है।

यो विज्ञाने तिष्ठन्विज्ञान मन्तरोयमयन्तीतिश्रतेः।

विज्ञान में ठहरा हुआ और विज्ञान जिसका अन्तर है उन दोनों का समष्ट्यात्मक रूप विज्ञान रूप हैं।

ध्यानध्यातृध्येयरूपा धर्माधर्मविवर्जिता।
विश्वरूपाजागरिणी स्वपन्तीतेजसात्मिका ॥११३॥

चिन्ता=मानसज्ञान।

प्रत्येकतानता=ध्यानध्यातृध्येय ज्ञानज्ञातृज्ञेयाख्य त्रिपुटी रूपा।

धर्माधर्मविवर्जिता=धर्माधर्म से विवर्जित।

"चोदनालक्षणोधर्मः" किसी कर्तव्य में प्रवृत्ति कराना।

अधर्म=निषिद्धकर्मजन्य जो हैं उसे अधर्म कहते हैं।

धर्माधर्म कहते हैं वन्धमोक्ष उससे वर्जित।

त्रिपुरोपनिषत्—

न निरोधो न चोत्पत्तिर्न वन्धो न च साधकः।
न मुमुक्षुर्नवैमुक्तिरित्येषापरमार्थता।

धर्माधर्मभाव से रहित।

विश्वरूपा=सृष्टिक्रम में पहले जो तम का सर्ग है उसके वाद महत्सर्ग उसके वाद पञ्चतन्मात्रा फिर सूक्ष्मभूतशव्दादि। उनमें पञ्चज्ञान शक्ति, पञ्चक्रियाशक्तियां होती है। उनमें पहले व्यष्टि रूप से श्रोत्रादि ज्ञानेन्द्रिय को वनाती है। समष्टि रूप में अन्तःकरणादि उसमें भी व्यष्टिरूप में वागादि पञ्चेन्द्रिय फिर समष्टि रूप में प्राण को एवं अन्तःकरण को फिर व्यष्टिरूप में वागादि-

करण को उत्पन्न करते हैं। शब्दादि से गगनादि स्थूलभूत पञ्चक होते हैं। व्यष्टिजीवात्मक एवं समष्टि जीवात्मक।

त्रैविध्यमौपनिषदाम्मतम्।

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्ति में ये कृत्य है।

सृष्टि स्थिति और संहार।

सृष्टिरूप में जाग्रदवस्था (जाग्रदवस्था में सृष्टिरूप अर्थात् व्यवहार है)।

विश्वरूपा=सारा विश्व जिसका रूप हो जाता है। जैसे, विष्णुपुराण में आया है।

यथा हि कदलीनामत्वक्पत्रान्यानदृश्यते।
एवं विश्वस्यनान्यत्वंत्वत्स्थादीश्वरदृश्यते॥

देवीभागवत में—

वटपत्रशयानाय विष्णवे बालरूपिणे।
श्लोकार्धेन तदाप्रोक्तं भगवत्याखिलार्थकम्॥
सर्वं खल्विदमेवाहं नान्यदस्तिसनातनम्।

स्वपन्ती तेजसात्मिका=स्वप्नावस्था में तैजस् रूपवाली।

सुप्ता प्रज्ञात्मिका तुर्या सर्वावस्थाविवर्जिता।
सृष्टिकर्त्री ब्रह्मरूपा गोप्त्री गोविन्दरूपिणी॥११४॥

सुप्ता प्रज्ञात्मिका सुषुप्ति दशा में प्रज्ञात्मिका प्रज्ञानघन। सर्वावस्था विवर्जिता तुरीया में स्वप्न, जाग्रत् और सुषुप्ति विश्वतेजस और प्राज्ञ इन सब अवस्थाओं से रहित है।

तुरीयं नाम परंधामतदाभोगश्श्रमत्क्रिया ।
भेदेऽपिजाग्रदादीनां योगिनस्तस्यसम्भवे ॥

व्यष्टि और समष्टि से भिन्न जो अवस्था है वह तुरीयावस्था है। जैसे भगवान् शिव ने कहा है—

प्राणायामादिकं कृत्वा स्थूलोपायं विकल्पकम् ।
अविकल्पकरूपेणस्वचित्तेनस्वसम्विदा ॥

तुरीयावस्था का वर्णन उपनिषदों में इस प्रकार आया है—

"शिवमद्वैतं चतुर्थम्मन्यन्ते स आत्मा स विज्ञेयः"

सौन्दर्यलहरी में—

तुरीया काऽपित्वं दुरधिगमनिःसीममहिमा ।

सुपुप्ति में प्रज्ञारूप में तुर्यावस्था में सुप्ता सब अवस्थाओं से वर्जित ब्रह्मरूपा होकर के वह महामाया सृष्टि का निर्माण करती है और गोविन्द रूप होकर के सृष्टि की रक्षा करती है।

जैसे कि सौन्दर्यलहरी में आया है—

"जगत्सूते धाता हरिरवति रुद्रः क्षपयति ।"

विष्णुपुराण में आया है—

"ब्रह्माविष्णुशिवा ब्रह्मन् प्रधानाद्ब्रह्मशक्तयः"

गोपनं जगतः स्थितिः जगत् की स्थिति करनेवाली।

गोविन्द रूप से भगवती संसार की रक्षा कर रही है। जैसे कि हरिवंश में आया है—

प्रकृत्या प्रथमोभागः उमादेवी यशस्विनी ।
व्यक्तः सर्वमयोविष्णः स्त्रीसंगोलोकभावनः ॥

भागवत में आया है—

अहमिन्द्रो हि देवानां त्वं गवामिन्द्रतां गतः।
गोविन्द इतिनाम्ना त्वांभुवि गास्यन्ति मानवाः ॥

हरिवंश पुराण में इस प्रकार आया है—

गौरीशा तु तथा वाणी तां च विन्दयते भवान्।
गोविन्दस्तु ततोदेव मुनिभिः कथ्यते भवान्॥

संहारिणी रुद्ररूपा तिरोधानकरीश्वरी।
सदाशिवाऽनुग्रहदा पञ्चकृत्यपरायणा॥११५॥

संहारिणी रुद्र रूपा=संहारः—जगत को परमाणु के रूप में सारा ध्वस्त तमोगुणप्रधान सारा ईश्वर है उसमें रुद्रस्वरूपा हैं। हे मातः! संहाराक्रीड़ा में आप रुद्ररूपा हैं—

"रुजं द्रावयतितस्माद्रुद्रः पशुपतिः स्मृतः।"

वेद में—

"प्राणावावरुद्रा एतेहीदं सर्वं रोदयन्तीति॥"

सारे संसार को रुलानेवाली शक्तिरुद्रशक्ति है। रुत् दुःख दुःखके कारण को जो हटाता है उसे रुद्र कहते हैं।

तिरोधानकरीश्वरी=आच्छादन को तिरोधान कहते हैं। परमाणु आदि का प्रकृति में लय को तिरोधान कहते हैं।

जैसे, त्रिपुरासिद्धान्त में आया है—

अभक्तानां च सर्वेषां तिरोधानकरी यतः।
श्रीतिरस्किरणीतस्मात्प्रोक्तासत्यंवरानने॥

तिरोधान और अनुग्रह, बन्ध एवं मोक्ष के नाम है।

पञ्चकृत्यपरायणा—पञ्चकृत्य में लगी हुई। पञ्चकृत्य ये सृष्टि, स्थिति, संहार, तिरोभाव और अनुग्रहकरण।

"जगत् जन्मस्थितिध्वंस तिरोधानैक कारणम्।
भूतभौतिकभावानां नियमस्यैतदेव हि॥"

देवीभागवत में आया है—

सा विश्वं कुरुते कामं सा पालयति पालितम्।
कल्पान्ते संहरत्येव त्रिरूपा विश्वमोहिनी॥
तया युक्तः सृजेद्‌ब्रह्मा विष्णुः पाति तयान्वितः।
रुद्रः संहरते कामं तया सम्मिलितो जगत्॥
सा वध्नातिजगत्कृत्स्नंमायापाशेन मोहितम्।
अहं ममेति पाशेन सुदृढेन नराधिप॥
योगिनोमुक्तसङ्गस्य मुक्तिकामा मुमुक्षवः।
तामेव समुपासन्ते देवीं विश्वेश्वरीं शिवाम्॥

ये पञ्चविधकृत्य यहां प्रतिपादित हैं। सौन्दर्यलहरी में आता है।

जगत्सूतेधाता हरिरवति रुद्रः क्षपयति। इत्यादि।

भानुमण्डलमध्यस्था भैरवी भगमालिनी।
पद्मासना भगवती पद्मनाभसहोदरी॥११६॥

भानु=मध्यस्था—सूर्यमण्डल के बीच में रहनेवाली, क्योंकि सन्ध्या समय में भगवती का ध्यान होता है। जैसे उपनिषद् में आया है।

एषोऽन्तरादित्ये हिरण्मयः पुरुषो दृश्यते ।

भगवती की भानुमण्डल की यह स्थिति है ।

कूर्मपुराण में आया है—

अशेषवेदात्मकमेकवेद्यं स्वतेजसा पूरितलोकभेदम् ।
त्रिलोकहेतुंपरमेष्ठिसंज्ञं नमामि रूपं रविमण्डलस्थम् ।।

भैरवी=भैरवजी की जो शक्ति है उसे (परशिव) भीरूणां स्त्रीणां संहतिः भैरवी । अर्थः शम्भुः शिवा वाणी दिवा शम्भुः शिवा निशा अरुन्धती अनुसूया इन्द्राणी गौरी रूपा विषय प्रगट किया है ।

स्त्रीलिङ्गशब्दवाच्या याः सर्वा गौर्य्या विभूतयः ।

स्त्रीलिङ्ग शब्दवाच्य सम्पूर्ण गौरी की विभूति हैं । त्रिपुरा-चक्रेश्वरी मन्त्र में "मध्यकूट में रेफ को अलग निकालने से भैरवीसंज्ञा होती है "द्वादशाब्दा तु भैरवी" ।

बारह वर्ष की कन्या को भी भैरवी कहते हैं ।

भगमालिनी=ऐश्वर्यादिषड्गुणों को जो धारण करती है वह भगवती कहाती है ।

"ऐश्वर्यस्य समस्तस्य धर्मस्य यशसःश्रियः ।
ज्ञानविज्ञानयोश्चैव षण्णाम्भगइतीरितः ।।

कालिकापुराण में—

पद्मासना=पद्ममिवासनम् कमलासन में बैठी हुई ।

भगवती=ऐश्वर्यसम्पन्ना ।

देवी भागवत में आया है—

उत्पत्तिं प्रलयञ्चैव भूतानां गतिमागतिम् ।
अविद्याविद्ययोस्तत्त्वं वेत्तीति भगवत्यसौ ॥

पद्मनाभसहोदरी=विष्णु की सहोदरी या साथ पैदा होनेवाली
जैसे—

"एकमेव ब्रह्म धर्मो धर्मीति रूपद्वयं प्रापत् ।
धर्मः पुमान् विष्णुः धर्मी सकलजगदुत्पादनभावम् ॥

धर्मी=परमशिवमहिषीभावम्प्राप्ता । ब्रह्मपुराण में आया है—

या मेनाकुक्षिसम्भूता सुभद्रा पूर्वजन्मनि ।
कृष्णेन सह देवक्या सास्मिञ्जन्मनि कुक्षिगा ॥

वहीं पर जैसे, पुरुषोत्तम क्षेत्र के माहात्म्य में आया है—

श्रीदेवीदर्शनार्थाय तपस्तेपे सुदारुणम् ।
आत्मैक्यध्यानयुक्तश्च तस्य प्रपन्नतो मुनेः ॥
प्रादुर्बभूव त्रिपुरा पद्महस्ता सहोदरा ।
पद्मासने च तिष्ठन्ती ।

उन्मेषनिमिषोत्पन्नविपन्नभुवनावली ।
सहस्रशीर्षवदना सहस्राक्षी सहस्रपात् ॥११७॥

उन्मेषनिमेष=नेत्र का खोलना और संकोच करना । उत्पन्न और विपन्न नेत्र खुलने से सृष्टि की उत्पत्ति हो गई । निमेष करने से नाश हो गया ।

"तवोन्मेषाज्जातं जगदिदमशेषम्प्रलयतः ।
परित्रातुं शक्यः परिहृतनिमेषास्तव दृशः ॥
निमेषोन्मेषाभ्यां प्रलयमुदयं याति जगती ।

भुवनावली=संसार रूपी आवली ।

सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ।
सर्वतः श्रुतिमल्लोकेसर्वमावृत्त्य तिष्ठति ॥

देवीभागवत में आया है—

सहस्रनयनारामा सहस्रकरसंयुता ।
'सहस्रशीर्षचरणा भाति दूरादसंशयम्"

भुवनेश्वरी का बीज जिसमें से निकलता है ।

आब्रह्मकीटजननी वर्णाश्रमविधायिनी ।
निजाज्ञारूपनिगमा पुण्यापुण्यफलप्रदा ॥११८॥

आब्रह्मकीटजननी=ब्रह्मासे लेकर ब्रह्मादिस्तम्ब पर्यन्त (हिरण्य-गर्भ से लेकर) कीट पतङ्ग तक (लौ) सब को उत्पन्न करनेवाली बीज रूपा चौरासी लक्ष योनियों को पैदा करनेवाली ।

जलजा नवलक्षाणि स्थावरा लक्षविंशितिः ।
कृमयो रुद्रलक्षाणि पक्षिणो दशलक्षकाः ॥
त्रिंशल्लक्षाणि पशवः चतुर्लक्षाणि मानवाः ।

वर्णाश्रमविधायिनी=वर्णाश्रम का विधान करनेवाली ।
जैसे कूमपुराण में हिमालय के प्रति कहा गया है ।

अथ सा तस्य वचनं निशम्य जगतोऽरणिः ।
सस्मितं प्राह पितरं स्मृत्वा पशुपतिं पतिम् ॥
शृणुष्व चैतत्परमं गुह्यमीश्वरगोचरम् ।
उपदेशं गिरिश्रेष्ठ लिखितं ब्रह्मवादिभिः ॥
ध्यानेन कर्मयोगेन भक्त्या ज्ञानेन चैव हि ।
प्राप्याहं ते गिरिश्रेष्ठ ! नान्यथा कर्मकोटिभिः ॥

मैंने ध्यानकर्मयोग किया अतः तुझे कन्या मिली ।

श्रुतिस्मृत्युदितंसम्यक् कर्म वर्णाश्रमात्मकम् ।
अध्यात्मज्ञानसहितं मुक्तये सततं कुरु ॥
धर्मात्संजायते भक्तिर्भक्त्या संजायते परम् ।
श्रुतिस्मृतिभ्यामुदितो धर्मो यज्ञादिको मतः ॥
नान्यतो ज्ञायते धर्मो वेदाद्धर्मो हि निर्बभौ ।
तस्मान्मुमुक्षुर्धर्मार्थं मद्रूपं वेदमाश्रयेदिति ॥

निजाज्ञारूपनिगमा=आत्म स्वरूप को जाननेवाली । वेदों में जिसके स्वरूप का वर्णन किया है ।

जैसे कूर्मपुराण में आया है—

ममैवाज्ञा परा शक्तिः वेदसञ्ज्ञा पुरातनी ।
ऋग्यजुःसामरूपेण स्वर्गादौ सम्प्रवर्त्तते ॥

निगम मेरी आज्ञा के रूप में है । वेद के अनुयायी अट्ठाइस शैवतन्त्र कापाल भैरवादि इन तन्त्रों में वैदिक निगम वेदके अनुसार होनें से कहे गये हैं । ये महादेव के मुख से निकले हुए हैं जैसे देवीभागवत में आया है ।

"सद्योजातमुखाज्जाताः पञ्चाद्याः कामिकादयः"
वामदेवमुखाज्जाता दीप्ताद्याः पञ्च संहिताः ॥
अघोरवक्त्रादुद्भूताः पञ्चाप्तिविजयादयः ।
पुंवक्त्रादपि सम्भूताः पञ्च वैरोचनादयः ॥
ईशानवदनाज्जाताः प्रोद्गीताद्यष्टसंहिताः ।
ऊर्ध्वस्रोतोभवा एते नाभ्यधः स्रोतसः परे ॥

पुण्यापुण्यफलप्रदा=पुण्य और पाप के फल को देनेवाली। स्वर्ग और नरक का फल देनेवाली।

ये न कुर्वन्ति तद्धर्मं तदर्थं ब्रह्मणा कृताः ।
निरयास्तेषु शमनः पातयैतान्मदाज्ञया ।
धर्मं कुर्वन्ति वेदोक्तं ये मद्भक्तिपरायणाः ॥
स्वर्गादिषु शचीशाद्यास्तान्नयन्ति मदाज्ञया ।

अन्यत्र भी—

ईश्वरः प्रेरितो गच्छेत्स्वर्गं वा श्वभ्रमेव वा ।

श्रुतिसीमन्तसिन्दूरीकृतपादाब्जधूलिका !
सकलागमसन्दोहशुक्तिसम्पुटमौक्तिका ॥११६॥

वेदों के सीमन्त उपनिषद् मूर्धामुख वाक्य उनके बीच की सिन्दूरी भगवती के पादरज की धूलिका। अर्थात् भगवती के चरणों की सेवा करने से वेदों के जो महावाक्य हैं इसका अनुभव साधक को होता है। यद्वा भगवती के स्वरूप को वेद भी प्रगट करने को असमर्थ है और ग्रन्थों की तो गणना ही क्या?

नेति नेति वाक्यों से निषेध किया है कि भगवती के चरणों का वर्णन शब्दगम्य नहीं है।

"यतोवाचोनिवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह।"

जितने आगम हैं वेद हैं उनकी जो शुक्ति (सीप) है उनमें मोती स्वरूप। भगवती के मुखारविन्द से आगम-निगम स्वरूप दो मोती निकले हैं। जैसे रुद्रयामल ने प्रगट किया है—

यद् वेदैर्गम्यते स्थानं तत्तंत्रैरपि गम्यते।

पुरुषार्थप्रदा पूर्णा भोगिनी भुवनेश्वरी।
अम्बिकाऽनादिनिधना हरिब्रह्मेन्द्रसेविता ॥१२०॥

पुरुषार्थप्रदा=धर्मार्थ काम मोक्ष पुरुषार्थ को देनेवाली।

येऽर्चयन्ति पराशक्तिं विधिनाऽविधिनाऽपि वा।
न ते संसारिणो नूनं मुक्ता एव न संशयः॥

पूर्णा=पूर्णस्वरूप देश कालवस्तुकृत जो परिच्छेद है उससे रहित।

जैसे वेद में आया है—

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवाऽवशिष्यते॥

भोगिनी=सुख का साक्षात्कार करनेवाली। नागकन्या होने से भी भगवती का नाम भोगिनी पड़ा।

भुवनेश्वरी=चतुर्दश भुवनों की स्वामिनी भुवन शब्द जल का भी वाचक है हृल्लेखाभिमानी रूप देवता का वाचक है।

त्रिपुरा रहस्य में आता है।

भुवनानन्दनाथश्च प्रसन्नत्वान्महेश्वरी।
भुवनेष्वति विख्याता शाम्भवी भुवनेश्वरी॥

अम्बिका=माता जगन्माता भारती पृथ्वी रुद्राणी आत्मा की इच्छा ज्ञान क्रियाशक्ति की जो समष्टि है उसे अम्बिका कहते हैं।

अनादिनिधना=
विश्वेश्वरी जगद्धात्री।

जन्म और मरण रहित।

हरिब्रह्मेन्द्रसेविता=हरिब्रह्मेन्द्र इनके द्वारा जिसकी सेवा की गई है। देवीभागवत में आया है—

ब्रह्माविष्णुस्तथा शम्भुर्वासवोवरुणो यमः।
वायुरग्निःकुवेरश्च त्वष्टा पूषाश्विनौ भगः॥
आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवामरुद्गणाः।
सर्वे ध्यायन्ति तां देवीं सृष्टिस्थित्यन्तकारिणीम्॥

उपरि गणित ये सब भगवती श्रीविद्या के उपासक हैं।

नारायणी नादरूपा नामरूपविवर्जिता।
ह्रींकारी ह्रीमती हृद्या हेयोपादेयवर्जिता॥१२१॥

नारायणी "नारायणश्चवोविष्णु" नारायण शिव और विष्णु

का नाम है। नारायण नाम की निरुक्ति मनुस्मृति में इस प्रकार आई है—

आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः।
अयनं तस्य ताः प्रोक्तास्तेन नारायणः स्मृतः ॥

ब्रह्मवैवर्त पुराण में इस प्रकार आया है—

नराणामयनं यस्मात्तस्मान्नारायणःस्मृतः।

नारायणी से परम शिव की स्त्री का बोध होता है। जैसे काशीखण्ड में आया है—

सः श्रीपतिः सोऽपि च पार्वतीपतिः।

नारायणी और गौरी में अभेद है। इसे कूर्मपुराण में स्पष्ट कर दिया है—

"अहं नारायणो गौरी जगन्माता सनातनी।
विभज्य संस्थितो देवःस्वात्मानं परमेश्वरः ॥
न मे विदुः परं तत्त्वं देवाद्या न महर्षयः।
एकोऽहं वेद विश्वात्मा भवानी विष्णुरेव च ॥

नादरूपा—अष्टौ वर्णा वर्तन्ते तेषु तृतीयोवर्णोनाद :—नाद रूपा ह्रींकारादिषु बिन्दु के ऊपर अर्धचन्द्र उसके ऊपर रोधिनी नाद नादान्त शक्ति व्यापिका, शमनी और उन्मनी सूक्ष्म सूक्ष्मतर सूक्ष्मतम रूप से रहते हैं इनमें तीसरा नाद है।

आनन्दलक्षणमनाहतनाम्निदेशे
नादात्मना परिणतं तव रूपमीशे।

प्रत्यङ्मुखेन मनसापरिचीयमानं
शंसन्ति नेत्रसलिलैः पुलकैश्च धन्याः ॥

यथा विन्दु के ऊपर अर्धचन्द्र उसके ऊपर रोधिनी उसके ऊपर नाद है। स्वच्छन्दतन्त्र में आया है—

रोधिन्याख्यं यदुक्तन्ते नादस्तस्योर्ध्वसंस्थितः।
पद्मकिंजल्कसंकाशः कोटिसूर्यसमप्रभः ॥

इस प्रकार नाद के स्वरूप का वर्णन आया है—

नादरूपा=नादस्वरूप जिसकी मूर्त्ति है।

अस्ति भाति प्रियं रूपं नामचेत्यंशपञ्चकम्।
आद्यत्रयं ब्रह्मरूपं जगद्रूपं ततो द्वयम् ॥

नामरूपविवर्जिता—संसार के जो नाम रूप हैं उससे रहित अर्थात् ब्रह्मस्वरूपिणी।

ह्रींकारी=लज्जा को करनेवाली।

मार्कण्डेयपुराण में—

या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता।

ह्रींकारी=हर और विन्दु।

इनका अभिप्राय है सृष्टिस्थिति संहार रूपात्मिका।

ह्रीमती—लज्जा स्वरूपा लज्जावती।

हृद्या=हृदि भवा हृद्या कमनीय मुनियों के हृदयों में प्रगट होनेवाली अथवा रमणीया आनन्द देनेवाली।

हेयोपादेयवर्जिता=प्रवृत्ति निवृत्तिरूप को बतानेवाले शास्त्रों से अलग।

राजराजार्चिता राज्ञी रम्या राजीवलोचना ।
रञ्जनी रमणी रस्या रणत्किङ्किणिमेखला ॥१२२॥

राजराजार्चिता=राज राज=मनु या कुवेर के द्वारा उपासित।

राज्ञी=राजराजेश्वर शिव की पट्टमहिषी होने से उनका नाम राज्ञी।

रम्या=शोभना सौन्दर्य लावण्य सौकुमार्यवती।

राजीवलोचना=राजीव=पद्म, हरिण का वाचक होने से पद्मनेत्रा या मृगाक्षी का वाचक है।

रञ्जिनी=सव को रञ्जन करनेवाली भक्तोंको विशेष रूप से।

रमणी=भक्तों के साथ क्रीड़ा करनेवाली श्रुति में आता है।

"जक्षन्क्रीडन्रममाणा।"

रस्या=आस्वादनयोग्य जिसका रस आस्वादन के लायक हो।

"रसो वै स इति श्रुतेः।"

रणत्किकिणिमेखला=क्षुद्रघण्टिकायें जिसकी मेखला में शब्द कर रही हैं।

रमा राकेन्दुवदना रतिरूपा रतिप्रिया।
रक्षाकरी राक्षसघ्नी रामा रमणलम्पटा ॥१२३॥

रमा=लक्ष्मी स्वरूप होने से रमण करनेवाली।

ईकार=कामकला का वीज।

सूतसंहिता में।

लक्ष्मीर्वागादिरूपेण नर्तकीव विभाति या।

राकेन्दुवदना=चन्द्रमुखवाली।

रतिरूपा=प्रिय है रूप जिसका या कामदेव पत्नी ।

रतिप्रिया=रति में जिसको प्रिय है ।

रक्षाकरी=रक्षा करनेवाली स्थिति संहारकारिणी ।

राक्षसघ्नी=राक्षसों को मारनेवाली ।

रामा=स्त्रीमात्र स्वरूप, या जिसमें योगी लोग रमण करते हैं ।

रमणलम्पटा=क्रीडा में लगी हुई संसार की उत्पत्ति, स्थिति, लयविनाशरूपी जो क्रीड़ा है उसमें लगी हुई—

काम्या कामकलारूपा कदम्बकुसुमप्रिया ।

कल्याणी जगतीकन्दा करुणारससागरा ॥१२४॥

कामनाओं को देनेवाली विन्दुत्रय हरार्ध को काम्या कहते हैं ।

कामकलारूपा=कामाख्य चरमकलारूपवाली स्फुटाशिवशक्ति का जो समागम के अङ्कुर के वीचका नाम कामकलारूप है । जैसे त्रिपुरा सिद्धान्त में आया है—

तस्य कामेश्वराख्यस्य कामेश्वर्याश्च पार्वति ।

कलाख्या सविलासा च ख्याता कामकलेति सा ॥

कालीपुराण में आया है ।

कामार्थमागता यस्मात् मया सार्धं महागिरौ ।

कामाख्या प्रोच्यते देवी नीलकूले रहोगता ॥

कदम्बकुसुमप्रिया—

कदम्ब के पुष्प में प्रेम रखनेवाली ।

कल्याणी=मंगलस्वरूप ।

देवीपुराण में आया है। "कल्याणी मलयाचले"
मलयाचल रूप में रहनेवाली देवी का नाम भी कल्याणी है।
जगतीकन्दा=संसार के मूल कारण।

करुणारससागरा=करुणा का जो रस उससे परिपूर्ण।

मयि दृष्टिं स करुणा।

कलावती कलालापा कान्ता कादम्बरीप्रिया।
वरदा वामनयना वारुणीमदविह्वला ॥१२५॥

कलावती=चतुष्षष्टि संख्यक कला जिसमें है।
कल=मञ्जुल भाषणवाली मधुरालाप करनेवाली।

कान्ता=कमनीया कमब्रह्म=अन्तर में है ब्रह्म जिसके। ब्रह्म है जिसके ध्यान में।

कं ब्रह्मैवान्तःसिद्धान्तो यस्याःसा।

जिसकी पूजा करने का सिद्धान्त ही ब्रह्मज्ञान है।
कादम्बरीप्रिया=उत्तम परिष्कृत मद्य को चाहनेवाली।
वरा=ब्रह्माविष्ण्वादि को उपासना करनेसे वरदान देनेवाली।
मत्स्यपुराण में—

यच्चाहमुक्तवानस्या उत्तानकरतां सदा।
उत्तानो वरदः पाणिरेष देव्याः सदैव तु ॥

भक्तों (देवताओं) को उनकी कामना की पूर्ति के लिये वर देनेवाली। शंकराचार्य ने लिखा है—

त्वदन्यः पाणिभ्यामभयवरदो दैवतगणः।
त्वमेका नैवासि प्रकटितवराभीत्यभिनया ॥

सम्पूर्ण संसार को वर देनेवाली।

नवम्यां च सदा पूज्या इयं देवी समाधिना।
वरदा सर्वलोकानां भविष्यति न संशयः॥

वामनयना=बड़े सुन्दर हैं नेत्र जिसके। वाम जो कर्म मार्ग हैं उसमें लगानेवाली।

जैसे वेद में आया है।

"एष उ एव वामनीः।"

वारुणी=वरुणस्येयं वारुणी। वरुण देवता की शक्ति जिसमें हैं उसे वारुणी कहते हैं। सहस्र फणोंवाला नाग भी वारुणी है। शेषनाग को विष्णुपुराण में इसी नाम से बताया है।

उपासते स्वयं कान्त्या यो वारुण्या च मूर्तये।

खजूर के रस को भी वारुणी कहते हैं। वारुणी के पान से विह्वल, बाहर के पदार्थों को छोड़ दिया है केवल आत्मानन्द में मस्त। यद्वा, वारुणी नाड़ी को भी कहते हैं।

अधश्चोर्ध्वं स्थिता नाड़ी वारुणी सर्वगामिनी।

मद=सुषुम्ना का जो मद है उसमें विह्वल तन्मय अर्थात् समाधिस्थ।

विश्वाधिका वेदवेद्या विन्ध्याचलनिवासिनी।
विधात्री वेदजननी विष्णुमाया विलासिनी ॥१२६॥

विश्वाधिका=क्षिति से लेकर शिव पर्यन्त जो तत्त्व है उससे अधिक।

वेदवेद्या=ऋग्यजुसामाथर्वरूपा।

वेदैश्चसर्वैरहमेववेद्यः ॥

चिन्तामणि भगवती का घर है उसके चार द्वार हैं उनसे जानने योग्य।

विन्ध्याचल निवासिनी=विन्ध्यपर्वतवासिनी।

जैसे मार्कण्डेय पुराण में आया है—

नन्दगोपगृहे जाता यशोदागर्भसम्भवा।
ततस्तौ नाशयिष्यामि विन्ध्याचलनिवासिनी ॥

पद्मपुराण में देवी के क्षेत्र की गणना में आता है—

त्रिकूटे च तथा सीता विन्ध्ये विन्ध्यादिवासिनी।

विधात्री=कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुं समर्था। जगत् को धारण पोषण करनेवाली शक्ति। विधातुः ब्रह्मणः शक्तिः ब्रह्मा की जो शक्ति है।

वेदानां जननी="विधात्री वेदजननी"।

जिससे वेद प्रगट हुए हैं—

अस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोह्यथर्वणः।

यजुर्वेद में—

ऋचः सामानि जज्ञिरे।

देवीपुराण में इस प्रकार वर्णन आया है कि देवी से वेद फैले हुए।

यतः शृङ्गाटकाकारकुण्डलिन्याः समुद्यता।
स्वराश्च व्यञ्जनानीति वेदमाता ततःस्मृता॥

विष्णुमाया=विष्णोर्व्यापनशीलस्य देशकालादि से अनवच्छिन्न उसकी माया अर्थात् उसे आवरण करनेवाली। जैसे आया है गीता में---

दैवीह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।

विलासिनी—विक्षेपशक्तिः - विलास करनेवाली विक्षेप शक्तिवाली।

नित्याविलासिनी दोग्ध्री विल=ब्रह्मरन्ध्र है उसमें विलास करनेवाली। जैसे स्वच्छन्दतन्त्र में कहा है :—

तत्र ब्रह्मविलं ज्ञेयं रुद्रकोट्यर्बुदैर्वृतम्।
द्वारं सा मोक्षमार्गस्य रोधयित्वा व्यवस्थिता॥

क्षेत्रस्वरूपा क्षेत्रेशी क्षेत्रक्षेत्रज्ञपालिनी।
क्षयवृद्धिविनिर्मुक्ता क्षेत्रपालसमर्चिता॥१२७॥

क्षेत्रस्वरूपा=पृथ्वी से लेकर छब्बीस तत्त्व जिसके शरीर हैं वह जिसका स्वरूप है। जैसे लिङ्गपुराण में आया है—

विभर्त्ति क्षेत्रतां देवी त्रिपुरान्तकवल्लभा।

क्षेत्रेशी क्षेत्र शरीर उसकी स्वामिनी।

विष्णुस्मृति में आया है—

इदं शरीरं वसुधे क्षेत्रमित्यभिधीयते।

महाभारत में—

क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत।

लिङ्गपुराण में आया है—

चतुर्विंशतितत्त्वानि क्षेत्रशब्देन सूरयः।
आहुः क्षेत्रज्ञशब्देन भोक्तारम्पुरुषन्तदा॥

क्षेत्रक्षेत्रज्ञपालिनी—क्षेत्र शरीर और क्षेत्रज्ञ जीव इन दोनों को पालन करनेवाली।

मनुस्मृति में—

योऽस्यात्मनः कारयिता तं क्षेत्रज्ञं प्रचक्षते।
यत्करोति तु कर्माणि स भूतात्मोच्यते बुधैः॥
येन वेदयते सर्वं सुखं दुःखं च जन्मसु।
तावुभौ भूतसम्पृक्तौ महान् क्षेत्रज्ञ एव च॥

क्षयवृद्धिविनिर्मुक्ता।

ह्रास क्षय और वृद्धि से निर्मुक्त। जैसे कहा है—

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।

न तो कर्म से बढ़ता है न अकर्म से घटता है।

"एष नित्यो महिमा ब्राह्मणस्य न कर्मणा वर्द्धते नो कनीयान्"

इति काठक श्रुतेः।

अच्छे कर्म करने से बढ़ता नहीं बुरे कर्म से घटता नहीं।

क्षेत्रपालसमर्चिता=क्षेत्रपाल (शिव) द्वारा अर्चितकी गई। लिङ्गपुराणकी कथामें आता है, जब दारुकासुरके वधके लिये शिवने

काली को वनाया। काली ने दारुकासुर को मारा, फिर उसके क्रोध से जगद् आकुलित हो गया शिव ने उसके कोप को शमन करने के लिये अपना वालक रूप धारण किया और रोने लगा तव उसे काली ने अपना दूध पिलाया उस दूध के द्वारा उस क्रोधाग्नि को भी पी गया। वह क्षेत्रपाल कहलाये। क्षेत्रपाल ने जिस कालीरूप की पूजा की।

विजया विमला वन्द्या वन्दारुजनवल्लभा।
वाग्वादिनी वामकेशी वह्निमण्डलवासिनी ॥१२८॥

विजया—सारे ही जिसकी जय होती है।

देवीपुराण में अड़सठ शिवतीर्थों में काश्मीर में विजय स्वरूप को वतलाया है—"विजयं चैव काश्मीरे"। वहां पर पद्मनामक दत्य को जो वड़ा वलवान था उसे विजय किया था।

"त्रिपु लोकेपु विख्याता विजया चापराजिता।"

इस समय भी लोग करते हैं।

आश्विनस्य सिते पक्षे दशम्यां तारकोदये।
सकालो विजयो ज्ञेयः सर्वकार्यार्थसिद्धिदः॥

विजय समय को भी कहते हैं।

विमला=अविद्यारूपी मल जिससे दूर हो गया। जैसे, पद्मपुराण में आया है—"विमला पुरुपोत्तमे"।

वन्द्या—वन्दितुं योग्या—सवको प्रणाम के योग्य व्रह्मा, विष्णु, महेश्वरादि जिसके चरणों में नमते हैं।

वन्दारुजनवत्सला=वन्दारु (देवताओं) की वत्सला माता।

वाग्वादिनी=वाग्वादिनी देवी का रूप वाणी जिसके पुरुषार्थ से शक्तिशालिनी होती है। त्रिपुरा सिद्धान्त में वाग्वादिनी का इस प्रकार निर्वचन आया है।

सर्वेषां च स्वभक्तानां वादरूपेण सर्वदा।
स्थिरत्वाद्वाचो विख्याता लोके वाग्वादिनीति सा।

अर्थात्;

शब्दानां जननीत्वमेव भुवने वाग्वादिनीत्युच्यसे।
"ललितास्तव"

वामकेशी=जिनके केश सुन्दर हैं।

अराजा केशेषु प्रकृतिसरला मन्दहसिते।

देवीपुराण में—"जटे वामेश्वरम्विद्यात्"। वामकेश तन्त्र से जिस भगवती का प्रतिवादन होता है वह वामकेशी है।

वह्निमण्डलवासिनी मूलाधार परमाकाश में निवास करनेवाली। इससे सूर्य, सोम, अग्नि—त्रयमण्डलवासिनी।

भक्तिमत्कल्पलतिका पशुपाशविमोचिनी।
संहृताशेषपाखण्डा सदाचारप्रवर्तिका ॥१२९॥

जिन भक्तिवालों के लिये यह माता कल्पलतिका है उनकी कामनाओं को विस्तार से देनेवाली भक्ति।

शक्तिरहस्य में आया है—

अक्रमेणार्धभक्त्या वा भवान्याः कृतमर्चनम्।
जन्मान्तरे क्रमप्राप्त्यै पूर्णभक्त्यै च कल्पते॥

पशुपाशविमोचिनी –

पशु=योऽन्यां देवतामुपास्तेऽन्योऽसावन्योऽहमस्मीति न स वेद यथापशुः"। देवता और हैं। अतएव कहा है—"देवोभूत्वादेवंयजेत्"।

पशु जो विद्याविहीन हैं उनके अज्ञान को दूर करनेवाली।

अथेतरेषांपशूनामशनापिपासे यद्वा, पशुपाश। वरुणपाशान्विमोचयतीति वा।

ब्रह्मा से लेकर स्थावरान्त तक पशु समान धर्मवाले उनके बन्धनों को दूर करनेवाले। जैसे सौर संहिता में आया है।

सर्वाधारतयाधारः पाशो बन्धस्य हेतुतः।

उसके जो विकार हैं उनको छुड़ानेवाली। लिङ्गपुराण में इस प्रकार विशदीकरण किया है—

"ब्रह्माद्याःस्थावरान्ताश्च देवदेवस्य शूलिनः।
पशवः परिकीर्त्यन्ते समस्ताः पशुवर्त्तिनः॥

भगवती की भक्ति से ही इनके पाश दूर होते हैं। जैसे, अविद्यास्मित रागद्वेष अभिनिवेश बन्धनों से मुक्त करानेवाली। कुलार्णव में आता है—

घृणा शङ्का भयं लज्जा जुगुप्साचेति पञ्चमी।
कुलं शीलञ्च जातिश्चेत्यष्टौ पाशाः प्रकीर्तिताः॥

इन पशुपाशों से छुड़ानेवाली।

शिवरहस्य में आया है—

पञ्चक्लेशैर्हिपञ्चाशद् पाशैर्बध्नाति यः पशून्।
स एव मोचकस्तेषाम्भक्त्या सम्यगुपासितः॥

अणु भेद और कर्म ये तीन प्रकार के पाश हैं। "अणुप॰ वाच्यमस्य"।

आत्मनोऽणु हेतुत्वादणुर्मालिन्यतोमलः (अणु) उसका मूल कारण है माया। माया का जो मल है वह अणु है इसी को शरीर का मल कहा है यह दो प्रकार का है "पुण्य और पाप।"

द्विधाणवं मलमिदं स्वस्वरूपापहारतः।
भिन्नवेद्यप्रथात्मैव मायीयं जन्म भोगदम्॥

अज्ञानं वन्धः—

भेद अज्ञान-कर्म जिससे पुण्यापुण्य होते हैं। स्वच्छन्द तन्त्र में भी आया है।

पशवस्त्रिप्रकाराःस्युस्तेष्वेके सकला मताः।
प्रलयाकलनामानस्तेषां केचिन्महेश्वरि॥
विज्ञानकेवला स्त्वन्ये तेषां रूपं क्रमाच्छृणु।

तीन पाशों से वद्ध को सकल कहते हैं।

नित्यं विषयसम्पृक्तः सकलः पशुरुच्यते।

मल माया शव्द अणु के परे "ऐते च शकलाः पशवः।" पक्व मल और अपक्व मल।

संहृताशेषपाषण्डा—सम्पूर्ण पाखण्डों को दूर करनेवाली। लिङ्गपुराण में पाखण्ड का निर्वचन किया है।

वेदवाह्यव्रताचाराः श्रौतस्मार्त्तवहिष्कृताः।
पाखण्डिन इति ख्याता न सम्भाष्या द्विजातिभिः॥

दैत्यों के मोह के लिये महामोह ने यह पाषाण्डधर्म बनाया था। वेदार्थ को खण्डन करनेवाले पाखण्डी होते हैं।

सदाचारप्रवर्त्तिका=सतांशिष्टानांयआचारः। सज्जनोंके आचार को प्रवर्त्तन करनेवाली।

कूर्मपुराण में सदाचार के सम्बन्ध में कहा है—

अष्टादशपुराणानि व्यासेन कथितानि तु।
नियोगाद्ब्रह्मणो राजन्तेषुधर्मः प्रतिष्ठितः॥

तापत्रयाग्निसंतप्तसमाह्लादनचन्द्रिका।
तरुणी तापसाराध्या तनुमध्या तमोपहा॥१३०॥

आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आदिदैविक तापत्रयरूपी अग्नि से सन्तप्त को शान्ति देनेवाली आह्लादन करने के लिये चन्द्रमा की किरणों के समान।

तरुणी=तरुण प्रातःकाल के सूर्य के समान चमकीली। अजर अमर (तरुण तरणि श्रीसरणिभिः)।

तापसाराध्याः=तापसैः तपस्विभिराध्या तपस्वियों से आराधना के योग्य। "कथमकृतपुण्यः प्रभवति।

(सौन्दर्यलहरी)

तनुमध्या=जिसके मध्यकटि प्रदेश तनु हो। "परिक्षीणा मध्ये।" (शंकर सौन्दर्यलहरी) काञ्ची देश में तनुमध्याख्यादेवी प्रसिद्ध है।

मां पातु निवायास्तीरे निवसन्ती। विल्वेश्वरकान्तादेवं तनुमध्या। जैसे पिङ्गल सूत्र में कहा है—

"तनुमध्या त्यौ" तगणयगण जिसमें हो। भगवती के नाम में भी गायत्री छन्दसामहम्" आया है।

तमोपहा तम जो अविद्या है उसे दूर करनेवाली। जैसे उपनिषद् में आया है—

अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते।

चितिस्तत्पदलक्ष्यार्था चिदेकरसरूपिणी।
स्वात्मानन्दलवीभूतब्रह्माद्यानन्दसन्ततिः ॥१३१॥

चिति—अविद्या को दूर करने का जो ज्ञान है उसे चिति कहते हैं। योगवाशिष्ठ में आया है—

"सैषाचितिरितिप्रोक्ता जीवानांजीवितैषिणाम्।"
या देवी सर्वभूतेषु चितिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः॥

तत्पदलक्ष्यार्था तत्त्वमस्यादि महावाक्यों का लक्ष्य करानेवाली। तत्त्वमस्यादि महावाक्य का ही ज्ञान करानेवाली।

चिकेदरसरूपिणी—सच्चिदानन्दरूपी जो एक रस ही है रस स्वरूप जिसका अर्थात् ब्रह्मानन्द ही जिसका स्वरूप है। लिखा भी है—यो यच्छ्रद्धः स एव सः।

"चिदानन्दाकारं शिवयुवतिभावेन विभृषे"।

स्वात्मानन्द—संततिः आत्मरूप में आत्मा के आनन्द में लवी भूत हो गये।

एतस्यैवानन्दस्य अन्यानिभूतानि मात्रामुपजीवन्ति।

तैत्तिरीय में आया है—

युवा स्या साधु युवाध्यापक आशिष्ठो द्रढिष्ठोवलिष्ठस्तस्यै सं पृथ्वी सर्वाविचत्तस्वपूर्णास्वात् स एको मानुप आनन्द एते शतं मानुषा आनन्दा स एको मनुष्यगन्धर्वाणामानन्दः। एते शतम् मनुष्यगन्धर्वाणामानन्दः स को देवगन्धर्वाणामानन्दः। एते शतं देवगन्धर्वाणामानन्दः स एकः पितृणां चिरलोकालोकानामानन्दः। एते शतं पितृणोचिरलोकलोकानामानन्दः स एक आजानजानां देवानामानन्दः एते शतं माजानांदेवानामानन्दा स एकः कर्मदेवानामानन्दः। ये कर्मणा देवानपियन्ति श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य एते शतं कर्मदेवानामानन्दास्स एकोदेवानामानन्दः। एते शतं देवानामानन्दा स एको इन्द्रस्यानन्दः। एतेशतमिन्द्रस्य आनन्दाः स एकोबृहस्पतेरानन्दः। एते शतं बृहस्पते प्रजापतेरानन्दा स एको प्रजापतेरानन्दः ब्रह्मण आनन्दः। स यश्चायं पुरुषे यश्चासावादित्ये स एकविद्। योऽसावसौ पुरुषः सोऽहमादि।

परा प्रत्यक्चितीरूपा पश्यन्ती परदेवता।

मध्यमा वैखरीरूपा भक्तमानसहंसिका ॥१३२॥

परा⋯⋯⋯हंसिका।

शुद्ध ब्रह्म का वैखरी शब्द के साथ कैसे संगति हो सकती है यह बताया है। शब्द और अर्थ में तादात्म्य सम्बन्ध है।

"वागर्थाविवसम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ॥

इस शब्द से शुद्ध ब्रह्म की प्रतीति कैसे हो सकती है। इसके सम्बन्ध में बताते हैं।

परा=अव्यक्त विन्दु उससे कैसे सृष्टि उत्पन्न होती है। "तस्मा-दव्यक्तमुत्पन्नं त्रिगुणं द्विजसत्तम।" उस अव्यक्त से जो त्रिगुण उत्पन्न हुए हैं वे संसार के अङ्कुर रूप कारण है इस कारण विन्दु से कार्य विन्दु उससे नाद और उससे बीज उत्पन्न हो अभिप्राय यह है कि पर, सूक्ष्म और स्थूल ये तीन निकले। जैसे आगम के रहस्य में आया है—

"कालेन भिद्यमानस्तु स विन्दुभवती तथा।
स्थूलसूक्ष्मपरत्वेन तस्य त्रैविध्यमिष्यते॥

वही कार्य बिन्दु नाद, बीज, से दो प्रकार का बना है। कारण विन्दु आदि चार अव्यक्त से निकले हैं। कारण (अनभिव्यक्ता) विन्दु से अव्यक्त हिरण्य गर्भ एवं विराट हैं। इनकी शक्ति को शान्ता, वामा, ज्येष्ठा और रौद्री कहते हैं। ये भगवती की इच्छा से ज्ञान एवं क्रिया के रूप में रहते हैं।

अधिभूत में कामरूप पीठ पूर्णागिरिपीठ उड्डीयान पीठ।

अध्यात्म में—कारण बिन्दु मूलाधार की शक्ति है। मूला-

धारस्थ शक्ति जिसे कारण विन्दु शक्ति पिण्ड, कुण्डल्यादि शब्दों से कहते हैं जिसके स्वरूप। षट्चक्र निरूपण में आया है—

शक्तिः कुण्डलिनीति विश्व जननव्यापारवद्धोद्यमां।
ज्ञात्वेत्थं न पुनर्विशन्ति जननीगर्भेऽर्भकत्वं नराः॥

यह कारण विन्दु है। यही कारण विन्दु जब कार्य विन्दुत्रय को उत्पन्न करनेवाला होता है उस दशा में अव्यक्त शब्द का ब्रह्म रव होता है।

विन्दोस्तस्माद्भिद्यमानादव्यक्तात्मारवोऽभवत्।
स रवः श्रुतिसम्पन्नैः शब्दब्रह्मेतिगीयते॥

यह रव कारण बिन्दु में तादात्म्य होने से सारे ब्रह्माण्ड में व्यापक होता हुआ भी प्रगट होने के लिये प्राणियों के मूलाधार में इस रव की अभिव्यक्ति है। "देहेऽपि मूलाधारेपु समुदेति-समीरणः"। सारे देह में यह शब्द ब्रह्म रव व्याप्त होनेपर भी मूलाधार सें प्रगट होता है। (जो कारण ब्रह्म से अभिव्यक्त) इसीका नाम जो अपनी प्रतिष्ठा से निष्पन्न होता है—परावाक् दिया गया है।

यह परावाक् नाभि तक जब जाती है वहां पवन जब इसे विमर्श रूप आत्मा का विसर्श रूप मन उसके साथ जब यह मिलता है तो कार्यबिन्दु होकर पश्यन्ती वाणी हो जाती है। यही शब्द ब्रह्म वायु के चालन से जब हृदय में अभिव्यक्ति होकर निश्चयात्मिकाबुद्धि से युक्त होकर स्पन्दन होता है इसे मध्यमा कहते हैं। यही मध्यमा वाक् मुख में वायु से जब कण्ठ

ताल्वादि स्थान से अभिव्यक्त होती है और अकारादि वर्णरूप होकर कानों के ग्रहण करने के योग्य स्पष्ट रूप से व्यक्त होती है इसे वैखरी कहते हैं। इस प्रकार परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी शब्दों की सृष्टि हुई। जैसे, शंकराचार्य ने कहा है—

मूलाधारात्प्रथममुदितोयश्चभावः पराख्यः।
पश्चात्पश्यन्त्यथहृदयगो बुद्धियुग्मध्यमाख्यः॥
व्यक्ते वैखर्यथ रुरुदिषोरस्यजन्तोःसुषुम्णा।
बद्धस्तस्माद्भवति पवने प्रेरिता वर्णसंज्ञा॥

वैखरी में आकर इस प्रकार शब्द वर्णसंज्ञा को धारण करता है। उनमें परादि तीन को मनुष्य नहीं जानते हैं स्थूल वैखरी को लोग जानते हैं—

चत्वारि वाक्परिमिता पदानि तानिविदुर्ब्राह्मणाये मनीषिणः।
गुहा त्रीणि निहिता नेङ्गयन्ति तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति।

वैखरी=वै निश्चयेन खं कर्ण के विवर में जानेवाली शब्द राशि को कहते हैं। सौभाग्य सुधोदय में लिखा है—

प्राणेन विखराख्येन प्रेरिता वैखरी पुनः।

भक्तमानसहंसिका—भक्तों के चित्तरूपी सरोवर में हंस के समान तैरती रहनेवाली यह पराशक्ति है—

कामेश्वरप्राणनाडी कृतज्ञा कामपूजिता।
शृङ्गाररससंपूर्णा जया जालन्धरस्थिता॥१३३॥

कामिनी—कामेश्वर शिवजी की जीवनशक्ति (प्राणनाड़ी) है। जैसे सौन्दर्यलहरी में आया है—

करालं यत्क्ष्वेलं कवलितवतः कालकलना न शम्भो स्तन्मूलं तव जननि ताटङ्कमहिमा।

अर्थात् शिवजी ने जब विष भी खालियातो भी प्राणज्ञानाडी स्वरूपा जीवन सत्ता आप उनके साथ थीं अतः उनका बाल भी बांका नहीं कर सका।

कृतज्ञा—कृत्यों का प्रत्युपकार करनेवाली कृतं जानातीति कृतज्ञा।

कामपूजिता—कामदेव ने जिसकी पूजा की।

शृङ्गाररससम्पूर्णा—शृङ्गार रस से सम्पूर्ण अर्थात् ब्रह्म के साथ रहनेवाली।

जया – जय स्वरूपा।

जालन्धरस्थिता=जालन्धर पीठ में रहनेवाली। कामरूप जालन्धर, उड्डीयान और पूर्णागिरि।

ओड्याणपीठनिलया बिन्दुमण्डलवासिनी।
रहोयागक्रमाराध्या रहस्तर्पणतर्पिता ॥१३४॥

ओड्याण पीठ में जिसका स्थान हो। बिन्दुमण्डलरूप में सर्वात्मक श्रीचक्र में जो सर्वानन्द (बैन्दवस्थान) रूपी बिन्दुरूपी चक्र है उसमें निवास करनेवाली अर्थात् ब्रह्मरन्ध्र के बिन्दु में निवास करनेवाली।

सहस्रारे पद्मे सह रहसि पत्या विहरसे।

रहोयागक्रमाराध्या=एकान्त में याग—जो चिदग्नि में, कुण्डलिनी में, उत्थानरूपी यज्ञ किये जाते हैं। कुण्डलिनी के योग से जिसकी आराधना की जाय (विविक्त में) जैसे, आया भी है आपस्तम्ब में—

न शब्दशास्त्राभिरतस्य मोक्षो
न चैव रम्यावसथक्रियस्य।
न भोजानाच्छादनतत्परस्य
न लोकचित्तग्रहणे रतस्य॥
एकान्तशीलस्य दृढ़व्रतस्य
मोक्षोभवेत्प्रीतिनिवर्त्तकस्य।
अध्यात्मयोगे निरतस्यसम्यङ्
मोक्षोभवेन्नित्यमहिंसकस्य॥

रहस्तर्पणतर्पिता=अन्योन्य प्रकाश और विमर्श के मिलाने से जो तृप्त होती है इसमें बताया गया है (अन्तरयान से प्रसन्न होनेवाली)।

अन्तर्निरन्तर निरिन्धन मेधमाने
मोहान्धकारपरिपन्थिनि सम्विदग्नौ।
कस्मिंश्चिदद्भुतमरीचिविकासभूमौ
विश्वं जुहोमि वसुधादिशि वा वसानम्॥

मन्त्र के अर्थ की जो भावना है रहस्तर्पण उससे प्रसन्न होनेवाली।

सद्यःप्रसादिनी विश्वसाक्षिणी साक्षिवर्जिता ।
षडङ्गदेवतायुक्ता षाड्गुण्यपरिपूरिता ॥१३५॥

सद्यः""""परिपूरिता=ऊपर कहे हुए अन्तरयाग से तत्काल प्रसन्न होनेवाली।

विश्वसाक्षिणी=विश्व के सिवा जिसकी कोई साक्षी नहीं है।

साक्षिवर्जिता=साक्षि से वर्जित है वही उसकी साक्षी देनेवाली है। मैं हूं इस बात का मैं ही साक्षी हूं दूसरा नहीं हो सकता ।

षडङ्गदेवतायुक्ता=छै जो अवयव हैं। हृदय, शिर शिखा, नेत्र, कवच और अस्त्र। इनकी जो शक्तियां हैं उनसे मिली हुई।

षाड्गुण्यपरिपूरिता=छै अङ्गों का अधिष्ठात्री जो देवता महेश्वर है उसके साथ।

षडङ्ग=सर्वज्ञतातृप्तिरनादिबोधःस्वतन्त्रतानित्यमलुप्तशक्तिः ।
अनन्तता चेतिविधेर्विधिज्ञा षडाहुरङ्गानि महेश्वरस्य ।

यद्वा, शिक्षा कल्प व्याकरणादि षडङ्ग का अभिमानी देवता।

या सन्धिविग्रहयान आसन द्वैधीभावसमाश्रय छै अङ्गों के अभिमानी देवता ।

या कामैश्वर्य धर्मयशः।

श्रीज्ञान वैराग्य इन छै गुणों के अधिष्ठात्री देवता षाड्गुण्य परिपूरिता। ये छै गुण प्रतिपादित कर दिये गये हैं।

नित्यक्लिन्ना निरुपमा निर्वाणसुखदायिनी ।
नित्याषोडशिकारूपा श्रीकण्ठार्धशरीरिणी ॥१३६॥

नित्यक्लिन्ना=नित्य दयालु ।

निरुपमा=जिसके सादृश्य कोई नहीं है । "न तस्य प्रतिमाऽस्ति" ।

निर्वाणसुखदायिनी=निर्वाण मोक्ष के सुख को देनेवाली ।
कूर्मपुराण में हिमालय के प्रति देवी का वाक्य है—

मामनादृत्य परमं निर्वाणममलं पदम् ।
प्राप्यते नहि शैलेन्द्र ततो मां शरणं व्रज ॥
एकत्वेन पृथक्त्वेन तथाचोभयतोऽपिवा ।
मामुपास्य महाराज ततो यास्यसि तत्पदम् ॥

नित्याषोडशिकारूपा=नित्य षोडश शृङ्गार सम्पन्ना युवारूप रहता है । षोडशी जो विद्या है वही जिसका प्रत्यक्ष स्वरूप है ।
शक्तिरहस्य में आया है—

कोटिभिर्वाजपेयानां यथा षोडशकोटिभिः ।
प्रीयतेऽम्बा तथैकेन षोडश्युच्चारणेन च ॥

श्रीकण्ठार्धशरीरिणी=श्रीकण्ठ शिवजी के अर्ध शरीरवाली । अर्थात् अर्धनारीश्वर रूपवाली ।

वायुपुराण में आया है—

तत्र या सा महाभागा शंकरश्चार्धकायिनी ।
कायार्धं दक्षिणं तस्याः शुक्लं वामं तथा सितम् ॥

आत्मानं विभजस्वेति प्रोक्ता देवी स्वयम्भुवा ।
तदैव द्विविधा भूता गौरी कालीति सा तदा ॥

प्रभावती प्रभारूपा प्रसिद्धा परमेश्वरी ।
मूलप्रकृतिरव्यक्ता व्यक्ताव्यक्तस्वरूपिणी ॥१३७॥

प्रभारूपा=अणिमादिसिद्धि आवरण देवता हैं उनसे आवृत यद्वा, प्रभा कहते हैं किरणों को गुणस्वरूप उनसे शोभायमान। भगवती चमक रूपवाली है।

प्रथमस्कन्ध भागवत में भी आया है—

"सर्वचैतन्यरूपान्तामाद्यांविद्यां च धीमहि।"

प्रभारूपा=उत्कृष्ट प्रभावाली।

प्रसिद्धा=प्रसिद्ध।

परमेश्वरी=स्वामिनो मूलविद्या की प्रकृति। मूल जो श्री-विद्या है उसकी प्रकृति। यद्वा, मूल प्रकृति।

"मूल प्रकृति रविकृतिर्महदाद्याः प्रकृतिविकृतयः सप्त।
षोडशकस्तु विकारो न प्रकृतिर्नविकृतिःपुरुषः॥

ये महदादि आये हैं। ये सम्पूर्ण कुण्डलिनी में आविष्ट हैं। इस लिये तद्रूपा है। पृथिव्यादि और आकाश के बीच में जो कुछ विलास है वह सब उसकी माया है।

अव्यक्ता=जो किसी इन्द्रियों से न जानी जाय।

इन्द्रियों से अज्ञेय।

आकाश की प्रकृति ब्रह्म।

"आत्मन आकाशः सम्भूतः।"

पञ्चरात्र में वाक्य आया है—

प्रादुरासीज्जगन्माता वेदमाता सरस्वती।
यस्या न प्रकृतिः सेयं मूलप्रकृतिसंज्ञिता॥

इसी का नाम मूलप्रकृति है।

"तस्यामहं समुत्पन्नस्तत्त्वैस्तैर्महदादिभिः।"

व्यक्ताव्यक्तस्वरूपिणी - व्यक्त और अव्यक्त स्वरूपवाली। जैसे वेद में आया है—

द्वे एव ब्रह्मणो रूपे व्यक्तञ्चाव्यक्तञ्च।

व्यापिनी विविधाकारा विद्याविद्यास्वरूपिणी।
महाकामेशनयनकुमुदाह्लादकौमुदी ॥१३८॥

सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त होनेवाली।

"यथाऽऽकाशस्थितोनित्योवायुः सर्वत्रगोमहान्।"

विविधाकारा—प्राकृत वैकृत और कौमार ये तीन प्रकार की सृष्टि है, ये सब उसके आकार की है। अनेक प्रकार के आकारों-वाली मूर्तियां उसी की हैं।

"विद्याः समस्तास्तवदेवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु ।"

विद्याविद्यास्वरूपिणी=विद्या अध्यात्मकाल (भूमा)।

अविद्या=कर्मकाण्ड (अरूप)—विद्याञ्चाविद्याञ्च यस्तद्वेदोभयं सह। अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते। विद्या स्वात्म रूप ज्ञान को कहते हैं। अविद्या कर्मरूप ज्ञान को कहते हैं।

बृहन्नारदीय में आया है—

तस्य शक्तिः परा विष्णोर्जगत्कार्यपरिक्षमा।
भावाभावस्वरूपा सा विद्याविद्येति गीयते॥

देवीभागवत में आया है—

विद्याविद्येति देव्या द्वे रूपे जानीहि पार्थिव।
एकया मुच्यते जन्तुरन्यया बध्यते पुनः॥

महाकामेशनयनकुमुदाह्लादकौमुदी—

महा कामेश शंकर के नयनों के लिये आह्लाद सुखातिशय प्रदान करनेवाली चन्द्रिका सुखातिशय मोक्षरूप।

भक्तहार्दतमोभेदभानुमद्भानुसंततिः।
शिवदूती शिवाऽऽराध्या शिवमूर्तिःशिवंकरी ॥१३६

भक्तहार्द·········शिवंकरी=भक्तों के हृदय में अज्ञानरूपी आवरण शक्ति को नाश करने में (हटाने में) सूर्य की किरणों के समान जिसके ज्ञानरूपी प्रकाश की परम्परा है।

शिवदूती=सन्देश प्रापणार्थ शिवजी को दूत बनाकर भेजनेवाली। जैसे,

> यतो नियुक्तो दौत्येन तया देव्या शिवः स्वयम्।
> शिवदूतीति लोकेऽस्मिंस्ततः सा ख्यातिमागता॥

शिवजी ने उसे अपना दूत बनाया।

शिवाऽऽराध्या=शिवने जिसकी उपासना की है शिवाराध्या देवी।

ब्रह्माण्डपुराण में आया है—

> शिवोऽपि यां समाराध्य ध्यानयोगबलेन च।
> ईश्वरः सर्वसिद्धीनामर्धनारीश्वरोऽभवत्॥

शंकर की उपासित चतुष्कूट जो अक्षर है उन्हें उनसे देवी की उपासना की है।

शिवमूर्ति=शिव ही है मूर्ति जिसकी शरीरार्द्धं शम्भोरपरा मङ्गलमयी जिसकी मूर्ति है। मोक्षरूप मूर्ति है।

शिवङ्करी=कल्याण को करनेवाली, मङ्गल को करनेवाली।

शिवप्रिया शिवपरा शिष्टेष्टा शिष्टपूजिता।
अप्रमेया स्वप्रकाशाऽमनोवाचामगोचरा॥१४०॥

शिवप्रिया=शिव है प्रिय जिसको।

शिवपरा=जिसका लक्ष्य शिव है।

शिष्टेष्टा=शिष्टानि अनुशिष्ट विहित कल्प जो है उक्त कर्म उन्हें

करनेवालों को इष्टा प्रिय है अच्छे कार्यों को प्रेम करनेवाली। अच्छे कर्म करनेवाले महानुभावों से पूजित।

शिष्टैरिष्टा=पूजिता।

अप्रमेया=जो परिच्छिन्न नहीं है जिसका प्रमाण नहीं हो सकता है नापी नहीं जा सकती।

स्वप्रकाशा=आत्मा को प्रकाश करनेवाली—अत्रायम्पुरुषः स्वयं ज्योतिरभवत्। (वेदमन्त्र) अ

मनोवाचामगोचरा=मन और वाणी से अगोचर।

जैसे आया है—

"यतो वाचो निवर्त्तन्ते अप्राप्य मनसा सह"

जैसे विष्णुपुराण में प्रह्लाद का वचन है—

यातीतगोचरा वाचां मनसाञ्चाविशेषणा।
ज्ञानिज्ञानपरिच्छेद्या वन्दे तामीश्वरीम्पराम्॥

चिच्छक्तिश्चेतनारूपा जडशक्तिर्जडात्मिका।
गायत्री व्याहृतिः सन्ध्या द्विजवृन्दनिषेविता॥१४१

चिच्छक्ति ...... निषेविता—

चिच्छक्ति=चिच्छक्तिरूप। ज्ञानशक्ति।

देवीभागवत में इसका वर्णन आया है—

वर्तते सर्वभूतेषु शक्तिः सर्वात्मना नृप।
शववच्छक्तिहीनस्तु प्राणी भवति सर्वदा॥
चिच्छक्तिः सर्वभूतेषु रूपं तस्यास्तदेव हि।

सम्पूर्ण प्राणीमात्र में रहनेवाली प्रकाशरूपा जो शक्ति है उसे कहते हैं।

चेतनारूपा=भगवान की जो विमल शक्ति को ही चेतनारूपा कहते हैं।

देवी भागवत में आया है—

सर्वचैतन्यरूपान्तामाद्यां विद्याञ्च धीमहि।

विष्णुपुराण में आया है—

शक्तयः सर्वभावानामचिन्त्यज्ञानगोचराः।
शतशो ब्रह्मणस्तास्तु सर्गाद्या भावशक्तयः॥
भवन्ति तपसांश्रेष्ठ पावकस्य यथोष्णता।
निमित्तमात्रमेवासौ सृज्यानां सर्गकर्मणि॥
प्रधानकारणीभूता यतो वै सृज्यशक्तयः।
निमित्तमात्रं मुक्त्वैकं नान्यत्किञ्चिदपेक्षते॥

जडशक्तिः=दृश्यमात्र जो आत्मस्वरूप है उसे जडशक्ति कहते हैं।

गायत्री=चतुर्विंशति (२४) अक्षरोंवाली कहा है।

गीता में—"गायत्री छन्दसामहम्।"

गोपकन्या=गायत्री। इसका कूर्मपुराण में वर्णन आया है। ब्रह्मा की पत्नी का नाम गायत्री।

गायन्तं त्रायते यस्मात् गायत्री।

पद्मपुराण में गायत्री का प्रकरण आता है—

"विशेषात्पुष्करेस्नात्वाजपेन्मांवेदमातरम्।"

देवीपुराण में आया है—

"गायनाद् ग्रसनाद्वाऽपि गायत्री त्रिदशार्चिता"

व्याहृतिः=व्याहरण=उच्चारण रूपवाली।

वायुपुराण में इसका वर्णन आया है—

"मयाऽभिव्याहृतं यस्मात्त्वं चैव समुपस्थिता।
तेन व्याहृतिरेत्येवं नामतः सिद्धिमेष्यति॥

सन्ध्या=सन्धि में जो भजन किया जाता है उसको सन्ध्या कहते हैं।

भारद्वाजस्मृति में कहा है—

ब्रह्माद्याकारभेदेन या भिन्ना कर्मसाक्षिणी।
भास्वतीश्वरशक्तिः सा सन्ध्येत्यभिहिता बुधैः॥

अन्यत्र भी—

गायत्री सशिरास्तुरीयसहिता सन्ध्यामयीत्यागमै—
राख्याता त्रिपुरे त्वमेव महतां शर्मप्रदा कर्मणाम्॥

अतएव सन्धिकाल में उपास्य देवता परक सन्ध्या शब्द है।

"सम्यग्ध्यायते परमात्मा इष्टदेवता वाऽस्यां सा सन्ध्या।"

कालिका में सन्ध्या शक्ति का वर्णन आया है—

"तदा तन्मनसोजाता चारुरूपा वरानना।
नाम्ना सन्ध्येति विख्याता सायंसन्ध्या जयन्तिका॥"

इस ब्रह्म का ध्यान करने से इसका नाम सन्ध्या पड़ा। संसार के जीवन को आत्मा की सन्धि में मिलाने का नाम सन्ध्या है।

रेणुकापुराण में योग का नाम सन्ध्या है।

इडैकास्य महाकाली महालक्ष्मीस्तु पिङ्गला।
एकवीरा सुषुम्णेयमेवं सन्ध्या त्रयात्मिका॥

एक वर्ष की कन्या को भी सन्ध्या कहते हैं।

द्विजवृन्दनिषेविता=द्विजवृन्द से सेवित सन्ध्यास्वरूप भगवती की द्विजवृन्द सदैवाराधना करते हैं।

रेणुका—

"सन्ध्यैका सर्वदा दैवैर्द्विजैर्वन्द्या महात्मभिः।"

ब्रह्मसूत्र में आया है—

सन्ध्ये सृष्टिराह हीति। दोकी एक अवस्था का नाम सन्धि है।

तत्त्वासना तत्वमयी पञ्चकोशान्तरस्थिता।
निःसीममहिमा नित्ययौवना मदशालिनी॥१४२॥

तत्त्वासना=शिवादिक्षित्यन्त षड्विंशति तत्त्व में रहनेवाली। सम्पूर्णतत्त्व जिसमें से निकलते हैं।

तत्त्वमसि इत्यादि वाक्यों से निर्गुण ब्रह्म का जो लक्ष्य किया गया है उस लक्ष्य में टिकी हुई।

तत्त्वमयी=तत्त्वरूपा पञ्चतत्त्वरूपा यद्वा पञ्चकोशस्वरूपा।

ज्ञानार्णव में लिखा है—

श्रीविद्या च परंज्योतिः परा निष्कलशाम्भवी।
अजपा मातृका चेति पञ्च कोशाःप्रकीर्तिताः॥

उनमें रहनेवाली। श्री चक्रराज में ये पञ्च देवता की पूजा होती है। उसमें पञ्चकोष होते हैं। यद्वा पञ्चकोश-अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय। इन पाँच कोषों में स्थित रहनेवाली।

निस्सीममहिमा=जिसकी महिमा निस्सीम है निरवधिक है।

अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधिगृणन्।
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः॥

नित्ययौवना=कालत्रय में भी जिसमें अवस्थात्रयकृत विकार नहीं होता है। सदा एक ही यौवनावस्था में स्थित।

मदशालिनी=आनन्द विषय की अवस्थायुक्त उससे शोभायमान है।

मदघूर्णितरक्ताक्षी मदपाटलगण्डभूः।
चन्दनद्रवदिग्धाङ्गा चाम्पेयकुसुमप्रिया ॥१४३॥

मदघूर्णितरक्ताक्षी=मद बाहर के विषयों से विमुख जो आत्म मद से जिसके लाल नेत्र घूर्णित हैं।

मद=कस्तूरी से नेत्र घूम रहे हैं। मद के घूमने से जिसके नेत्र में लालिमा आ रही है। ब्रह्मानन्द के मद में मस्त होने से जिसके नेत्रों में लालिमा छा गई है।

मदपाटलगण्डभूः=कस्तूरी से पाटल सज्जित हो गये हैं कपोल जिसके।

चन्दनद्रवदिग्धाङ्गी=चन्दन के द्रव से अङ्ग दिग्ध हैं। सम्पूर्ण अङ्गों में चन्दन का लेप है।

चाम्पेमकुसुमप्रिया=चम्पा सम्बन्धि पुष्प जिसे प्रिय हैं।

कुशला कोमलाकारा कुरुकुल्ला कुलेश्वरी।
कुलकुण्डालया कौलमार्गतत्परसेविता ॥१४४॥

कुशला……सेविता :—

सृष्टि के कार्यों में कुशल।

कोमलाकारा=कोमल है आकार अवयव जिसका सुकुमार अवयववाली।

कुरुकुल्ला=कुरुकुल्लाख्य नाम की देवी।

प्रमाण—ललितास्तव रत्न में लिखता है—

कुरुविन्दतरणिनिलयां कुलाचलस्पर्धिकुचनमन्मध्याम्।
कुङ्कुमविलिप्तगात्रीं कुरुकुल्लां मनसि कुर्महे सततम्॥

कुरुकुल्ला यह है।

कुलेश्वरी=मातृ मानमेय के समूह का नाम कुल है। यद्वा, मूलाधार से लेकर कर्णिका के वीच में जो बिन्दु है कुलकुण्ड उसे कहते हैं उस समूह की ईश्वरी। उस मातृमान मेय की ईश्वरी कुलेश्वरी वह है आलप जिसका। जैसे शंकराचार्य ने सौन्दर्य-लहरी में कहा है—

'अवाप्य स्वां भूमिं भुजगभिममध्युष्टवलयं।
स्वमात्मानं कृत्वा स्वपिषि कुलकुण्डे कुहरिणीति'॥

कुलकुण्डालया=कर्णि।

कौलमार्गतत्परसेविता—

यस्य यस्य हि या देवी कुलमार्गेण संस्थिता।
तेन तेन च सा पूज्या वलिगन्धानुलेपनैः॥

जिस-जिस के कुलमार्ग की जो शक्ति है उस-उस के कुलमार्ग से अपनी आराध्या की पूजा करती है। यद्वा, तन्त्र में तीन प्रकार की पूजा बताई है। समयाचार की, कौलाचार की और मिश्राचार की।

कौलाचार माग में तत्पर जो हैं उनसे सेवित।

कुमारगणनाथाम्बा तुष्टिः पुष्टिर्मतिर्धृतिः।
शान्तिः स्वस्तिमती कान्तिर्नन्दिनी विघ्ननाशिनी॥ १४५॥

कुमारगणनाथाम्बा=कार्तिकेय और गणेश की माता।

अव्यक्तं तु उमा देवी श्रीर्वा पद्मनिभेक्षणा।
तत्संयोगादहंकारः स च सेनापतिर्गुहः॥

अध्यात्मिक अर्थ यह है।

तुष्टिः=जिस शक्ति से सन्तोष होता है—

"या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः॥

पुष्टिः—

बुद्धिः कीर्तिर्धृतिर्लक्ष्मीः शक्तिः श्रद्धा मतिःस्मृतिः।
सर्वेषाम्प्राणिनां साम्वा प्रत्यक्षं तन्निदर्शनम् ।।

पद्मपुराण में देवी के क्षेत्र में आया है—

'तुष्टिर्वस्त्रेश्वरे तथा। देवदारुवने पुष्टिःधृतिः पिण्डारकक्षेत्रे। इस प्रकार उन-उन क्षेत्रों की अधिष्ठात्री नाम से बतलाया है।

मतिः=मति का निर्वचन।

वायुपुराण में आया है—

"विभर्त्ति मानं मनुते विभागं मन्यतेऽपि च।
पुरुषो भोगसम्बद्धस्तेन चाऽसौ मतिः स्मृता ।।

मतिस्वरूपका सूक्त संहिता में आया है—

यानुभूतिरुदिता मतिः परा वेदमाननिरताः शुभावहा।
तामतीव सुखदां वयं शिवां केशवादिजनसेवितां नुमः ।।

शान्ति=सम्पूर्ण जीवों में शान्ति देनेवाली।

मलमायाविकारौघशान्तिः पुंसः पुनर्यया।
सा कला शान्तिरित्युक्ता साधिकारास्पदं पदम् ।।

जीवो यत्र विशुद्धयेत सा=जीव जहां पर विशुद्ध हो जाता है वह शान्ति कला है।

स्वस्तिमती=क्षेम करनेवाली।

कान्तिः=इच्छाशक्ति, कमनीयवर्णा।

नन्दिनी=आनन्दित करनेवाली।

विघ्ननाशिनी=विघ्नों को दूर करनेवाली।

तेजोवती त्रिनयना लोलाक्षी कामरूपिणी ।
मालिनी हंसिनी माता मलयाचलवासिनी ॥१४६॥

तेजोवती=तेज: स्वरूपा ।

त्रिनयना=तीन नेत्र को धारण करनेवाली ।

प्रत्यक्ष अनुमान और आगम रूप शब्द प्रमाणों से देखने योग्य जानी जानेवाली ।

लोलाक्षी=चञ्चल नेत्रवाली ॥

कामरूपिणी=कामाभिमानी देवता ।

कामः क्रोधस्तथा लोभो मदोमोहश्च पञ्चमः ।
मात्सर्यं षष्ठमित्याहुः पैशुन्यं सप्तमं तथा ॥
असूया त्वष्टमीज्ञेया इत्येता अष्ट मातरः ।

मालिनी=पार्वती विवाह प्रकरण में सप्तपदी के समय में पार्वतीजी को मालिनी नाम से सखियों को कहा है ।

वामनपुराण में आया है—

ततो हराङ्घ्रिर्मालिन्या गृहीतो दायकारणात् ।
किं याचसे ददाम्येष मुञ्चस्वेति हरोऽब्रवीत् ॥
मालिनी शंकरम्प्राह मत्सख्यै देहि शंकर ।
सौभाग्यं निजगोत्रीयं ततोमोक्षमवाप्स्यसि ॥
अथोवाच महादेवो दत्तं मालिनि मुञ्च माम् ।

मालिनी छन्दः शास्त्र में एक वृत्त विशेष है । मालाकार की

स्त्री को भी मालिनी कहते हैं। यद्वा, मालिनी सप्तवर्षीया कन्या को भी कहते हैं।

हंसिनी=हंस के सदृश गमन करनेवाली।

हंस यह अजपा मन्त्र जिससे सिद्ध हो जाता है।

माता=सम्पूर्ण संसार को पैदा करनेवाली या मातृका रूपा— अकारादि क्षकारान्त रूपवाली।

"मन्त्राणां मातृभूता च मातृका परमेश्वरी ॥"

मलयाचलवासिनी—मलयाचल पर्वत में निवास करनेवाली।

सुमुखी नलिनी सुभ्रूः शोभना सुरनायिका।
कालकण्ठी कान्तिमती क्षोभिणी सूक्ष्मरूपिणी १४७

सुमुखी—मुख जिसका अच्छा है।

वेद में आया है—

ब्रह्मविद् इव ते सौम्य मुखमाभाति।

नलिनी— कमल रूपवाली। हाथ, पैर, मुख नेत्र जिसके कमल के समान, इसलिये कमल रूपवाली।

नलिनी—नन्दिनी नलिनी सीता। नलराजा ने जब षोडशी की उपासना की तब यह नाम आया है।

सुभ्रूः—सुष्ठु भ्रूवाली। अच्छी भौहेंवाली।

शोभना—सौन्दर्यवाली।

सुरनायिका—देव माता।

कालकण्ठी—कालःकण्ठो यस्य सा—शिवजी की शक्ति।

पश्यतां देवसंघानां पिशाचोरगरक्षसां।
धृतं कण्ठे विषं घोरं कालकण्ठस्ततोऽभ्यहम् ॥

देवीपुराण में ६८ तीर्थ के प्रकरण में आया है—"कालञ्जरे कालकण्ठः।"

कालकण्ठी—मधुर स्वर की ध्वनि जिसके कण्ठ से निकलती है मञ्जुल ध्वनिवाली।

कान्तिमती—कान्ति जिससे प्रकाश हो।

क्षोभिणी—सृष्टि को सञ्चालन करानेवाली।

प्रकृतिं पुरुषञ्चैव प्रविश्यात्मेच्छया हरिः।
क्षोभयामास भगवान् सर्गकाले व्यपाश्रितः ॥

सूक्ष्मरूपिणी—जिसके रूप को नहीं जान सकते। "अणोरणीयान्।" सूक्ष्म एक हवन का भी नाम है। बारह प्रकार के हवनों में सूक्ष्मरूप से अन्तर्याग हवन आया है। देवी के तीन रूप हैं। स्थूल, सूक्ष्म और पर यह सूक्ष्मरूपवाली।

वज्रेश्वरी वामदेवी वयोवस्थाविवर्जिता।
सिद्धेश्वरी सिद्धविद्या सिद्धमाता यशस्विनी ॥१४८

वज्रेश्वरी—जालन्धर पीठ की अधिष्ठात्री देवी वज्रेश्वरी नाम की है। यद्वा, इन्द्र को वज्र देनेवाली।

जब इन्द्र ने जल में तपस्या की उस जल से देवी वज्र को हाथ में लेकर इन्द्र को वरदान रूप में देकर अन्तर्धान हो गई।

वामदेवी—शिवजी की शक्तिरूपा।

वामा—सुन्दरी देवी।

वयोवस्थाविवर्जिता—वय (ऊमर) अवस्था दशा इनसे वर्जित एक अवस्था में रहनेवाली।

सिद्धेश्वरी—गोरक्ष आदि सिद्धों के स्वामिनी।

सिद्धविद्या—पञ्चदशी रूपा सिद्धमाता, सिद्धों की माता।

यशस्विनी—कीर्ति प्रदान करनेवाली।

विशुद्धचक्रनिलयाऽऽरक्तवर्णा त्रिलोचना।
खट्वाङ्गादिप्रहरणा वदनैकसमन्विता ॥१४६॥

विशुद्धचक्रनिलया—विशुद्ध चक्र में निवास करनेवाली माता।

ग्रीवाकूपे विशुद्धौ नृपदलकमले श्वेतरक्तां त्रिनेत्रां।
हस्तैः खट्वाङ्गखड्गौत्रिशिखमपि महाचर्म संधारयन्तीम् ॥
वक्त्रेणैकेन युक्तां पशुजनभयदां पायासान्नैकसक्ताम्।
त्वक्स्थां वन्देऽमृताद्यैः परिवृतवपुषं डाकिनीं वीरवन्द्याम् ॥

षोडशचक्र दल की कर्णिका में जिसका निवास है।

आरक्तवर्णा—जिसके चारों तरफ रूप में लालिमा—

त्रिलोचना—तीन नेत्रों को धारण करनेवाली।

"बालरविद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम्।"

खट्वाङ्गादिप्रहरणा—खड्ग आदि जिसके प्रहार के अस्त्र है। साधकों के शत्रुओं को खाटी के डण्डे से प्रहार करनेवाली।

वदनैकसमन्विता—एक ही है मुख जिसका।

पायसान्नप्रिया त्वक्स्था पशुलोकभयंकरी ।
अमृतादिमहाशक्तिसंवृता डाकिनीश्वरी ॥१५०॥

पायसान्नप्रिया—पापसान्न से जिसकी पूर्ति होती है। पशु-लोक को भय देनेवाली।

अमृतादि—अमृताकर्षिणी इन्द्राकर्षिणी आदि शक्तियों से युक्त घेरी हुई।

डाकिनीश्वरी—डाकिनी नाम की शक्ति।

अनाहताब्जनिलया श्यामाभा वदनद्वया ।
दंष्ट्रोज्ज्वलाक्षमालाधरा रुधिरसंस्थिता ॥१५१॥

अनाहताब्ज—हृदय में द्वादश कलात्मक वाला अनाहत चक्र में राकिनी नामकी योगिनी रहती है उसका ध्यान इस प्रकार है—

हृत्पद्मे भानुपत्रे द्विवदनलसितां दंष्ट्रिणीं श्यामवर्णा-।
मक्षं शूलं कपालं डमरुमपि भुजैर्धारयन्तीं त्रिनेत्राम् ॥
रक्तस्थां कालरात्रिप्रभृतिपरिवृतां स्निग्धभक्तैकसक्तां।
श्रीमद्वीरेन्द्रवन्द्याभभिमतफलदां राकिनीम्भावयामः ॥

यह जो ध्यान बतलाया है इस स्वरूप में राकिनी रहती है।
अनाहत चक्र में रहनेवाली।
श्यामाभा=श्यामा रूप की जिसकी कान्ति है।
वदनद्वया=दो मुखवाली।

दंष्ट्रोज्ज्वला=जिसके चमकीली द्रंष्ट्रा दन्त पंक्ति से उज्ज्वल शोभावाली।

अक्षमालादिधरा=अक्षमालादि चार आयुधों को धारण करनेवाली चक्र शूल गदादि।

रुधिरशोणिते संस्थिता।

कालरात्र्यादिशक्त्यौघावृता स्निग्धौदनप्रिया।
महावीरेन्द्रवरदा राकिण्यम्बास्वरूपिणी ॥१५२॥

कालरात्र्यादि—कालरात्रि नाम की कोई शक्ति है। उनके समूह से घिरी हुई—वराहपुराण में आया है।

या सा नीलगिरिं याता तपसे धृतमानसा।
रौद्री तमोभवा शक्तिस्तस्याः शृणु धरे व्रतम् ॥
रौद्री तपोरता देवी तामसी शक्तिरुत्तमा।
संहारकारिणी नाम्ना कालरात्रीति तां विदुः ॥

वह संहार की शक्ति आदि जिसके चारों तरफ है। उसके समूह से वेष्टित है।

स्निग्धौदनप्रिया=घृतादि से प्लुत जो ओदन है वह उसका प्रियं है।

महावीरेन्द्रवरदा=महावीरेन्द्र वीरों में जो महावीर जो प्रह्लाद, इन्द्र इनको वर देनेवाली।

जैसे देवीभागवत में आया है—

शक्रप्रह्लादयोर्दिव्यवर्षं शतं युद्धे जाते इत्यादि—

इन्द्र और प्रह्लाद का दिव्यसौ वर्ष तक युद्ध हुआ। इसके पीछे भगवती उमा की दोनों ने स्तुति की इन दोनों को उमा ने वर दिया। इसलिये महावीरेन्द्रवरदा भगवती का नाम हुआ।

राकिण्यम्बा=राकिणी नाम की अम्बा के स्वरूपवाली।

मणिपूराब्जनिलया वदनत्रयसंयुता।
वज्रादिकायुधोपेता डामर्यादिभिरावृता ॥१५३॥

मणिपूरा—मणिपूर का दशदल कमल जो नाभि में हैं। वहाँ लाकिनी नाम की योगिनी रहती है जिसका वर्णन इस प्रकार आया है—

"दिक्पत्रे नाभिपद्मे त्रिवदनविलसद्दंष्ट्रिणीं रक्तवर्णां।
शक्तिं दम्भोलिदण्डावभयमपि भुजैर्धारयन्तीं महोग्राम् ॥
डामर्याद्यैः परीतां पशुजनभयदां मांसधात्वैकनिष्ठां।
गौडान्नासक्तचित्तां सकलसुखकरीं लाकिनीम्भावयामः ॥

मणिपूर जो कमल है उसमें स्थान वाली।

वदनत्रयसंयुता—तीन मुखवाली। वज्रादिक चार भुशुण्डी, खड्ग, कपाल जिसके पास हैं।

डामर्यादि—डामरी से लेकर फटकारिणी जो शक्ति है उनसे घिरी हुई।

रक्तवर्णा मांसनिष्ठा गुडान्नप्रीतमानसा।
समस्तभक्तसुखदा लाकिन्यम्बास्वरूपिणी ॥१५४॥

रक्तवर्णा—लालवर्ण लोहित वर्णवाली, लालिमा वर्णवाली।

मांसनिष्ठा—मांस की अभिमानी देवता।

गुडान्नप्रीतमानसा—गुड से मिश्रित अन्न से प्रीति रखनेवाली।

सम्पूर्ण भक्तों को सुख देनेवाली लाकिनी नाम की अम्बा का स्वरूपवाली।

स्वाधिष्ठनाम्बुजगता चतुर्वक्त्रमनोहरा।
शूलाद्यायुधसम्पम्ना पीतवर्णातिगर्विता ॥१५५॥

स्वाधिष्ठान जो छै दल का है उसमें काकिनी नाम की योगिनी रहती है।

षट्दलात्मक स्वाधिष्ठान कमल में काकिनी नामक योगिनी निवास करती है। जिसका वर्णन यह है—

स्वाधिष्ठानख्यपद्मे रसदललसिते वेदवक्त्रां त्रिनेत्राम्।
हस्ताभ्यां धारयन्तीं त्रिशिखगुणकपालाभयान्यात्तगर्वाम्॥
मेदोधातुप्रतिष्ठामलिमदमुदितां बन्धिनीमुख्ययुक्तां।
पीतां दध्योदनेष्टामभिमतफलदां काकिनीम्भावयामः॥

स्वाधिष्ठान कमल में चार मुख से शोभित। शूलादि आयुधों से सजी हुई।

४ पीतवर्णा—पीतवर्णवाली।

५ अतिगर्विता—अपने सौन्दर्य से गर्वित।

मेदोनिष्ठा मधुप्रीता बन्धिन्यादिसमन्विता।
दध्यन्नासक्तहृदया काकिनीरूपधारिणी ॥१५६॥

मेदोनिष्ठा—मेदधातु में जिसकी निष्ठा है।

मधुप्रीता—मद्य या सहद के पान करने से प्रसन्न हुई।

वन्धिन्यादिसमन्विता - वन्धिन्यादि शक्तियों से युक्त।

दध्यन्न—दधि चावल ओदन में जिसकी आसक्ति है। ऐसी काकिनी नाम की अम्बा स्वाधिष्ठान में विराजमान रहती है।

मूलाधाराम्बुजारूढा पञ्चवक्त्राऽस्थिसंस्थिता।
अङ्कुशादिप्रहरणा वरदादिनिषेविता ॥१५७॥

मूलाधार चतुर्दल कमल में शाकिनी नाम की योगिनी निवास करती है। जैसे उसके स्वरूप का वर्णन किया गया है—

मूलाधारस्थपद्मे श्रुतिदललसिते पञ्चवक्त्रां त्रिनेत्रां।
धूम्राभामस्थिसंस्थां सृणिमपि कमलं पुस्तकंज्ञानमुद्राम् ॥
विभ्राणां बाहुदण्डैः सुललितवरदापूर्वशक्त्या वृतां तां।
मुद्गान्नासक्तचित्तां मधुमदमुदितां साकिनीम्भावयामः ॥

उक्त श्लोक में साकिनी का ध्यान वतलाया गया है। मूलाधार कमल की कर्णिका में पांच मुखों वाली भगवती हड्डियों में निवास करती है। अस्थि की अधिष्ठात्री देवी अंकुशादि चार आयुधों को धारण करनेवाली।

वरदादिनिषेविता—अङ्कुशादि एवं वरदादि जो सिद्धियां उनसे आवृत घिरी हुई।

मुद्गौदनासक्तचित्ता साकिन्यम्बास्वरूपिणी ।
आज्ञाचक्राब्जनिलया शुक्लवर्णा षडानना ॥१५८॥

मुद्गौदना—मूंग की दाल से मिला हुआ जो चावल है उससे भोग लेनेवाली मुद्गौदन के सम्बन्ध में कहा है। यह लक्षण कुमारसंहिता में—

सुशालितण्डुलप्रस्थं तदर्धं मुद्गभिन्नकम् ।
चतुःपलं गुडं प्रोक्तं तन्मानं नारिकेलकम् ॥
मुष्टिमात्रं मरीचं स्यात् तदर्धं सैन्धवं रजः ।
तदर्धं जीरकं विद्यात्कुडवं गोघृतं विदुः ॥
गोक्षीरेण स्वमात्रेण संयोज्या कमलासनम् ।
मन्दाग्निपचनादेव सिद्धान्नमिदमुत्तमम् ॥

यह शाकिन्यम्बा का स्वरूपवाली आज्ञाचक्र में रहती है। आज्ञाचक्र में रहनेवाली योगिनी को हाकिन्यम्बा कहा है। उसका स्वरूप यह है—

"भ्रूमध्ये विन्दुपद्मे दलयुगकलिते शुक्लवर्णां कराब्जै-
र्विभ्राणां ज्ञानमुद्रां डमरुकममलामक्षमालां कपालम् ॥
षट्चक्राधारमध्यां त्रिनयनलसितां हंसवत्यादि युक्तां ।
हारिद्रान्नैकसक्तां सकलसुखकरीं हाकिनीं भावयामः ।"

किस शाकिनी की भावना यह उपर्युक्त श्लोक में बताया गया है।

शुक्लवर्ण की है एवं छै उसके मुख है।

मज्जासंस्था हंसवती मुख्यशक्तिसमन्विता ।
हरिद्रान्नैकरसिका हाकिनीरूपधारिणी ॥१५६॥

मज्जा में अधि रहनेवाली ।

हंसवती - हंसवती आदि शक्तियों से युक्त ।

हरिद्रान्न के भोग को लेनेवाली ।

ऐसी हाकिनी नाम की देवी आज्ञाचक्र में निवास करती है ।

सहस्रदलपद्मस्था सर्ववर्णोपशोभिता ।
सर्वायुधधरा शुक्लसंस्थिता सर्वतोमुखी ॥१६०॥

ब्रह्मरन्ध्र सहस्रदल पद्म में याकिनी नाम की योगिनी रहती है उसका स्वरूप यह आया है—

मुण्डव्योमस्थपद्मे दशशतदलके कर्णिकाचन्द्रसंस्थां ।
रेतोनिष्ठां समस्तायुधकलितकरां सर्वतो वक्त्रपद्मां ॥
आदिक्षान्तार्णशक्तिप्रकटपरिवृतां सर्ववर्णां भवानीं ।
सर्वान्नासक्तचित्तां परशिवरसिकां याकिनीम्भावयामः ॥

सहस्रदल पद्म में जिसकी स्थिति है वह याकिनी शक्ति जिसमें सब प्रकार का रङ्ग है। पाटलश्याम रक्तपीत आदि रङ्गों से शोभित चित्रविचित्र वर्णवाली। यद्वा, अकारादिक्षकारान्त वर्णों-वाली पचास अक्षरों युक्त ।

ताभिस्सृताभिः ।

शतसंख्या के दश जो दल है उनमें स्थित ।

सर्वायुधधरा=सब प्रकार के आयुधों को धारण करनेवाली। श्रुति में—

सहस्राणि सहस्रधा बाह्वोस्तव हेतयः।

शुक्रवीर्यादि धातु की अभिमानी देवता है। अर्थात् शुक्र में जिसकी स्थिति होती है।

सर्वतोमुखी=चारों दिशाओं में जिसका मुख है—सर्वतोऽक्षिशिरोमुखं—जिसके लिये श्रीमद्भगवद्गीता में आया है।

सर्वौदनप्रीतचित्ता याकिन्यम्बास्वरूपिणी।
स्वाहा स्वधा मतिर्मेधा श्रुतिःस्मृतिरनुत्तमा ॥१६१

सर्वौदनप्रीतचित्ता—पायस से हरिद्रान्न तक सब अन्नों से जिनकी तुष्टि होती है। ऐसी याकिनी नाम की अम्बा। स्वाहा देवहवि में प्रयुक्त की जानेवाली।

जैसे मार्कण्डेयपुराण में आया है—

सोपसंस्था हविःसंस्था पाकसंस्थाश्च सप्त याः।
तास्त्वदुच्चारणाद्देवि क्रियन्ते ब्रह्मवादिभिः॥
यस्याः समस्तसुरता समुदीरणेन
तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि।
स्वाहाऽसि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतु-
रुच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च॥

स्वाहा स्वधा मतिर्मेधाश्रुतिःस्मृतिरनुत्तमा।

जैसे मार्कण्डेयपुराण में आया है—

"मेधाऽसि देवि विदिताऽखिलशास्त्रसारा"

ब्रह्मणः सहजं रूपं नित्यैषा शक्तिरव्यया।

स्मृतिरूपाभगवती।

या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता।

स्मृतिःसंस्मरणाद्देवि।

अनुत्तमा=जिससे कोई उत्तम नहीं।

न तत्समश्चाभ्यधिकश्चदृश्यते इति श्रुतेः

न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो।

लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभावः।

जैसे देवी भागवत में आया है—

रुद्रहीनं विष्णुहीनं न वदन्ति जनास्तथा।

शक्तिहीनं यथा सर्वे प्रवदन्ति नराधमम्॥

पुण्यकीर्तिः पुण्यलभ्या पुण्यश्रवणकीर्तना।

पुलोमजार्चिता बन्धमोचनी बन्धुरालका ॥१६२॥

पुण्यकीर्तिः=पुण्य व जिसके कीर्तन करने से पुण्य मिलता है। या पुण्यात्मा से जिसका कीर्तन किया जाता है।

"पश्यन्ति पुण्यपुञ्जा ये ये वेदान्तास्तपस्विनः।"

रागिणो नैव पश्यन्ति देवीं भगवतीं शिवाम्॥

पुण्यलभ्या=पुण्य से जिसकी प्राप्ति होती है।

पुण्यश्रवणकीर्त्तना=जिसके श्रवण कीर्तन से पुण्य मिलता है।

पुलोमजा=इन्द्राणी से जिसकी पूजा की गई देवी। देवीभाग-

वत में इसकी कथा है। नहुष जिस वक्त राज्यशासन कर रहा था उस वक्त इन्द्र की प्राप्ति के लिये इन्द्राणी ने भगवती का समाराधन किया।

"जग्राह मन्त्रं विधिवद्गुरोर्देव्याः सुसाधनम्।
विद्यां प्राप्य गुरोर्देवी देवीं त्रिपुरसुन्दरीं॥
सम्यगाराधयामास बलिपुष्पार्चनैः शुभैः।

अर्थात् इन्द्राणी ने भगवती की आराधना करने से इन्द्र को प्राप्त किया।

बन्धमोचिनी—कारागार से छुड़ानेवाली, अविद्या का जो बन्धन है उससे छुड़ानेवाली। जैसे हरिवंश में—अनिरुद्ध ने

एभिर्नामभिरन्यैश्च कीर्तिता ह्यसि शांकरि।
त्वत्प्रसादादविघ्नेन क्षिप्रं मुच्येय बन्धनात्॥
अवेक्षस्व विशालाक्षि पादौ ते शरणं व्रजे।
सर्वेषामेव बन्धानां मोक्षणं कर्तुमर्हसि॥
एवं स्तुता तदा देवी दुर्गा दुर्गपराक्रमा।
बद्धं बाणपुरे वीरमनिरुद्धं व्यमोचयत॥"

बन्धुरालका=उन्नत है अलक चूर्ण कुन्तल जिसके।

विमर्शरूपिणी विद्या वियदादिजगत्प्रसूः।
सर्वव्याधिप्रशमनी सर्वमृत्युनिवारिणी ॥१६३॥

प्रकाशात्मक ब्रह्म की जो स्फुरणा है उसे विमर्श कहते हैं।

जैसे एकोऽहं बहुस्याम् इत्यादि। इसी प्रकार सौभाग्यसुधोदय में आया है—

"स्वाभाविकी स्फुरत्ता विमर्शरूपाऽस्य विद्यते शक्तिः।
सैव चराचरमखिलं जनयति जगदेतदपि च संहरति॥

विमर्श के रूप का वर्णन इस प्रकार आया है—

वाचकेन विमर्शेन विना किम्वा प्रकाश्यते।
वाच्येनापि प्रकाशेन विना किंवा विमृश्यते॥

जैसे सूर्य और सूर्य की किरणें एक दूसरे के सापेक्ष रहते हैं। एक के विना दूसरा नहीं रह सकता, ऐसे विमर्श प्रकाश की स्थिति है।

मोक्ष स्वरूप को देनेवाली।

मोक्षप्रदज्ञान स्वरूपिणी होने से उसका नाम विद्या है।

मार्कण्डेयपुराण में—

विद्यासि सा भगवती परमा हि देवि।

वियदादिजगत्प्रसूः=आकाशादि सारी संसार को प्रगट करनेवाली। जैसे शैव तन्त्र में आया है—

मायाकार्यविवेकेन वेत्ति विद्यापदं यया।
सा कला परमा ज्ञेया विद्या ज्ञानक्रियात्मिका॥

इस कला का नाम विद्या है।

व्योम आदि सम्पूर्ण जगत् को प्रगट करनेवाली।

जैसे वेद में—आत्मनआकाशः सम्भूतः।

अधिभौतिक आधिदैविक आध्यात्मिक व्याधियों को नाश

करनेवाली अपमृत्यु कालमृत्यु आदि रूप सम्पूर्ण मृत्युओं को धारण करनेवाली।

जैसे श्रुति में आया है—

"ज्ञात्वा देवं मृत्युमुखात्प्रमुच्यते तरति शोकमात्मवित् अभयं वै जनक प्राप्तोऽसि।

अग्रगण्याऽचिन्त्यरूपा कलिकल्मषनाशिनी।
कात्यायनी कालहन्त्री कमलाक्षनिषेविता॥१६४॥

अग्रगण्या=सारी संसार की मूलकारण होने से यह अग्रगण्या है।

अचिन्त्यरूपा=त्रिगुणों से पृथक् होने से अचिन्त्यरूपवाली है।

कलिकल्मषनाशिनी—कलियुग के जो पाप हैं उनका नाश करनेवाली।

जैसे कूर्मपुराण में आया है—

"शमायालं जलं वह्नेस्तमसो भास्करोदयः।
शान्त्यै कलेरघौघस्य देवीनामानुकीर्तनम्॥

कात्यायनी—

कृतस्याखिलपापस्य ज्ञानतोऽज्ञानतोऽपिवा।
प्रायश्चित्तं परं प्रोक्तं पराशक्तेः पदस्मृतिः॥

भगवती के चरणों को स्मरण करने से सब प्रकार के पाप नष्ट होते हैं।

कालिकापुराण में—

कात्यायनी चोड्डियाने कामाख्या कामरूपके ।
पूर्णेश्वरी पूर्णगिरौ चण्डी जालन्धरे स्मृता ॥

देवीपुराण में कात्यायनी का निर्वचन इस प्रकार किया है—

कं ब्रह्म कंशिरः प्रोक्तमश्मसारं च कम्मतम् ।
धारणाद्वासनाद्वाऽपि तेन कात्यायनी मता ॥

कालहंत्री—मृत्यु को नाश करनेवाली ।

जैसे वेद में आया है—

ज्ञः कालकालो गुणी सर्वविद्यः ।

आत्मज्ञानी काल का नाश करनेवाला होता है ।

कमलाक्षनिषेविता=कमलाक्ष विष्णु द्वारा उपासित है । विष्णु की भी आराध्या है ।

पद्मपुराण में—

इन्द्रनीलमयीं देवीं विष्णुरर्चयते सदा ।

ताम्बूलपूरितमुखी दाडिमीकुसुमप्रभा ।
मृगाक्षी मोहिनी मुख्या मृडानी मित्ररूपिणी ॥१६५

ताम्बूलपूरितमुखी—"ताम्बूलेन पूरितं मुखंयस्याःसा" ताम्बूल मुख में जिसके हैं । पूजा के समय अर्पण किया जाता है ।

दाडिमीकुसुमप्रभा—दाडिमी के जो फूल हैं उसके समान है कान्ति जिसकी ।

मृगाक्षी=मृग के समान हैं नेत्र जिसके।

मोहिनी—सारी संसार को मोहन करनेवाली।

जैसे लघुनारदीयपुराण में—

यस्मादिदं जगत्सर्वं त्वया सुन्दरि मोहितम्।
मोहिनीत्येव ते नाम स्वगुणोत्थं भविष्यति।

या अमृत मथन करने में विष्णु ने जो मोहिनी रूप धरा था उसका यह वर्णन है।

मुख्या=सबसे प्रथम। ब्रह्माण्ड में।

"आदौ प्रादुरभूच्छक्तिर्ब्रह्मणो ध्यानयोगतः।
प्रकृतिर्नाम सा ख्याता देवानामिष्टसिद्धिदा॥"

मृडानी=सुखस्वरूप मनुष्यों के सुख को करनेवाली।

"जन सुखकृते सत्वोद्रिक्तौ मृडायनमोनमः"

मित्ररूपिणी=सूर्य के समान है रूप जिसका।

नित्यतृप्ता भक्तनिधिर्नियन्त्री निखिलेश्वरी।
मैत्र्यादिवासनालभ्या महाप्रलयसाक्षिणी॥१६६॥

नित्यतृप्ता—सर्वकाल में तृप्त। आत्मस्वरूप में तृप्त।

भक्तनिधि—जो उपासक हैं उसकी निधिरूप। निध्यै नमः। ऐसा आता है।

नियन्त्री—भक्तों की निधि और नियन्त्री सम्पूर्ण जगत् की नियामक चलानेवाली।

निखिलेश्वरी—सारे प्रपञ्च की ईश्वरी में भी मैत्री करुणा मुदिता उपेक्षा ये चार वासनाओं से जो प्राप्त होती है।

सुखी मनुष्यों में मित्रता।

दुःखी में करुणा।

पुण्यात्मा मनुष्यों में मुदिता।

पापी मनुष्यों की उपेक्षा—योग सूत्र (पात०)। जैसे—

मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्यापुण्यविषयाणां भावनातश्चित्तप्रसादनम् ॥

महाप्रलयसाक्षिणी—परम शिव का महाप्रलयकालीन ताण्डव है उसमें साक्षी देनेवाली। जैसे कहा भी है—

कल्योपसंहरण कल्पितताण्डवस्य
देवस्य खण्डपरशोः परभैरवस्य।
पाशाङ्कुशैक्षवशरासनपुष्पबाणैः
सा साक्षिणी विजयते तव मूर्तिरेका ॥

पराशक्ति—महेश्वर की मृत्यु का नाश करनेवाली सुमङ्गली "रियंवधूः।"

पराशक्तिः परानिष्ठा प्रज्ञानघनरूपिणी।
माध्वीपानालसा मत्ता मातृकावर्णरूपिणी ॥१६७॥

कामिकागम में आया है—

त्वगसृङ्मांसमेदोऽस्थिधातवः शक्तिमूलकाः।
मज्जशुक्रप्राणजीवधातवः शिवमूलकाः ॥

नवधातुरयं देहो नवयोनिसमुद्भवः ।
दशमी धातुरेकैव पराशक्तिरितीरिता ॥

या उत्कृष्ट शक्ति—

"परास्यशक्तिर्विविधैव श्रूयते
स्वाभाविकी ज्ञानवलक्रिया च ।"

लिङ्गपुराण में भी—

यस्य यस्य पदार्थस्य या या शक्तिरुदाहृता ।
सा सा विश्वेश्वरी देवी स स सर्वो महेश्वरः ॥
शक्तिमन्तः पदार्था ये ते वै शर्वविभूतयः ।
पदार्थशक्तयो या या स्ताता गौरींविदुर्बुधाः ॥

जितने पदार्थों में जो शक्ति है वह गौरी है ।

परानिष्ठा—उत्कृष्ट समाप्ति ज्ञानविशेष रूपा ज्ञान में जिसकी निष्ठा है ।

प्रज्ञानघनरूपिणी—प्रज्ञान घनरूपिणी ।

सर्वं कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते ।

सर्व कर्म और सारे जगत् की समाप्ति इसी में होती है ।

सत्यं ज्ञानमनन्तंब्रह्म—प्रज्ञान जिसका रूप है—"प्रज्ञानंब्रह्म ।" शुद्ध ब्रह्म जिसका स्वरूप है ।

स्वयं तिष्ठेदयं साक्षाद्ब्रह्मवित्प्रवरोमुनिः ।
ईदृशीयं परानिष्ठा श्रौती स्वानुभवात्मिका ॥

माध्वीपानालसा - अमृतमय वेदान्त का जो पान है इसमें लगी हुई ।

मत्ता="अहं ब्रह्मास्मीति" में मत्त है। भागवत में आया है—"वासो यथा"।

उस ब्रह्म के पान में ऐसा मत्त है कि मदिर संसार के व्यवहार उसे नरक के समान मालूम पड़ते हैं।

मातृकावर्णरूपिणी—अ से लेकर क्ष तक जो अक्षर है यही उसका स्वरूप है। या एक पञ्चाशत् मातृ का उसका स्वरूप है। या जिसको बतलानेवाले अक्षर है। मन्त्रों से ही भगवती का निरूपण होता है।

जैसे ज्ञानार्णव में आया है—

> अकारः प्रथमोदेवी क्षकारोऽन्त्यस्ततः परम्।
> अक्षमालेति विख्याता मातृकावर्णरूपिणी॥
> शब्दब्रह्मस्वरूपेयं शब्दातीतं तु जप्यते।

मातृका वर्णोंवाली है।

महाकैलासनिलया मृणालमृदुदोर्लता।
महनीया दयामूर्तिर्महासाम्राज्यशालिनी॥१६८॥

महाकैलासनिलया=महाकैलाश में परम शिव के साथ सप्तद्वीपादि में सर्व श्रेष्ठ स्थान पर विराजमान।

मृणालमुदुदोर्लता=कमलतन्तु इसके समान कोमल है हांथ-रूपी लता जिनकी।

महनीया=पूजा के योग्य। दया की मूर्ति सब पर दया करनेवाली।

महासाम्राज्यशालिनी=सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड पर आधिपत्य करने-वाली शक्ति।

आत्मविद्या महाविद्या श्रीविद्या कामसेविता।
श्रीषोडशाक्षरीविद्या त्रिकूटा कामकोटिका ॥१६६॥

आत्मज्ञान—उपासकों को जो इस भगवती की उपासना करते हैं उनको आत्मज्ञान देनेवाली।

आत्मज्ञानरूपत्वात् आत्मविद्या—इसीलिये इसका नाम महा-विद्या है। सम्पूर्ण प्रकार के अनर्थों को निवारण करने के कारण इसका नाम महाविद्या पड़ा है।

नवदुर्गात्मिकाविद्या श्री महाविद्या।

श्रीविद्या=पञ्चदशी स्वरूपा है।

श्रीविष्णुपुराण—

यज्ञविद्या महाविद्या गुह्यविद्या च शोभने।
आत्मविद्या च देवि त्वं विमुक्तिफलदायिनी।
आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिस्त्वमेव च॥

ये महाविद्या में आ गये।

कामसेविता=कामदेव ने जिसकी उपासना की थी।

श्रीषोडशाक्षरीविद्या=षोडशाक्षरी विद्या भी आप ही है। जिसमें षोडश अक्षर श्री के साथ लगते हैं वह षोडशाक्षरी।

अर्थात्—

कूटत्रय कलेवरा तादृशी सा विद्या।

त्रिकूटा—शक्तिकूट, कामकूट एवं वाग्भवकूट।

तीन नाड़ियां इडा, पिङ्गला और सुषुम्ना इनके समूह रूपा।

कामकोटिका=काम परम शिव तिसके ऊपर है। शिव और शक्ति का जो एक रस मिलना है वह कामकोटि है।

कटाक्षकिंकरीभूतकमलाकोटिसेविता।
शिरस्थिता चन्द्रनिभा भालस्थेन्द्रधनुःप्रभा ॥१७०

दृष्टि के पड़ने से (जिसकी जहां दृष्टि ब्रह्माविष्ण्वादि पर पड़ी वे किंकर बन गये)। किंकरीभूत करोड़ों लक्ष्मी महाशक्ति जिसके चरणों की सेवा कर रही हैं। शिर में ब्रह्मरन्ध्र में गुरुरूपा है। ब्रह्मरन्ध्र के नीचे भाल में जो चन्द्रमण्डल है उसमें चन्द्र चमक रहा है। चन्द्रमा हृल्लेखा बिन्दुरूप से रहता है।

इन्द्रधनुःप्रभा—इन्द्र के धनुष की प्रभावाली।

उक्त है—

दीपाकारोऽर्धमात्रश्च ललाटे वृत्त इष्यते।
अर्धचन्द्रस्तथाकारः पादमात्रस्तदूर्ध्वतः ॥

हृदयस्था रविप्रख्या त्रिकोणान्तरदीपिका।
दाक्षायणी दैत्यहन्त्री दक्षयज्ञविनाशिनी ॥१७१॥

हृदयस्था—हृदय में सूर्य की कान्ति की तरह शक्तिकूट जो है ऐसा उज्ज्वल सूर्य के समान कान्तिवाली।

त्रिकोणस्यान्तरे मध्ये दीपवद्दीपिका।

त्रिकोण के अन्दर दीप की लटाके के समान। जैसे तन्त्र राज में आया है—

नित्यानित्योदिते मूलाधारमध्येऽस्तिपावकः।
सर्वेषाम्प्राणिनांतद्वत हृदये च प्रभाकरः॥
मूर्धनि ब्रह्मरन्ध्राधश्चन्द्रमाश्च व्यवस्थितः।

ये तीन रूपात्मक अग्नि, सूर्य और चन्द्रमात्मक तीन त्रिकोण सूर्य के पक्ष में आता है।

"मेरुम्प्रदक्षिणी कुर्वन्नि"त्यादि।

त्रिकोण में प्रकाशवाली।

दाक्षायणी दैत्यहन्त्री—दक्षस्यकन्या दक्ष की कन्या अश्वि-न्यादिरूपा वा दैत्य भण्डासुरादिकों को हनन करनेवाली। दक्ष-प्रजापति के यज्ञ को विनाश करनेवाली।

दक्ष दो प्रकार के बताये हैं—एक प्रजापति दूसरा राजा दोनों के यज्ञ को विनाश करनेवाली।

जैसे ब्रह्मपुराण में—

अभिव्याहृत्य सप्तर्षीन् दक्षं सोऽभ्यशपत्पुनः।
भविता मानुषो राजा चाक्षुषस्य त्वमन्वये॥
प्राचीनवर्हिषः पौत्रः पुत्रश्चैव प्रचेतसः।
दक्ष इत्येव नाम्ना त्वं मारिषायां जनिष्यसि॥
कन्यायां शाखिनां चैव प्राप्ते वै चाक्षुषान्तरे।
अहं तत्रापि ते यज्ञं हंन्मि देव्याः प्रियेप्सया॥

दरान्दोलितदीर्घाक्षी दरहासोज्ज्वलन्मुखी ।
गुरुमूर्तिर्गुणनिधिर्गोमाता गुहजन्मभूः ॥१७२॥

दरान्दोलितदीर्घाक्षी=जरा आन्दोलित चलाने से दीर्घ कर्णान्त तक नेत्र जिसके हैं ।

दर=कटाक्षमात्र से भय को नाश करनेवाली । स्मित हास से उज्ज्वल शोभायमान मुख जिसका ।

सुन्दरी तापनी में आया है—

यथा घटश्च कलशः कुम्भश्चैकार्थवाचकाः ।
तथा मन्त्रो देवता च गुरुश्चैकार्थवाचकाः ॥

मन्त्रमूर्ति स्वरूप ।

शक्तिरहस्य में गुरुनिर्वचन आया है—

गुकारस्त्वन्धकारस्याद्रुकारस्तन्निवर्त्तकः ।

अर्थात् अन्धकार को हटानेवाला गुरु होता है ।

एक स्थान में गुरु का निर्वचन इस प्रकार किया है ।

गुकारः सदिति प्रोक्तो रुकारो ज्ञानवाचकः ।
ब्रह्मज्ञानैकरूपत्वाद् गुरुरित्यभिधीयते ॥

साधक भगवती की गुरु रूप से उपासना करे ।

गुणनिधि=सत्त्वादि जो निधि हैं उनका खजाना । गुण कहते व्यूह रूप को । जैसे नवव्यूहात्मक श्री यन्त्र ही उसकी निधि है—

"नवव्यूहात्मको देवः परानन्दः परात्मकः ।"

नवव्यूह=कालव्यूह, कुलव्यूह, नामव्यूह, ज्ञानव्यूह, चित्तव्यूह, नादव्यूह, बिन्दुव्यूह, कल्पव्यूह और जीवव्यूह ये नवव्यूह हैं।

सौन्दर्यलहरी में आया है—

"तवाज्ञाचक्रस्थमित्यादि"......

नवव्यूहात्मक गुणों को धारण करनेवाली।

गोमाता=पृथ्वी की माता।

जगद्धात्री महामाया लोकमाता जगन्मयी।

गवांधेनूनां माता=सुरभिरूपा। गोपद के अर्थ है पृथ्वी, वाणी आदि।

गो स्वर्गे वृषभे रश्मौ वज्रे चन्द्रमसि स्मृतः।

गुहजन्मभूः=कार्तिकेय स्वामी की जिससे उत्पत्ति है।

अथवा जीवों को जन्म देनेवाली "यथाग्नेःक्षुद्राविस्फुलिङ्गाः व्युच्चरन्ति।"

याज्ञवल्क्य में—

निःसरन्ति यथा लोहात्पिण्डात्तप्तात्स्फुलिङ्गकाः।
सकाशादात्मनस्तद्वदात्मनः प्रभवन्ति हि॥

देवेशी दण्डनीतिस्था दहराकाशरूपिणी।
प्रतिपन्मुख्यराकान्ततिथिमण्डलपूजिता॥१७३॥

देवेशी=ब्रह्म विष्णु आदि की ईश्वरी।

दण्डनीतिस्था=अर्थ शास्त्र में जिसकी स्थिति है। अर्थात् नीति शास्त्र का उपदेश भी भगवती की उपासना से होता है।

देवीपुराण में—

नयानयगतांल्लोकानविकल्पे नियोजनात् ।
दण्डनाद्दमनाद्वाऽपि दण्डनीतिरिति स्मृता ।।

जैसे—भीष्माद् वातः वपति न ।

दहरा=हृदय कुहरवर्ती आकाश में रहनेवाली ।

अथ यदस्मिन्ब्रह्मपुरे दहरं पुण्डरीकं वेश्म दहरोऽस्मिन्नन्तराऽऽकाशस्तस्मिन् यदन्तस्तदन्वेष्टव्यमितिश्रुतौ ।

दहराकाश पर ब्रह्म का निरूपण होने से प्रतिपत्तिथि में मुख्य आद्या पूर्णिमा तिथि जिसके अन्त में है। उस तिथि मण्डल में पूजिता। प्रतिपदा से पूर्णिमा तक सम्पूर्ण तिथियों में पूजित। तिथि का जो समूह है उससे पूजित।

कथमग्नेः समुत्पत्तिरश्विनोर्वा महामुने ।
गौर्या गणपतेर्वापि नागानां वा गुहस्य च ।।
आदित्यस्य च मातॄणां दुर्गाया वा दिशांतथा ।
धनदस्य च विष्णोर्वा धर्मस्य परमेष्ठिनः ।।
शम्भोर्वापि पितॄणाम्वा तथा चन्द्रमसोमुने ।
शरीरे देवताश्चैताः कथं मूर्तित्वमागताः ।।
किञ्च तासां मुने भोज्यं काश्च संज्ञास्तिथिश्च का ।

तिथि देवता इन षोडशतिथियों में प्रतिपादित किया गया। इन षोडश अग्नि आदि की उत्पत्ति बतलाई गई है—

जैसे कादि मत में आया है—

वह्निर्दस्रावुमा विघ्नो भुजङ्गः षण्मुखो रविः।
मातरश्चतथा दुर्गा दिशो धनदकेशवौ।
यमो हरःशशी चेति तिथीशाः परिकीर्त्तिताः॥

कलात्मिका कलानाथा काव्यालोपविमोदिनी।
सचामररमावाणीसव्यदक्षिणसेविता॥१७४॥

कला=अंश=कला कहते हैं।

वह्नि की दश सूर्य की १२ कला चन्द्रमा की १६ कला ये चन्द्रादि की कला।

उत्पत्तिर्जागरोबोधो व्यावृत्तिर्मनसः सदा।
कला चतुष्टयं जाग्रद्वस्थायां व्यवस्थितम्।
जाग्रत्सर्वगुणैः प्रोक्ता केवलं शक्तिरूपिणी।
मरणं विस्मृतिर्मूर्च्छा निद्रा च तमसा वृता॥
सुषुप्तेषु कला ज्ञेयास्ताःसर्वाः श्रीकलात्मिकाः।
अभिलाषो भ्रमश्चिन्ताविषयेषु पुनःस्मृतिः॥
कलाचतुष्टयं देवी स्वप्नावस्था विधीयते।
शिवरूपाः शक्तिरूपास्ताः कलास्त्रिपुरात्मिकाः॥

इन कलाओं की स्वामिनी। काव्यों के आलाप से सुखी रहनेवाली। चामर युक्त जो लक्ष्मी एवं सरस्वती उनके द्वारा सव्य तथा दक्षिण क्रम से सेवा की गई।

आदिशक्तिरमेयात्मा परमा पावनाकृतिः।
अनेककोटिब्रह्माण्डजननी दिव्यविग्रहा॥१७५॥

आदिशक्तिअमेयात्मा=जिसकी आत्मा का माप नहीं हो सकता है। जैसे लिङ्गपुराण में आया है—

स्वर्गपाताललोकान्तब्रह्माण्डवरणाष्टके।
मेयं सर्वमुमारूपं माता देवो महेश्वरः॥

परमा=परम मूर्ति।

पावनाकृतिः=पवित्र है आकृति जिसकी।

अनेक करोड़ों ब्रह्माण्डों को उत्पन्न करनेवाली।

दिव्यविग्रहा= उज्ज्वल प्रकाशवान शरीरवाली।

क्लींकारी केवला गुह्या कैवल्यपददायिनी।
त्रिपुरा त्रिजगद्वन्द्या त्रिमूर्तिस्त्रिदशेश्वरी ॥१७६॥

क्लींकारी=काम बीज को उत्पन्न करनेवाली कामदेवकी स्त्री।

केवला – केवल शक्ति अद्वितीया—

गुह्या=जिसको समझना कठिन है।

सुगुप्तं देवता रूपं तपःश्रद्धेय।

कैवल्यपददायिनी=मुक्तिमार्ग को देनेवाली।

त्रिपुरारूपी शक्ति तीन पुरों में विराज करनेवाली।

त्रिजगद्वन्द्या=स्वर्ग मृत्यु पाताल में वन्दनीय।

त्रिमूर्ति=ब्रह्मा विष्णु महेशरूपा।

महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती।

देवताओं की स्वामिनी।

त्र्यक्षरी दिव्यगन्धाढ्या सिन्दूरतिलकाञ्चिता।
उमा शैलेन्द्रतनया गौरी गन्धर्वसेविता ॥१७७॥

त्र्यक्षरी=तीन अक्षरों के मंत्र स्वरूपिणी।

दिव्यगन्धाढ्या=जिसमें दिव्य सुगन्धि आ रही है। सिन्दूर के तिलक से शोभायमान।

उमा=उमेतिनाम्ना कात्यायनीति उ—मा।

"उमासिन्धुवने नाम्ना" "उमा षड् वार्षिकी मता।"

शैलेन्द्रतनया=हिमालय पुत्री।

गौरी—

गन्धर्वसेविता=गन्धर्वों ने जिसकी स्तुति की है।

विश्वगर्भा स्वर्णगर्भाऽवरदा वागधीश्वरी।
ध्यानगम्याऽपरिच्छेद्या ज्ञानदा ज्ञानविग्रहा ॥१७८॥

विश्वगर्भा=सम्पूर्ण विश्व जिसके गर्भ में है।

स्वर्णगर्भा=हिरण्यगर्भवाली पृथ्वी।

वायुपुराण में—

हिरण्यमस्या गर्भोऽभूत् हिरण्यस्यापिगर्भजः।
यस्माद्धिरण्यगर्भः स पुराणेऽस्मिन्निरुच्यते ॥

जिसके गर्भ में बड़े-बड़े मन्त्र है। अवरदा=जिसके कान्ति-युक्त दांत हैं। वाणी की स्वामिनी।

ध्यानेन विभावनेन गम्या। "ते ध्यानयोगानुगता अपश्यन्-देवात्मशक्ति स्वगुणैर्निगूढाम् ॥"

अपरिच्छेद्या=देश और काल से जो अपरिच्छेद होती है।

ज्ञानदा=ज्ञान को देनेवाली।

ज्ञानविग्रहा=सत्यंज्ञानमनन्तं ब्रह्म ज्ञान ही जिसका विग्रह है। सारी संसार की ज्ञानात्मा होने से।

ज्ञानमेवपरंब्रह्म ज्ञानबन्धाय चेष्यते।
ज्ञानात्मकमिदं विश्वं न ज्ञानाद्विद्यते परम्॥

ज्ञान का ही विस्तार जिसमें है।

सर्ववेदान्तसम्वेद्या सत्यानन्दस्वरूपिणी।
लोपामुद्रार्चिता लीलाक्लृप्तब्रह्माण्डमण्डला ॥१७६॥

सर्ववेदान्तसम्वेद्या—

वराह में कहा है—

एषा त्रिशक्तिरुद्दिष्टा नयसिद्धान्तगामिनी।
एषा ज्ञानात्मिका शक्तिः सर्ववेदान्तगामिनी॥

सत्य आनन्दज्ञान जिसका स्वरूप है।

लोपामुद्रा से अर्चित।

लोपामुद्रा—

पत्न्यस्य लोपामुद्राख्या मामुपास्तेति भक्तितः।

त्रिपुरा सिद्धान्त में—

"अगस्त्यपत्नी लोपामुद्रेति।"

सौन्दर्यलहरी के दूसरे श्लोक में—

सारे ब्रह्माण्डमण्डल को रचनेवाली।

जगदम्ब तवत्वयं क्रमः क्षणमुद्दालक पुष्पभञ्जिका।

अपनी इच्छा से सारे संसार का विकाश और लय करती है।

अदृश्या दृश्यरहिता विज्ञात्री वेद्यवर्जिता।
योगिनी योगदा योग्या योगानन्दयुगन्धरा ॥१८०॥

अदृश्या=नेत्र आदि इन्द्रियों से जिसका ज्ञान नहीं हो सकता है। उसको अदृश्या कहते हैं इसलिये तुम अदृश्या हो।

वेद में आया है—

न दृष्टेर्द्रष्टारं पश्येत्।

देवी भागवत में इस प्रकार वर्णन आया है—

"निर्गुणस्य मुने रूपं न भवेद् दृष्टिगोचरम्।"

निर्गुण शक्ति होने से दृष्टिगोचर नहीं हो सकते।

दृश्यरहिता=व्यवहारिक स्वरूप होने से वह दृश्य नहीं होती।

विज्ञात्री=ज्ञान शक्तिवाली।

वेद में आता है —

"विज्ञातारमरे केन विजानीयात्।"

वेद्यवर्जिता=सर्वज्ञ होने से वेद्यवर्जिता कहलाई।

योगिनी=योग-शक्तिवाली।

विष्णुपुराण में आया है—

ज्ञानेन्द्रियाणि सर्वाणि निगृह्य मनसा सह।
एकत्वभावनायोगः क्षेत्रज्ञपरमात्मनोः॥

गीता में इस प्रकार परिभाषा आया है।

तं विद्याद्दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम्।

पतञ्जलि ने चित्त की प्रवृत्तियों के निरोध करने को योग कहा है—मन्त्र योग, लय योग, हठ योग और राज योग। इस प्रकार चार योग है।

योगदा=योग को देनेवाली। जो वस्तु नहीं मिली है उसको प्राप्त करानेवाली।

योग्या=सारे जगत के निर्माण करने की योग्यता रखनेवाली।

योगानन्दयुगन्धरा=योग से आनन्द योग का अर्थ है। शिव-शक्ति का समान रसरूपी जो योग है उसमें आनन्द करनेवाली। निद्रा में आनन्द लेने से उसे योगनिद्रा भी कहते हैं।

सतयुगादि युगों को धारण करनेवाली।

इच्छाशक्तिज्ञानशक्तिक्रियाशक्तिस्वरूपिणी।
सर्वाधारा सुप्रतिष्ठा सदसद्रूपधारिणी ॥१८१॥

इच्छाशक्ति=स्वलिपी इच्छा, ज्ञान और क्रिया ये योग तीन गुण है यही इसका स्वरूप है।

संकेत पद्धति में इस प्रकार वर्णन आया है—

"इच्छा शिरः प्रदेशश्च ज्ञाना च तदधोगता।
क्रियापदगता ह्यस्या एवं शक्तित्रयं वपुः।"

अर्थात् इच्छा ज्ञान क्रिया शक्ति रूप जिसका स्वरूप है।

वामकेश्वर तन्त्र में आया है—

त्रिपुरा त्रिविधा देवी ब्रह्मविष्ण्वीशरूपिणी ।
ज्ञानशक्तिः क्रियाशक्तिरिच्छाशक्त्यात्मिका प्रिये ।

सर्वाधारा=सारी संसार को धारण करनेवाली ।

मालिनी तन्त्र में आया है—

या सा शक्तिर्जगद्धातुः कथिता ब्रह्मणःपुरा ।
इच्छात्वं तस्य सा देवी सिसृक्षोः प्रतिपद्यते ॥
एवमेतदिति ज्ञेयं नान्यथेति सुनिश्चितम् ।
ज्ञापयन्ती झडित्यन्तर्ज्ञानशक्तिर्निगद्यते ॥

यही वर्णन वशिष्ठ रामायण में इस प्रकार आया है—

शिवं ब्रह्म विदुः शान्तमवाच्यं वाग्विदामपि ।
स्पन्दशक्तिस्तदिच्छेयं दृश्याभासं तनोति सा ॥

यही मार्कण्डेयपुराण में आया है ।

ये ऽर्था भूमौयेऽन्तरिक्षेऽन्यतो वा तेषां देवि त्वत्त एवोपलब्धिः ।

सुप्रतिष्ठा=संसार में जिसकी अच्छी प्रतिष्ठा है । उसको सुप्रतिष्ठा कहते हैं । अच्छी तरह संसार में जो स्थित है ।

सदसद्रूपधारिणी=सत् ब्रह्म असत् जगत् । यह अनिर्वचनीय रूप को धारण करनेवाली ।

जैसे वेद में आया है—

"असद्वा इदमग्र आसीत्कथमसतः सज्जायेत ।"

सत् ब्रह्म असत् संसार इनके रूप के विषय को आभास करनेवाली ।

जैसे—

यद्यदस्तितया भाति यद्यन्नास्तितयापि च ।
तत्तत्सर्वं महादेव मायया परिकल्पितम् ॥

अष्टमूर्तिरजा जैत्री लोकयात्राविधायिनी ।
एकाकिनी भूमरूपा निर्द्वैता द्वैतवर्जिता ॥१८२॥

अष्टमूर्ति—

आठमूर्तिवाली भगवती का वर्णन मत्स्यपुराण में इस प्रकार आया है—

लक्ष्मीर्मेधा धरा पुष्टिर्गौरी तुष्टिः प्रभा धृतिः ।
एताभिः पाहि तनुभिरष्टाभिर्मां सरस्वति ॥

विष्णुपुराण में अष्टमूर्त्ति का वर्णन इस प्रकार आया है—

"सूर्यो जलं महीवह्निर्वायुराकाश एव च ।
दीक्षितो ब्राह्मणः सोम इत्यष्टौ मूर्तयो मताः ॥
पत्न्यःसुवर्चलाचोमा सुकेशी चापरा शिवा ।
स्वाहा दितिस्तथा दीक्षा रोहिणी च यथाक्रमम् ॥
शनैश्चरस्तथा शुक्रो लोहिताङ्गो मनोजवः ।
स्कन्दः स्वर्गोऽथ संतानो बुधश्चानुक्रमात्सुताः ॥

लिङ्गपुराण में भी—

अष्टौ प्रकृतयो देव्या मूर्तयः परिकीर्तिताः ।
तथा विकृतयस्तस्या देहा वद्धविभूतयः ॥

गीता में आया है—

"भूमि रापोऽनलो वायुःखं मनोबुद्धिरेव च ।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ।।"

अजा=उत्पत्ति रहित—जो उत्पन्न नहीं होती ।

वेद में आया है—

अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णाम् ।

जैत्री=अविद्यारूपी प्रकृति को जीतनेवाली । अर्थात् ज्ञान स्वरूपा होने से अज्ञान को नाश करनेवाली ।

लोकयात्राविधायिनी=चतुर्दश जो लोक है । उनकी यात्रा प्रलय संरक्षण करनेवाली ।

जैसे देवी पुराण में आया है—

एकाकिनी=एकैव लोकान्ग्रसति एकैव स्थापयत्यपि ।
एकैव सृजते विश्वं तस्मादेकाकिनी मता ।।

भूमरूपा=
इस उपनिषद् वाक्य से जिसका वर्णन किया है—

"यो वै भूमा तत्सुखं"

कूर्मपुराण में भी—

एका कामेश्वरी शक्तिरनेकोपाधियोगतः ।

निर्द्वैता=द्वैतभाव से रहित ।
द्वैतवर्जिता=सब काल में द्वैतभाव से वर्जित ।
जैसे एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म ।

अन्नदा वसुदा वृद्धा ब्रह्मात्मैक्यस्वरूपिणी ।
बृहती ब्राह्मणी ब्राह्मी ब्रह्मानन्दा बलिप्रिया ॥१८३॥

अन्नदा=संसार को अन्न देनेवाली। पृथ्वी स्वरूप धन को देनेवाली।

वसुदा=रत्नस्वरूपा। जैसे—

स वाएष महानज आत्मान्नादो वसु इत्यादि।

वृद्धा=संसार को बढ़ानेवाली।

ब्रह्मात्मैक्यस्वरूपिणी=एक अद्वितीय ब्रह्मस्वरूपवाली।

एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म।

बृहती=श्रेष्ठ।

जैसे गीता में आया है—

ब्राह्मणी=ब्रह्मा की शक्ति।

समयाचार में आया—

"ब्राह्मणी श्वेतपुष्पाढ्या"

ब्राह्मी=ब्रह्म की शक्ति।

ब्रह्मानन्दा=ब्रह्म ही जिसका आनन्द है।

बलिप्रिया=अविद्या को दूर करनेवाली शक्ति काम क्रोधादि शक्ति पर विजय पानेवाली। बलि पूजाकी सामग्री को कहते हैं। बलि से प्रिय होनेवाली।

भाषारूपा बृहत्सेना भावाभावविवर्जिता ।
सुखाराध्या शुभकरी शोभना सुलभागतिः ॥१८४॥

भाषारूपा=शब्दरूपिणी शब्दमयी मूर्ति।

बृहती=जिसका पार नहीं अपार।

बृहत्सेना=जिसकी बड़ी भारी सेना हो, एक राज्य का नाम भी।

भावाभावविवर्जिता=द्रव्यगुणादि भाव अभाव प्रागभावादि से वर्जित।

सुखाराध्या=सुख पूर्वक जिसका आराधन किया जाता है।

सुखेन उपवासादि रूप कायक्लेश कामक्लेश के किये विना जिसका आराधन हो सकता है। हिमालय के प्रति भगवती का वचन है।

कूर्मपुराण में आया है—

अशक्तो यदि मां ध्यातुमैश्वरं रूपमव्ययम्।

यह कहकर फिर सुलभ प्रकार का उपदेश किया।

"नचैतावता सुलभः प्रकारैर्ध्येया।"

शुभकरी=शुभं पुण्यमेव करोति मोक्षादि पुरुषार्थ रूप होने से शुभकरी।

शोभना=सुन्दर शोभायमान।

"शोभनायै सुलभायै गत्यै नमः"

ये मन्त्र भगवती के आते हैं।

"एषैव सर्वभूतानां गतीनामुत्तमागतिः।"

शोभनायै नमः सुलभायै नमः गत्यै नमः॥

राजराजेश्वरी राज्यदायिनी राज्यवल्लभा ।

राजत्कृपा राजपीठनिवेषितनिजाश्रिता ॥१८५॥

राजराजेश्वरी=ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र उनकी ईश्वरी राजराज-कुबेर ने जिसकी आराधना की ।

राज्यदायिनी=स्वराज्य बैकुण्ठ कैलाशाधिपत्य को देनेवाली ।

राज्यवल्लभा=इन्द्रादिक जो राजा हैं उनसे उपासना की गई ।

राजत्कृपा=जिसकी कृपा बड़ी शोभायमान है ।

राजपीठनिवेषितनिजाश्रिता=जिसने अपने उपासकों को राज्यसिंहासन में आसीन कर दिया है ।

राज्यलक्ष्मीः कोशनाथा चतुरङ्गबलेश्वरी ।

साम्राज्यदायिनी सत्यसन्धा सागरमेखला ॥१८६॥

राज्यलक्ष्मी=राज्याभिमानी लक्ष्मी जिस राज्यलक्ष्मी का मंत्र तन्त्रशास्त्र में प्रसिद्ध है—

कोशनाथा=अन्नमयादि पांच कोशको सञ्चालन करनेवाली ।

चतुरङ्गबलेश्वरी=हाथी, रथ, घोड़े और पैदल सेना चतुरङ्ग कहलाती है । इन चार प्रकार के बलों की ईश्वरी ।

अथवा चार व्यूहों की ईश्वरी ।

वैष्णव, शैव, शाक्त एवं गाणपत्यादि की ईश्वरी ।

साम्राज्यदायिनी=राजसूय यज्ञ से प्रसन्न होकर साम्राज्यपद को देनेवाली ।

येनेष्टं राजसूयेन मण्डलस्येश्वरश्च यः।
शास्ति यश्चाज्ञया राज्ञः स सम्राडिति कथ्यते।

सत्यसन्धा=सत्य—

सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म इसमें जिसकी सन्धान शक्ति है। प्रीति है।

सागरमेखला=समुद्र ही जिसकी मेखला काञ्ची की मेखला की अधिष्ठात्री।

दीक्षिता दैत्यशमनी सर्वलोकवशंकरी।
सर्वार्थदात्री सावित्री सच्चिदानन्दरूपिणी ॥१८७॥

दीक्षिता=धियं ज्ञानं सुनोति प्रापयतीति दीक्षा-ज्ञान को देनेवाली का नाम दीक्षा है।

शिष्येभ्यो मन्त्रदानेन पापं क्षपयतीति वा।
दीयते कृपया शिष्ये क्षीयते पापसंचयः॥
तेन दीक्षेति कथिता परमानन्ददायिनी॥

दैत्यशमनी=भण्डासुरादिकों का नाश करनेवाली।

सर्वलोकवशंकरी=सब लोगों को अपने वश में करनेवाली।

सर्वार्थदात्री=चार प्रकार के पुरुषार्थ। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जिसकी कृपा से प्राप्त हों। दीक्षित व्यक्तियों को धर्मार्थादि देनेवाली।

धर्मादींश्चिन्तितानर्थान्सर्वलोकेषु यच्छति।
अतो देवी समाख्याता सर्वैः सर्वार्थसाधनी॥

सावित्री=सविता जगत् को उत्पन्न करनेवाला परमेश्वर शिव है उसकी शक्ति।

जगत् की प्रसवित्री होने से सावित्री नाम पड़ा।

देवीपुराण में आया है—

> त्रिदशैरर्चिता देवी वेदयोगेषु पूजिता।
> भावशुद्धस्वरूपा च सावित्री तेन सा स्मृता॥
> सावित्री पुष्करे नाम्ना तीर्थानां प्रवरे शुभे।

सच्चिदानन्दरूपिणी=सत्, चित्, एवं आनन्द यह जिसके स्वरूप हैं।

देशकालापरिच्छिन्ना सर्वगा सर्वमोहिनी।
सरस्वती शास्त्रमयी गुहाम्बा गुह्यरूपिणी॥१८८॥

देशकालपरिच्छिन्ना=देश और काल से जिसका परिच्छेद नहीं होता है।

योगसूत्र में—

> स पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्।

वह ईश्वर ब्रह्मादिकों का गुरु है, क्योंकि उसका काल से अवच्छेद नहीं हैं। "पूर्वं नासीत् अग्रे न भविष्यति" यह पहले नहीं था और आगे नहीं होगा यह प्रतीति नहीं होती।

> देशतः कालतश्चापि ह्यनन्तो वस्तुतः स्मृतः।

सर्वगा=सर्वत्र जानेवाली।

देवीपुराण में—

एषा वेदाश्च यज्ञाश्च स्वर्गश्चैव न संशयः।
देव्या व्याप्तमिदं सर्वं जगत्स्थावरजङ्गमम् ॥
ईड्यते पूज्यते देवी अन्नपानात्मिका च सा।
सर्वत्र शांकरी देवी तनुभिर्नामभिश्च सा ॥
वृक्षेपूर्व्यां तथा वायौ व्योम्न्यप्स्वग्नौ च सर्वगा।
एवं विधा ह्यसौ देवी सदा पूज्या विधानतः ॥
ईदृशीं वेत्ति यस्त्वेनां स तस्यामेव लीयते।"

सवमोहिनी=सम्पूर्ण प्राकृतिकजनों को मोह में लानेवाली।

देवीभागवत—

ज्ञानिनामपिचेतांसि देवी भगवती हि सा।

कूर्मपुराण में—

"इयं सा परमाशक्तिर्मन्मयी ब्रह्मरूपिणी।
माया मम प्रियानन्ता ययेदं मोहितं जगत्।"

सरस्वती=ज्ञानाभिमानी देवता स्वरूप में ज्ञान समुद्ररूपा।

"अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः।"

इस वचन से ज्ञानरूपा सरस्वती। दो वर्ष की कन्या का नाम भी सरस्वती है।

भारद्वाज स्मृति में आया है सरस्वती का निर्वचन—

या वसेत्प्राणिजिह्वासु सदा वागुपवर्त्तनात्।
सरस्वतीति नाम्नेयं समाख्याता महर्षिभिः ॥

इसका योगवाशिष्ठ में इस प्रकार आया है—

सरणात् सर्वदृष्टीनां कथितैषा सरस्वती।

शास्त्रमयी—

सर्वंखल्विदं ब्रह्म इत्यादिशास्त्र प्रधाना अर्थात् शास्त्र से ही जो जानी जाती है न कि अनुमान, उपमान से गम्य है।

तं त्वौपनिषदं पुरूषं पृच्छामि।

गुहाम्बा="गुहायां स्थिता अम्बा" गुहा में स्थित अम्बा।

कठोपनिषद् में—

"ऋतम्पिवन्तौ सुकृतस्य लोके
गुहां प्रविष्टौ परमे परार्धे।
छायातपौ ब्रह्मविदो वदन्ति
पञ्चाग्नयो ये च त्रिणाचिकेताः॥"

हृदयरूपी गुहा में रहनेवाली।

गुहास्थितं पश्यन्ति सूरयः।

गुहाम्बा कार्तिकेय स्वामी की माता।

गुह्यरूपिणी=परम रहस्य व्यवहार की दृष्टि से जो जानी न जाय।

सूतसंहिता में इसका स्पष्टीकरण है—

गुरुमूर्तिधरां गुह्यां गुह्यविद्यानुरूपिणीम्।
गुह्यभक्तजनप्रीतां गुहायां निहितांनुमः।

सर्वोपाधिविनिर्मुक्ता सदाशिवपतिव्रता।
सम्प्रदायेश्वरी साध्वी गुरुमण्डलरूपिणी ॥१८६॥

सर्वोपाधिविनिर्मुक्ता=जितनी भी उपाधि हैं उनसे मुक्त।

अर्थात् उपाधि धर्म से शून्य। जैसे सूक्ति में रजत की प्रतीति मिथ्या होती है इस तरह इसमें प्रतीति नहीं है।

सदाशिवपतिव्रता=शिवजी ही है सम्पूर्ण संसार के पति यही एक व्रत है जिसका। सदाशिव ही है पति जिनका ऐसा व्रत-वाली सती।

सम्प्रदायेश्वरी="सम्यक्शिष्येभ्यः प्रदीयतेइति सम्प्रदायः।" शिष्यों को भली प्रकार अच्छे रूप में जो ज्ञान दिया जाता है उसे सम्प्रदाय कहते हैं उसमें जो समर्थ है।

योगिनी हृदय में सम्प्रदाय संज्ञक एक मन्त्र है उस मन्त्र की अधिष्ठात्री देवी होने से सम्प्रदायेश्वरी है। यह मन्त्र आदि विद्या में आता है।

साध्वी=पतिव्रता।

जैसे सौन्दर्यलहरी में—

तव सत सतीनाममचरे।

गुरुमण्डलरूपिणी=श्रीनाथादि मण्डलरूपिणी।

श्रीनाथादि...वन्दे गुरोर्मण्डलम्।

कुलोत्तीर्णा भगाराध्या माया मधुमती मही।
गणाम्बा गुह्यकाराध्या कोमलाङ्गी गुरुप्रिया ॥१९०

कुलोत्तीर्णा=कुल इन्द्रियसमूह उससे अतिक्रान्त इन्द्रियों के ज्ञान से अगम्य।

भगाराध्या=सवितृमण्डल में आराध्य। भग एकार वाग्भव-कूट उससे आराध्य।

"यदेकादशमाधारं वीजं कोणत्रयात्मकम्"

रहस्योपनिषद्—

कोणत्रयात्मक एकार भग उसके द्वारा आराध्य।

देवीपुराण में आया है—

माया=

विचित्रकार्यकरणा अचिन्तितफलप्रदा।
स्वप्नेन्द्रजालवल्लोके माया तेन प्रकीर्त्तिता ॥

वायुपुराण में माया का इस प्रकार लक्षण है।

पर्जन्यो वर्षते तत्र जलपूरश्च जायते।
दिशो निर्जलतां यान्ति सैषा माया मम प्रिये ॥
सोमोऽपक्षीयते पक्षे पक्षे चाऽपि विवर्धते।
अमायां दृश्यते नैव मायेयं मम सुन्दरि ॥

मधुमती=मधु, मद्य, पुष्परस पूजा के समय।

क्षौद्र=सहद आदि जिनके सामने रक्खे जाते हैं।

श्रुति में आता है—

"महत्यै वा एतद्देवतायै रूपम् यन्मधु।"

यद्वा "आदित्यो वै देव मधु।"

मधुमती भूमिका=योगशास्त्र में चतुर्विध योग में कहा है— "सात भूमिका शुभेक्षा" आदि जिसमें चार साधनावस्था की और तीन सिद्धावस्था की उसमें सप्तमी जो भूमिका है वह मधुमती है।

तारकं सर्वं विषयं सर्वथा ।

गणाम्बा=प्रथमादिगणों की माता ।

गुह्यकाराध्या=किन्नरादि से जिसकी आराधना की गई है ।

कोमलाङ्गी=कोमल अङ्गवाली ।

गुरुप्रिया—जगद्गुरु शिव की प्यारी ।

स्वतन्त्रा सर्वतन्त्रेशी दक्षिणामूर्तिरूपिणी ।
सनकादिसमाराध्या शिवज्ञानप्रदायिनी ॥१६१॥

स्वतन्त्रा=सारे संसार की स्थिति रचना एवं लय में विना किसी उपादान के स्वतन्त्र ।

यद्वा "स्वतन्त्रंते तन्त्रं" तन्त्रस्वरूपिणी ।

यद्वा=शैव वैष्णव गाणपत्यादि यावन्मात्र तन्त्र हैं उनमें स्वतन्त्र अर्थात् वे सब देवी की विभूति का प्रतिपादन करनेवाले हैं ।

सर्वतन्त्रेशी=सम्पूर्ण तन्त्रों से उसका प्रतिपादन होता है। अतः उनकी ईश्वरी ।

कालीपुराण कामरूप क्षेत्र के माहात्म्य में आया है—

नित्यं वसति तत्रापि पार्वत्या सह नर्मभिः ।
मध्ये देवीगृहं तत्र तदधीनस्तु शंकरः ॥
ईशान्यां नाटके शैले शंकरस्य सदाश्रयम् ।
नित्यं वसति तत्रेशस्तदधीना तु पार्वती ॥

चतुःषष्टि संख्यक तन्त्र जिस भगवती का प्रतिपादन करते हैं।

दक्षिणामूर्तिरूपिणी=दक्षिणामूर्त्ति जो शिव है उसी का रूपवाली।

शिवस्यदक्षिणाभिमुखीमूर्ति।

ब्रह्मा विष्णु आदि के आराधन करनेवाला होने से शिवकी दक्षिणाभिमुखी मूर्ति है।

सनकादिसमाराध्या=सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार इन्होंने श्रीविद्या भगवती की आराधना की थी इसी कारण गुरुपरम्परा में इनकी गणना हुई।

ब्रह्माण्डपुराण में आया है—

त्वमेवाऽनादिरखिला कार्यकारणरूपिणी।
त्वामेव हि विचिन्वन्ति योगिनः सनकादयः॥

शिवज्ञानप्रदायिनी=शिव जिसको ज्ञान देनेवाला है।

वराहपुराण में आया है—

एतास्तिस्रोऽपि सिद्ध्यन्ति यो रुद्रं वेत्ति तत्त्वतः।

जो मनुष्य तत्त्वतः रुद्र को जानता है उसकी महाकाली आदि देवियां सिद्ध हो जाती हैं।

चित्कलाऽऽनन्दकलिका प्रेमरूपा प्रियंकरी।
नामपारायणप्रीता नन्दिविद्या नटेश्वरी ॥१९२॥

चित्कला=सच्चिदानन्द आत्मा की जो चित्कला है वह जिसका रूप है ब्रह्माण्ड की कली स्वरूपा।

"ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।

पद्मपुराण में देवी की मूर्तियों की जहां गणना हुई—

चित्तेषु चित्कला नाम शक्तिः सर्वशरीरिणाम्।

चित्त ही आनन्द कलारूपी भगवती है।

"एतस्यैवानन्दस्यान्यानि भूतानि मात्रामुपजीवन्ति।"

प्रेमरूपा=प्रेम स्नेह ही जिसका स्वरूप है।

प्रियङ्करी=प्रिय सारे संसार को प्रेम करनेवाली।

नामपारायणप्रीता=अ आ इ ई यहां से प्रारम्भ कर क्ष क्षा यहां तक जितने भी अक्षर हैं वे भगवती के नाम है। 'वर्णानां मातृका देवी।" अकार एक ककारादि पञ्चत्रिंशत् (३५) छत्तीस अक्षर छतीस वर्ष कालरूप इन एक को सोलह-सोलह सेरों के योग से ५२ मास हो गये उनके उससे ५७६ ये प्रथमाक्षर हो गये इन ५७६ अक्षरों को प्रथमाक्षर कहते हैं। इनमें से एक-एक में ३६ से योग देवे और अन्त में आ—ई इस पल्लव को लगा दे तब बीस हजार सात सौ छत्तीस, तन्त्र में कहा भी है—

आईपल्लवितैः परस्परयुतैर्द्वित्रिक्रमाद्यक्षरैः कादिक्षान्तगतैः स्वरादिभिरथ क्षान्तैश्चतैः सस्वरैः। नामानि त्रिपुरे! भवन्ति खलुयान्यत्यन्तगोप्यानि ते तेभ्यो भैरवपत्नि! विंशतिसहस्रेभ्यः परेभ्यो नमः।

देवी भागवत में भी आया है—

अकारादिक्षकारान्तैः स्वरैर्वर्णैस्तु योजितैः।
असंख्येयानि नामानि भवन्ति रघुनन्दन॥

उन नामों में परायण (लगी हुई) जो भक्त भगवती के नामों की साधना करते हैं उनसे प्रसन्न होनेवाली।

मामर्चयतु वा मा वा विद्यां जपतु वा न वा।
कीर्तयेन्नामसाहस्रमिदं मत्प्रीतये सदा ॥

नन्दिविद्या=नन्दिकेश्वर ने इस श्रीविद्या की उपासना की थी।

नटेश्वरी=चिदम्बर जो नट है उसके अनुकरण करनेवाली।

लास्यसम्विधान में—

"जङ्घाकाण्डोरुनालो नखकिरणलसत्केसरालीकरालः।
प्रत्यग्रालक्तकाभाप्रसरकिसलयो मञ्जुमञ्जीरभृङ्गः॥
भर्तुर्नृत्तानुकारे जयति निजतनुस्वच्छलावण्यवापी-।
सम्भूताम्भोजशोभां विदधदभिनवोद्दण्डपादो भवान्याः॥"

मिथ्याजगदधिष्ठाना मुक्तिदा मुक्तिरूपिणी।
लास्यप्रिया लयकरी लज्जा रम्भादिवन्दिता ॥१९३॥

मिथ्यारूपी जगत् की अधिष्ठान भूमि जिसमें जगत् का मान होता है। जैसे रजत का अधिष्ठान सीपी में होता है।

"मायामात्रमिदं द्वैतमद्वैतम्परमार्थतः।
सर्वं खल्विदमेवाहं नान्यदस्ति सनातनः॥

भागवत में भी आया है—

जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट्।
तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत्सूरयः॥
तेजो वारिमृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसर्गो मृषा।
धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि॥

मुक्तिदा=मुक्ति को देनेवाली।

"सैषा प्रसन्ना वरदा नृणाम्भवति मुक्तये।"
येऽर्चयन्ति परांशक्तिं विधिनाऽविधिनाऽपि वा।
न ते संसारिणो नूनं मुक्ता एव न संशयः॥

मुक्तिरूपिणी=मुक्ति ही जिसका रूप है। "अविद्यादिनिवृत्तिः" अविद्या की निवृत्ति ही जिसका रूप है।

सौर संहिता में मुक्ति बताया है—

अथ मुक्तेः स्वरूपन्ते प्रवक्ष्यामि समासतः।
यज्ज्ञानेन परा मुक्तिः सिद्ध्यत्यखिलदेहिनाम्॥

यह द्रव्य गुण कर्म किसी में नहीं है यह केवल ज्ञानस्वरूप है।

लास्यप्रिया=लास्यनर्तन में जिसका प्रेम हो अर्थात् चित्त की एकाग्रता करने के लिये लास्य परम साधन होता है। भगवती के नर्तन को लास्य और शिव के नर्तन को ताण्डव कहते हैं।

लयकरी=लय चित्त की एक विशेषावस्था है जिसके लिये—"तालैर्नृत्यगीतयोः" ताल और नृत्य गायन इनका एक समय काल में रुकना ही लय कहते हैं।

लज्जा="या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता"। रम्भा-उर्वसी आदि अप्सराओं ने जिसकी तपस्या की।

भवदावसुधावृष्टिः पापारण्यदवानला।
दौर्भाग्यतूलवातूला जराध्वान्तरविप्रभा॥१९४॥

भवदावसुधावृष्टिः=संसाररूपी अग्नि से तप्त मनुष्यों पर अमृत की वर्षा करनेवाली अर्थात् भगवती के उपासकों के संसार के दुःख दूर हो जाते हैं।

यत्रास्ति भोगो न तु तत्र मोक्षो।
यत्रास्ति मोक्षो न तु तत्र भोगः॥
श्रीसुन्दरीसाधकपुङ्गवानां।
भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव॥

पापारण्यदवानला=पापानि पापरूपी जो अरण्य है उनको नाश करने में दावानल अग्नि के समान अर्थात् भक्तों के पापों को नाश करनेवाली।

वृहन्नारदीय में—

गंगायाः परमं नाम पापारण्यदवानलः।
भवव्याधिहरी गंगा तस्मात्सेव्या प्रयत्नतः॥

दौर्भाग्यतूलवातूला=दौर्भाग्यरूपी जो कपास है। रूई का छोटा-सा पहल उसके लिये अग्नि समान अर्थात् भगवती के उपासकों के दौर्भाग्य को निरसन करनेवाली है।

जराध्वान्तरविप्रभा=जरा वृद्धावस्थारूपी अन्धकार को दूर करने में सूर्य की कान्तिरूपा।

सौन्दर्यलहरी में—

नरं वर्षीयांसं नयनविरसं नर्म सुजडम्।
तवापाङ्गालोके पतितमनुधावन्ति शतशः॥

गलद्वेणीवन्धा कुचकलशवित्रस्ततटयोः ।
हठात्त्रुट्यत्काञ्च्यो विगलितदुकूला युवतयः ॥

बृद्धावस्था में भी युवावस्था की प्रभा को देनेवाली ।

भाग्याब्धिचन्द्रिका भक्तचित्तकेकिघनाघना ।
रोगपर्वतदम्भोलिर्मृत्युदारुकुठारिका ॥१९५॥

भाग्याब्धिचन्द्रिका=भाग्य का जो समुद्र है उसमें उल्लास करनोवली चन्द्रमा की द्युति के समान अर्थात् भक्तों के भाग्य को विकास करनेवाली ।

भक्तों के चित्तरूपी मयूर है उनमें उल्लास करनेवाली मेघस्वरूपा ।

रोगपर्वतदम्भोलिः=पर्वत के समान वड़े-वड़े रोगों को भी वज्रके समान हटानेवाली । वड़े-वड़े रोग भी भगवतीके समाराधन से झटिति दूर हो जाते हैं ।

मृत्युदारुकुठारिका=मृत्युरूपी काष्ठ को छेदन करने में कुठार के समान ।

जैसे वेद में--

"मृत्युर्यस्योपसेचनम् ।"

महेश्वरी महाकाली महाग्रासा महाशना ।
अपर्णा चण्डिका चण्डमुण्डासुरनिषूदनी ॥१९६॥

महेश्वरी=महती ईश्वरी ।

महाकाली=महाकाल की शक्ति।

कालिदास ने वर्णन किया है—

एतदम्ब सदिदं तु नेति नः
शङ्कया हृदि विकल्पलक्षणः।
यो यमः स खलु काल्यते त्वया
भूतसंयमनकेलिकोविदः॥

उज्जैन पीठ के अधिष्ठात्री देवता महाकाल की शक्ति।

महाग्रासा=सम्पूर्ण संसार को ग्रसन करनेवाली।

महाशना=खूब महच्चराचर को खानेवाली।

. "यस्य ब्रह्म च क्षत्रं चोभे भवत ओदने।"

अपर्णा=अपगतमृणंयस्याः सा=जिसका ऋण दूर हो गया हो।

देवीस्तव में आया है—

ऋणमिष्टमदत्वैव त्वन्नाम जपतो मम।
शिवे कथमपर्णेति रूढिर्भारायते न ते॥

कालिकापुराण में अपर्णा का निर्वचन इस प्रकार है—

आहारे त्यक्तपर्णाऽभूद्यस्माद्धिमवतः सुता।
तेन देवैरपर्णेति कथिता पृथिवीतले॥

चण्डिका=चण्ड कोपवाली, अभक्तों पर कोप करनेवाली। सात वर्ष की कन्या को चण्डिका कहते हैं। चण्ड-मुण्ड को संहार करने से उसे चण्डिका कहते हैं।

यस्माच्चण्डं च मुण्डञ्च गृहीत्वा त्वमुपागता।
चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवी भविष्यसि॥

चण्ड-मुण्डासुर को मारनेवाली। कालिका का भी स्वरूप है। चण्डमुण्डासुरनिषूदनी कहा है।

क्षराक्षरात्मिका सर्वलोकेशी विश्वधारिणी।
त्रिवर्गदात्री सुभगा त्र्यम्बका त्रिगुणात्मिका ॥१६७॥

क्षराक्षरात्मिका=क्षर और अक्षर।

"क्षरः सर्वाणिभूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते।"

संसार=क्षर और कूटस्थ ब्रह्म ये दोनों जिनके स्वरूप हैं।

सर्वलोकेशी=सर्वेषां लोकानां ईशी—सम्पूर्ण लोकों पर नियन्त्रण करनेवाली।

भूर्भुवः स्वः

विश्वधारिणी=विश्व को धारण करनेवाली।

त्रिवर्गदात्री=धर्म, अर्थ, कामना को देनेवाली।

सुभगा—भाग्यवती। पांच वर्ष की कन्या को भी सुभगा कहते हैं।

शोभनोभगः सूर्यो यया शोभन है सूर्य जिससे, सौर काय में स्थिता जो है उसे।

त्र्यम्बका—

सर्वा शक्तिः परा विष्णो ऋग्यजुः सामसंज्ञिता।
सैषा त्रयी तपत्यंहो जगतश्च हिनस्ति या॥
मासि मासि रविर्यत्र तत्रतत्र हि सा परा।
त्रयीमयी विष्णुशक्तिरवस्थानं करोति वै॥

न केवलं रवौ शक्तिर्वैष्णवी सा त्रयीमयी।
ब्रह्माऽथ पुरुषो रुद्रस्त्रयमेतत्त्रयीमयम् ॥

लोकत्रयान्तर्गत रहनेवाली त्र्यम्बका।

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम्।

देवीपुराण में—

सोमसूर्यानलास्त्रीणि यन्नेत्राण्यम्बकानि सा।
तेन देवी त्र्यम्बकेति मुनिभिः परिकीर्तिता ॥

त्रिगुणात्मिका—सत्त्वरजस्तम तीन गुण समावस्था में जिसमें रहते हैं। जैसे—

योग सूत्रम् तत्र सत्त्वरजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः।

स्वर्गापवर्गदा शुद्धा जपापुष्पनिभाकृतिः।
ओजोवती द्युतिधरा यज्ञरूपा प्रियव्रता ॥१९८॥

स्वर्गापवर्गदा—स्वर्ग एवं अपवर्ग को देनेवाली।

शुद्धा—अविद्यादिक मलों से शून्य।

जपापुष्पनिभाकृतिः=जपापुष्प के समान आकृतिवाली। छोटी आकृति धारण की हुई।

दक्षिणामूर्त्ति संहिता में—

विना जपेन देवेशि जपो भवति मन्त्रिणः।
अजपेयं ततः प्रोक्ता भवपाशनिकृन्तनि ॥

"पुष्पं विकास आर्तवे।"

पुष्प=विकाश ऋतुधर्म को कहते हैं।

ओजोवंती=ओजोवलं तद्वती बलवती। जैसे उपनिषद् में आया है।

"नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः।"

द्युतिधरा=द्युति को धारण करनेवाली।

यज्ञरूपा=यज्ञ ही जिसका स्वरूप है।

हरिवंश में आया है—

"यज्ञो वै विष्णुः"

"यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः।"

प्रियव्रता=प्रियाणि व्रतानि अविशेषात् जिसको सम्पूर्ण व्रत प्रिय है।

देवं देवीञ्च वोद्दिश्य यः करोति व्रतं नरः।
तत्सर्वं शिवयोस्तुष्ट्यै जगज्जननशीलयोः॥

देवी एवं देवके उद्देश्य से जो व्रत करते हैं उससे प्रसन्न होनेवाली।

दुराराध्या दुराधर्षा पाटलीकुसुमप्रिया।
महती मेरुनिलया मन्दारकुसुमप्रिया॥१६६॥

दुराराध्या=चपल इन्द्रियों से भगवती का आराधन नहीं हो सकता।

"वश्यात्मना तु सततं शक्योऽवाप्तुमुपायतः" गीता।

दुराधर्षा=दुःखरूप से जो अपने अधीन की जाती है अर्थात् तपस्या से समाराधित होकर इच्छित वर देनेवाली।

पाटलीकुसुमप्रिया=श्रीवृक्षे शंकरोदेवः पाटलायां तु पार्वती ।
महती=महान्कस्मान्मानेनान्याञ्जहाति । नारद मुनि की वीणा नाम भी महती है ।

महती मेरुनिलया ।

मध्यस्थमेरौ ललिता सदैवाऽऽस्तेमहाद्युतिः ।

मन्दारकुसुमप्रिया=षोडशोपचार में काम आनेवाले मन्दार पुष्पों से पूजित होकर प्रसन्न होनेवाली ।

वीराराध्या विराड्रूपा विरजा विश्वतोमुखी ।
प्रत्यग्रूपा पराकाशा प्राणदा प्राणरूपिणी ॥२००॥

वीराराध्या=वीरों से आराधन करने योग्य । पराक्रम करनेवालों के आराधना के योग्य ।

विराड्रूपा=

पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्रशः । श्रीगीता

विरजा=विगत हो गया है रज पापादि जिसका ।

ब्रह्माण्ड में—

विरजे विरजा माता ब्रह्मणा सम्प्रतिष्ठिता ।

यस्याः सन्दर्शनान्मर्त्यः पुनात्यासप्तमंकुलम् ॥

विश्वतोमुखी=चारों तरफ देखनेवाली । उपासक अपने ध्यान करने से जिधर जावे उधर भगवती का दर्शन करता है ।
विश्वतश्चक्षुरुतविश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुतविश्वतस्पात् ।

सर्वतः पाणिपादंतत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्। अपाणिपादो-जवनोग्रहीता।

प्रत्यग्रूपा—अन्दर आत्मा में देखनेवाली प्रतिकूलमञ्चती प्रत्यक इन्द्रियों का विषयोन्मुख बहिर्मुख पराङ्मुखत्व को छोड़ अन्तर्मुख वृत्तिवाली।

पराञ्चिखानियव्तृणत्स्वयम्भूः
तस्मात्पराङ्पश्यतिनान्तरात्मा।
कश्चिद्धारे आत्मानमैक्षत्
आवृत्त चक्षुरमृतत्वमेति ॥

पराकाशा – ब्रह्माकाश में रहनेवाली।

आकाशइतिहोवाचाकाशो ह्येवैभ्योज्यायानाकाशः परायणम्

प्राणदा=प्राणों को देनेवाली।

प्राणरूपिणी—प्राणरूपी।

प्राणान् पञ्चवृत्तिकान् एकादशेन्द्रियाणि इनको द्यु ति खण्डयति—प्राण शब्द ब्रह्म का वाचक है— "प्राणो ब्रह्म कं ब्रह्म खं ब्रह्म।"

मनुस्मृति में आया है—

"एनमेके वदन्त्यग्निं मनुमन्ये प्रजापतिम्।
इन्द्रमन्ये परम्प्राणमपरे च महेश्वरीम्॥"

मार्तण्डभैरवाराध्या मन्त्रिणीन्यस्तराज्यधूः।
त्रिपुरेशी जयत्सेना निस्त्रैगुण्या परापरा ॥२०१॥

मार्तण्ड—मार्तण्ड भैरव ने जिस मन्त्र से भगवती की आरा-
ना की। देवी के उपासकों में मार्तण्ड भैरव भी आते हैं।

जैसे दुर्वासा का देशिकेन्द्र तन्त्र में—

चक्षुष्मतीप्रकाशनशक्तिच्छायासमारचितकेलिम्।
माणिक्यमुकुटरम्यं मन्ये मार्तण्डभैरवं हृदये॥

मार्तण्ड सूर्य को कहते हैं सूर्य ही जो भैरव हैं उससे सूर्यो-
ासिता देवी हो गई।

जैसे पद्मपुराण में आया है—

देव्या रत्नमयीं मूर्तिं भक्त्या नित्यं दिवाकरः।
पूजयित्वाप्तवान्दिव्यं सूर्यत्वं शुभमुत्तमम्॥

यद्वा भैरवं।

भीरूणां समूहो भैरवं भीरूपुरुषोंद्वारा आराध्या। दुर्गे स्मृता
हरसि भीतिमशेषजन्तोः।

यद्वा, मार्तण्ड के समान भैरव=उद्योग या क्रिया शक्ति है
जिसकी उससे आराधना की जाती है।

मन्त्रिणीन्यस्तराज्यधूः—श्यामलाम्बा जिसे कहते हैं उस
मंत्रिणी शक्ति में सारे राज्य का भार जिसने रक्खा है।

न्यस्तराजधूविद्या का रहस्य—

ललितापरमेशान्या राज्यचर्चा तु यावती।
शक्तीनामपि या चर्चा सर्वा तस्याम्त्रशंव्रजेत्॥ इति

या मनन करनेवाले मन्त्र के जो उपासक मन्त्री क-
लाते हैं।

मननत्राणधर्मवत्त्वान्निर्मलचित्तमेव वा।

उनको मन्त्री कहते हैं। उनको ऐक्य लाने का जो प्रयत्न
उसे मन्त्रिणी कहते हैं। सुसाम्राज्य रूप का एक रसता का ज
भार धर्म है उपासक जो योगी हैं उनके प्रयत्न विशेष से ऐक
रस उत्पन्न होता है।

इति चित्तं स्फुरत्तात्मप्रासादादिविमर्शनम्।
तदेव मन्यते गुप्तमभेदेनान्तरैश्वरम् ॥
स्वस्वरूपमनेनेति मन्त्रस्तेनास्य देशिकैः।
पूर्णाहन्तानुसन्ध्यात्मस्फूर्जन्मननधर्मतः ॥
संसारक्षयकृत्त्राणधर्मतोरविरुच्यते।
तन्मन्त्रदेवतामर्शप्राप्ततत्सामरस्यभूः ॥

आराधक के चित्त में इस मन्त्र के जपने से ब्रह्म का सामरस्य
हो जाता है।

त्रिपुरेशी=स श्री यन्त्र का नवयोन्यात्मक सर्वाशा पूरक चक्र
है उसके अधिष्ठात्री देवता को त्रिपुरेशी कहा गया है उसके साथ
इसका अभेद होने से उसका नाम त्रिपुराम्बा कहा गया है।
भण्डासुरादि को विजय करनेवाली सेना को रखने से "जयत्सेना"
उसका नाम पड़ा।

निस्त्रगुण्या=शुद्धस्वरूप जिसमें तीन गुण नहीं है।
गुणातीत।

गीता में—"निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन।"

परापरा=परब्रह्म और अपर ब्रह्म। पर शब्द उत्कृष्ट का वाचक है और अपर निकृष्ट का वाचक है।

वेद में—

"ब्रह्मदासा ब्रह्मदाशा"

पर बैरी अपर मित्र है। इनसे भिन्न।

नमेद्वेष्योऽस्ति न प्रियः।

दूरस्थं चान्तिके च तत्॥

जैसे उपनिषद् में आता है।

"द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये परश्चापरश्च।"

सत्यज्ञानानन्दरूपा सामरस्यपरायणा।

कपर्दिनी कलामाला कामधुक्कामरूपिणी ॥२०२॥

सत्य=त्रिकालाबाधित सत्यज्ञान और आनन्द यह जिसका रूप है। सत्यंज्ञानमनन्तं ब्रह्म।

विज्ञानमानन्दं ब्रह्म।

सती सद्विद्या ब्रह्मज्ञान में जो अभिज्ञ नहीं हैं उनको आनन्द अनानन्द।

आनन्दा नामतेलोका अन्धेन तमसा वृता।

तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्त्यविद्वांसोऽबुधाजनाः॥

सामरस्यपरायणा - शिव शक्ति का जो समान रस एक रस हो जाना वही है परमस्थान जिसका—उक्तञ्च।

परस्परतपःसम्पत्फलायितपरस्परौ ।
प्रपञ्चमातापितरौ प्राञ्चौ जायपती स्तुमः ॥

सामरस्य में इष्टता है जिसकी ।

कपर्दिनी—वराटक माला से विभूपिता भैरालावतार जब हुआ था उसमें शिवकी स्त्रीरूप में उस समय उसका वराट माला विभूषित हुआ था ।

'कपर्दः खण्डपरशोर्जटाजूटः पिनाकी, शिव की पत्नी ।'

देवीपुराण में आया है—

छगलाण्डे कपर्दिनम् ।

कलामाला—चौसठ जो कला हैं उन परम्परा की माला को धारण करनेवाली ।

कामधुक्कामधेनु=कामना को देनेवाली कामना को पूर्ण करनेवाली ।

कामरूपिणी—काम परं शिव वही है रूप जिसका ।

सोऽकामयत वहुस्यां प्रजायेय । कामरूप ।

एवायं काममयः पुरुषः स एव दैवशाकल्यस्तस्य का देवते तिस्त्रिय इत्ति हो वाच ।"

काम यथेच्छ रूप है जिसका संकल्पमयी, संकल्प रूपामयी ।

कलानिधिः काव्यकला रसज्ञा रसशेवधिः ।
पुष्टा पुरातना पूज्या पुष्करा पुष्करेक्षणा ॥२०३॥

कलानिधिः=कलाओं के नानाविधि होने से उनकी जो निधि

है, आत्मा जो है यही उसकी सोलहवीं कला है। जीवों की जो निधि कला चन्द्रमण्डल में रहनेवाली जो कला है।

सर्वं कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते।

"कवेर्भावः कर्म वा काव्यम्" काव्य की कला।

जैसे, सौन्दर्यलहरी में कहा है —

स काव्यानां कर्त्ता

काव्यालापाश्चयेकेचिद्‌गीतकान्यखिलानि च।

शब्दमूर्तिधरस्यैतद्वपुर्विष्णोर्महात्मनः ॥

भगवती के उपासना करने से साधक में काव्य के उत्पादन शक्ति होती है इसलिये काव्यकला शुक्र की मृतसञ्जीवनी विद्या।

रसज्ञा=शृङ्गारादि रसों को जाननेवाली रसनेन्द्रिय स्वरूपा। ब्रह्मामृत को जाननेवाली।

रसशेवधिः=ब्रह्मामृत रस की निधि।

रसो वै सः रसꣳ एवायं लब्ध्वाऽऽनन्दी भवति।

ब्रह्माण्डपुराण में भी आया है —

रस एव परंब्रह्म रस एव परागतिः।

रसोहि कान्तिदः पुंसां रसो रेत इति स्मृतः ॥

रसो वै रससंलब्ध्वा ह्यानन्दी भगवत्यपि।

पुष्टा=अनेक गुण और ब्रह्मरस से पुष्ट षट्‌त्रिंशत्तत्त्व हैं उससे जिनका शरीर पुष्ट है।

पुरातना=सम्पूर्ण जीवों के आदि होने से पुरातना।

पूज्या=इसीलिये "सर्वेषां पूज्या" पूजने के योग्य।

पुष्करेक्षणा=पोषण जिसकी नेत्र कान्ति से जीवन हो जाता है।

"दवीयांसं दीनं स्नपय कृपया मामपि शिवे।"

सौन्दर्यलहरी—

पुष्करेक्षणा=पुष्कर तीर्थ है अक्षि जिसकी।

परंज्योतिः परंधाम परमाणुःपरात्परा।
पाशहस्ता पाशहंत्री परमन्त्रविभेदिनी ॥२०४॥

परंज्योतिः=परं उत्कृष्ट ब्रह्ममय ज्योतिस्वरूपा।

तद्देवा ज्योतिषांज्योतिरायुर्होपासतेऽमृतम्।
न तत्र सूर्योभाति न चन्द्रतारकम्॥
नेमाविद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।
"परं ज्योतिः रूपं सम्पद्यते"

श्रुति में आता है। "परं धाम"।

उत्कृष्टतेजः स्वरूप धाम है जिसका।

न तद्भासयते सूर्यो न शशांको न पावकः।
यद् गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमंमम॥

यज्ञवैभव खण्ड में आया है—

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्याख्यं वेदधामत्रयं तु यः।
स एवात्मा न तद् दृश्यं दृश्यं तस्मिन्प्रकल्पितम्॥
त्रिधामसाक्षिणं सत्यज्ञानानन्दादिलक्षणम्।

त्वमहं शब्दलक्ष्यार्थ परंधाम समाश्रये ।।
तद्विष्णोः परमं पदम् सदा पश्यन्ति सूरयः ।

कूर्मपुराण में इसका निम्नलिखितरूप से वर्णन आया है—

सैषा माहेश्वरी गौरी ममशक्तिर्निरञ्जना ।
शान्ता सत्या सदानन्दा परंपदमितिश्रुतिः ।।

परमाणु=परमा च साण्वी च परमाणुरूप सूक्ष्म से सूक्ष्म जो किसी इन्द्रिय से न देखा जाय । दुर्विज्ञेय जैसे अणोरणीयान् ।

परात्परा=ब्रह्म की जो आयु है उसके परित्राण को पर कहते हैं उससे भी आगे वह परं धाम का हेतु परमाणु है ।

कालीपुराण में—

"तस्य ब्रह्मस्वरूपस्य दिवारात्रं च यद्भवेत् ।
तत्परं नाम तस्यार्धं परार्धमभिधीयते ।।"
स ईश्वरस्य दिवसस्तावती रात्रिरुच्यते ।
स्थूलात्स्थूलतमः सूक्ष्माद्यस्तु सूक्ष्मतमो मतः ।।
न तस्यास्ति दिवारात्रिर्व्यवहारो न वत्सरः ।

पाशहस्ता—पाश बायें हाथ में है । पाशांकुशधारिणी ।

पाशहन्त्री—पाश पशुपाशों को (आठ प्रकार के हैं) उनको नाश करनेवाली । वन्दीगृह में उत्पन्न आये हुए साधकों के पाश को तोड़नेवाली ।

नागपाशेन वद्धस्य तस्योपहतचेतसः ।
त्रोटयित्वाकरैर्नागपञ्जरं वज्रसन्निभम् ।।

बद्धं बाणपुरे वीरमनिरुद्धमभाषत ।
सान्त्वयन्ती च सा देवी प्रसादाभिमुखी तदा ।।

परमन्त्रविभेदिनी—उपासकों के जो शत्रु हैं उनके मंत्रों को नाश करनेवाली अर्थात् शत्रु के किये हुए जो मन्त्र तन्त्र हैं उस साधक की रक्षा करनेवाली । प्रद्युम्न को इन्द्र ने सन्देश दिया था कि (हरिवंश की कथा है) ।

तदस्त्रप्रतिघाताय देवीं स्मर्तुमिहार्हसि ।

ये बारह प्रकार के मंत्र उत्कृष्ट मंत्र पञ्चदशीरूप हैं उनको अलग-अलग प्रस्तार रूप में बांटनेवाली । मनु, चन्द्र, कुबेर, लोपामुद्रा आदि ।

मूर्तामूर्ता नित्यतृप्ता मुनिमानसहंसिका ।
सत्यव्रता सत्यरूपा सर्वान्तर्यामिणी सती ।।२०५।।

मूर्तामूर्ता—मूर्त वायु आकाश आदि मूर्तिवाली यद्वा पञ्चीकृत महाभूत जो मूर्तियां हैं और अपञ्चीकृत महाभूत जो सूक्ष्म हैं उन दोनों में 'द्वे वाव ब्रह्मणोरूपे मूर्तञ्चामूर्तं च ।" क्षर अक्षर स्वरूपवाली ।

अक्षरं ब्रह्मकूटस्थं क्षरं सर्वमिदं जगत् ।

(विष्णुपुराण)—

नित्यतृप्ता—नित्य एक देश तृप्त दशा में रहनेवाली ।

मुनिमानसहंसिका– मुनियों के मनरूपी सरोवर में हंस मन्त्र रूपा ।

सत्यव्रता—सत्यं ब्रह्म यही है व्रत जिसका।

सत्यमेवव्रतं यस्याः सा सत्यव्रता।

शीघ्र फल देनेवाला फल हो वही जिसका व्रत हो कृष्ण की प्राप्ति के लिये गोपियों ने कात्यायनी का व्रत किया था।

विष्णुभागवत में—

सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते।
अभयं सर्वथा तस्मै ददाम्येतद् व्रतं मम॥

या सत्यव्रत उसको भी कहते हैं। सत्यव्रत नाम का एक ब्राह्मण था उसकी पर्णकुटी पर एक शूकर आया उसके 'अ' 'अ' इतना कहने पर वह सफल कवि और विद्वान हो गया।

अनक्षरो महामूर्खो नाम्ना सत्यव्रतोद्विजः।
श्रुत्वाऽक्षरं कौलमुखात्समुच्चार्य स्वयं ततः॥
विन्दुहीनं प्रसङ्गे न जातोऽसौ विवुधोत्तमः।
अकारोच्चारणादेव तुष्टा भगवती सदा॥
चकार कविराजं तं दयार्द्रा परमेश्वरी।

सत्यरूपा=सत्यं ब्रह्म है यही जिसका रूप है। जिसकी तीन काल में बाधा नहीं होती वही सत्य है।

सर्वान्तर्यामिणी=सब जीवों के अन्तःकरण को चलानेवाली

माण्डूक्योपनिषद् में—

एषोऽन्तर्याम्येषयोनिः सर्वस्य।
तत्सृष्ट्वा तदेवानुप्रविशत्।

सती—पतिव्रता उपासकों को पतिव्रत धर्म को देनेवाली।

ब्रह्मपुराण में आया है—

सा तु देवी सती पूर्वमासीत्पश्चादुमाऽभवत्।
सहव्रता भवस्यैव नैतया मुच्यते भवः॥

ब्रह्माणी ब्रह्मजननी बहुरूपा बुधार्चिता।
प्रसवित्री प्रचण्डाऽऽज्ञा प्रतिष्ठा प्रकटाकृतिः॥२०६॥

ब्रह्माणी—ब्रह्मरूपा।

ब्रह्मजननी—ब्रह्मा को भी पैदा करनेवाली। सारे प्रपञ्च को उत्पन्न करनेवाली।

बहुरूपा—अनेक जिसके रूप हों।

जैसे देवीपुराण के प्रसंग में आया है—

अरूपापरभावत्वात् बहुरूपा क्रियात्मिका।

अनेक रूप को धारण करनेवाली होने से बहुरूपा।

जैसे वेद में आया है—

असंख्याता सहस्राणि ये रुद्रा अधिभूम्याम्।

भागवत में भी आया है—

लक्ष्मी वागादिरूपेण नर्तकीव विभाति या।

अष्टादश करोड़ उसके भेद हैं।

वाराहपुराण में बहुरूपा का वर्णन आया है—

या रौद्री तामसी शक्तिः सा चामुण्डा प्रकीर्तिता।
नवकोट्यस्तु चामुण्डाभेदभिन्ना व्यवस्थिताः॥

तामसी—

या सा तु राजसी शक्तिः पालनी चैव वैष्णवी।
अष्टादश तथाकोट्यस्तस्याः भेदाः प्रकीर्तिताः॥
या ब्रह्म शक्तिः सत्त्वस्था अनन्तास्ताः प्रकीर्तिताः।
एतासां सर्वभेदेषु पृथगेकैकशो धरे॥
सर्वासां भगवान् रुद्रः सर्वगत्वात्पतिर्भवेत्।
यावन्त्यस्ता महाशक्त्यस्तावद्रूपाणि शंकरः॥
यश्चाराधयते तास्तु तस्य रुद्रः प्रसीदति।
सिद्धयन्ति तास्तदा देव्यो मंत्रिणो नात्र संशयः॥

नृसिंहपुराण में—

उमैव बहुरूपेण पत्नीत्वेन व्यवस्थिता।

त्रिपुरासिद्धान्त में—

लोपामुद्रा च सौभाग्या महाविद्या च षोडशी।
दाराः परशिवस्यैते कथितास्तु वरानने। इत्यादि।

बुधार्चिता=बुधों के द्वारा अर्चित। विद्वानों द्वारा सेवित।
प्रसवित्री—सारे संसार को उत्पन्न करनेवाली।
जैसे भगवती पुराण में आया है—

ब्रह्माद्याःस्थावरान्ताश्च यस्या एव समुद्गताः।
महदादिविशेषान्तं जगद्यस्याः समुद्गतम्॥
तामेव सकलार्थानां प्रसवित्रीं परां नुमः।

प्रचण्डाज्ञा—प्रचण्ड कोपयुक्त जिसकी आज्ञा है।
जैसे वेद में आया है—

भीषास्माद् वातः पवते ।

महद्भयं वज्रमुद्यतम् ।

प्रतिष्ठा—स्थित "धर्मोऽस्यविश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा"। सारे जगत् की अधिष्ठात्री होने से जगत् की प्रतिष्ठा इसमें है ।

ब्रह्मगीता में आया है—

प्रतिष्ठा सर्ववस्तूनां प्रज्ञैषा परमेश्वरी ।

सोलह अक्षर के छन्द का नाम प्रतिष्ठा जगत्तत्त्व में जो कला रहती है वह प्रतिष्ठा । "प्रतिष्ठा स्थान मात्रके"

प्रकटाकृतिः—सबसे अनुभूयमान है आकृति जिसकी । सब उपासकों को जिसके रूप की अनुभूति होती है ।

तमहं प्रत्ययव्याजात्सर्वे जानन्ति जन्तवः ।

तथापि शिवरूपेण न विजानन्ति मायया ॥

प्रकटानाम योगिनी भी है—पहले आवरण में जिसकी पूजा की जाती है । यह अप्सु जल में प्रगट होनेवाली है ।

आपो वा इदं सर्वम् ।

प्राणेश्वरी प्राणदात्री पञ्चाशत्पीठरूपिणी ।

विशृङ्खला विविक्तस्था वीरमाता वियत्प्रसूः ॥२०७॥

प्राणानां—इन्द्रियों की ज्योति आदिकों की अधिष्ठान देवता पञ्चप्राणवृत्तियों की अधिष्ठात्री देवता ।

"प्राणस्य प्राण" उपनिषद्—

प्राणदात्री—सारे जगत् को जीवन देनेवाली ।

प्राणमनूत्क्रामन्तं सर्वे प्राणा अनूत्क्रामन्ति ।

पञ्चशत् जो मातृकायें हैं उन्हीं में जिनका निवास है ।

पञ्चाशत् बहिर्मातृकान्यास के प्रकरण में लिपिन्यास आते हैं । उनमें निवास करनेवाली ।

जैसे 'पञ्चाशद्वर्णरूपेयं कन्दर्पशशिभूषणा' श्रीकण्ठादि पचास जो न्यास केशवादि न्यास तक तन्त्र सार में जो न्यास संग्रह किये गये हैं उन न्यासों में रहनेवाली ।

पञ्चाशत्पीठ – एते पीठाः समुद्दिष्टा मातृकारूपकास्थिताः उन-उन स्थानों में पीठन्यास किये जाते हैं ।

विश्रृङ्खला—जिसके कर्म की श्रृङ्खला निगड़ बन्धन से रहित । जैसे कहा है –

पातकप्रचयवन्मम तावत्पुण्यपुञ्जमपिनाथलुनीहि ।

विविक्तस्था—विजन एकान्त स्थान में रहनेवाली एकान्त में साधक लोग जिसका भजन करते हैं ।

वीरमाता – वीरों को पैदा करनेवाली इसे उपासना करने-वालों के वीर सन्तान पैदा होती है ।

जैसे पद्मपुराण में—

स एष वीरको देवि ! सदा मम हृदयप्रियः ।
नानाश्चर्यगुरुद्वारि गणेश्वरगणार्चितः ॥

इस पर भगवती ने कहा—

ईदृशस्य सुतस्यास्ति ममोत्कण्ठा पुरान्तक ।
कदाहमीदृशं पुत्रं द्रक्ष्याम्यानन्ददायकम् ॥

वियत्प्रसू:=आकाश को पैदा करनेवाली।

आत्मन आकाशः सम्भूतः।

मुकुन्दा मुक्तिनिलया मूलविग्रहरूपिणी।
भावज्ञा भवरोगघ्नी भवचक्रप्रवर्तिनी ॥२०८॥

मुकुन्दा=मुक्तिं ददातीति मुकुन्दा। मुक्ति को देनेवाली कैसे हुई।

कदाचिदाद्या ललिता पुरुषा कृष्णविग्रहा।
स्ववंशवादनारम्भादकरोद्विवशंजगत् ॥
ततः स गोपी संज्ञाभिरावृतोऽभूत्स्वशक्तिभिः।
तदा तेन विनोदाय स्वं षोढ़ाऽकल्पयत् वपुः ॥

मुक्तिनिलया=मुक्ति का स्थान।

मुक्तीनां निलयः आकारोयस्यां सा।

जिसकी उपासना करने से मुक्ति मिलती है।

मूलविग्रहरूपिणी=बालाबगला की मूलभूत जो राजराजेश्वरी जिसका रूप है।

भावज्ञा=भावः सत्ता स्वभावाविर्भाव को कहते हैं। भक्ति भजन करनेवाले के भाव को जाननेवाली।

भवरोगघ्नी=संसाररूपी जनन-मरण के रोगों को दूर करने-वाली।

शिवपुराण में—

व्याधीनां भेषजं यद्वत् प्रतिपक्षस्वभावतः।
तद्वत्संसार रोगाणां प्रतिपक्षः शिवाधत्रः॥

भव चक्रप्रवर्तिनी=संसार चक्र को चलानेवाली।

जैसा कि मनुस्मृति में आया है—

एष सर्वाणिभूतानि पञ्चभिर्व्याप्य मूर्तिभिः।
जन्मवृद्धिक्षये नित्यं संसारयति चक्रवत्॥

अनाहत चक्र को भी भवचक्र कहते हैं। यहां पर भी शिव भगवती का स्थान है। "अनाहताब्जनिलये" आया है।

छन्दःसारा शास्त्रसारा मन्त्रसारा तलोदरी।
उदारकीर्तिरुद्दामवैभवा वर्णरूपिणी ॥२०६॥

छन्दः—वर्णरूपिणी।

छन्दःसारा=छन्द ही जिसका सार है माहात्म्य है।

गायत्री मंत्र संसारे ऐक्यं सारं छन्दः सारः।

छन्दों में जिसका निष्कर्ष है गायत्र्यादि छन्दों में जिन मन्त्रों का तत्त्व है वह पञ्चदशी विद्या।

शास्त्रसारा=शास्त्रों में जिसका तत्त्व है।

मन्त्रसारा=जिसका बलमंत्र से मालूम होता है।

तलोदरी=तलं करतलादि के समान कृश है उदर जिसका अर्थात् छोटा उदर।

उदारकीर्तिः=महत्तर यश है जिसकी जिसकी उत्कृष्ट कीर्ति है। आ अरौ अरः।

"यत्कीर्त्तनं मङ्गलादि दुष्टग्रहदोषनिरासकम् ।"

मङ्गल कार्यों में जिसके कीर्तन करने से दुष्ट ग्रहदोष दूर होते हैं उसे उदारकीर्ति कहते हैं ।

उद्दामवैभवा=उद्दाम जिसका विभव वड़ा ऊँचा है उसे उद्दाम वैभवा अर्थात् अनावृत्त शब्द । फिर आवर्त्तन नहीं होता है ।

वर्णरूपिणी – मातृकारूपिणी ।

"त्रिषष्टिश्चतुःषष्टिर्वा वर्णाःशम्भुमते मताः ।
प्राकृते संस्कृते चापि स्वयम्प्रोक्ताः स्वयम्भुवा ॥"

पाणिनिशिक्षा में अकारादिवर्ण उसके रूप हैं ।

जन्ममृत्युजरातप्तजनविश्रान्तिदायिनी ।
सर्वोपनिषदुद्घुष्टा शान्त्यतीता कलात्मिका ॥२१०॥

तीन प्रकार के जन्म-मरण और वृद्धावस्था के दुःख से सन्तप्त प्राणियों को शान्ति देनेवाली ।

"सम्पूर्ण उपनिषद् से जिसके स्वरूप का ज्ञान होता है जिसे उपनिषदों ने कहा है—ब्रह्मसत्ता का उपदेश ।

यदेव विद्यया करोति श्रद्धयोपनिषदा तदेव वीर्यवत्तरं भवति।

शान्त्यतीता=आकाश में शान्ति जो कला है उससे दूर रहनेवाली ।

शैवागम में—

शान्त्यतीतकलाद्वैतनिर्वाणानन्दबोधदा ।

शान्त्यतीत मोक्षदा कला है। निर्वाण और आनन्द मोक्ष को देनेवाली शान्त्यतीत कला है वह स्वरूप जिसका है।

गम्भीरा गगनान्तस्था गर्विता गानलोलुपा।
कल्पनारहिता काष्ठाऽकान्ताकान्तार्धविग्रहा ॥२११

गम्भीरा=अनन्त होने से गम्भीर है।

गगनान्तस्था=दहराकाश, भूताकाश, गगनाकाश में निवास करनेवाली। "वृक्षइवस्तब्धो दिवि तिष्ठत्येक" विनाशकाल में गगन के अन्त में रहती है गगन आ को कहते हैं, अन्तस्थ य र ल व को कहते हैं। यह पञ्चभूतों के वीज का उद्धार है। आं यं रं लं वं।

गर्विता=विश्व के निर्माण करने से गर्वित रूपवाली।

गानलोलुपा=गायन में लोलुप।

"ततानद्धसुषिरघनचतुष्टयसमुच्चयात्मकम्
वादित्रादिकम्वा शारीरं सामगान्धर्ववातयोर्लोलुपा
सरेगमपधनिरतां तां वीणाहस्तां प्रसाधितकेशाम्।
वन्दे समन्दहसितां ईषद्धास्यां वराभयद्धतीम् ॥"

कल्पनारहिता=जिसकी कल्पना ही नहीं हो सकती है।

कल्प=जिसका प्रलय नहीं होता उससे रहित।

काष्ठा—समयरूपिणी, लकड़ी को भी काष्ठ कहते हैं। "सा काष्ठा सा परागतिः" गगनात्मक भीम नामक जो शिव है उसकी जो पत्नी स्वर्गमाता नामवाली उसको भी काष्ठा कहते हैं।

"महामहिम्नोदेवस्यभीमस्य परमात्मनः।
क्रान्वातिष्ठति वै काष्ठे।" निरुक्त—

"विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत्।"

अकान्ता—अकान्तेति त्र्यक्षरं नाम

कान्तार्धविग्रहा—कान्त जो शिव हैं उनके आधे शरीर को धारण करनेवाली।

कार्यकारणनिर्मुक्ता कामकेलितरङ्गिता।
कनत्कनकताटङ्का लीलाविग्रहधारिणी ॥२१२॥

कार्यनिर्मुक्ता—कार्य जो हैं महत्त्वादि कारण मूलप्रकृति आदि। उस चेतन सत्ता में इनका अभाव होने से "न तस्य कार्यं करणं च विद्यते।"

कामकेलितरङ्गिता—कामेश्वर महादेवजी के क्रीड़ा के विलास की तरङ्ग लहर।

कनत्कनकताटङ्का—जिसके ताटङ्क सोने के से चमक रहे हैं।

लीलाविग्रहधारिणी—अनायास ही शरीर को धारण करनेवाली। पद्मराजा की स्त्री लीला का भगवती का स्वरूप था।

तस्याऽऽसीत्सुभगा भार्या लीला नाम पतिव्रता।

अजा क्षयविनिर्मुक्ता मुग्धा क्षिप्रप्रसादिनी।
अन्तर्मुखसमाराध्या बहिर्मुखसुदुर्लभा ॥२१३॥

अजा—जन्मरहिता नित्या, अजामेकां इति।

न जातो न जनिष्यते।

महाभारत में—

न हि जातो न जायेऽहं न जनिष्ये कदाचन।
क्षेत्रज्ञः सर्वभूतानां तस्मादहमजःस्मृतः॥
"जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः।"

क्षयविनिर्मुक्ता—क्षय से विनिर्मुक्त, जिसका नाश नही होता है। क्षय घट को भी कहते हैं।

सुन्दरी के उपासकों को घर पर भी मोक्ष मिल जाता है।

यदि परमिच्छसि धाम त्यज मा नाम स्वकं धाम।
परपदनियमनदाम स्मरहृदि कामद्विषो नाम॥

मुग्धा - सुन्दर सौन्दर्य की छटा। "मुग्धः सुन्दर मूढ़योः।"

क्षिप्रप्रसादिनी—जैसे आया है—

आराधनादुमेशस्य तस्मिञ्जन्मनि मुच्यते।

अन्तर्मुखसमाराध्या—अन्तर्मुखवृत्तिवालों से जो समाराधना के योग्य, बहिर्मुख विषयवृत्ति से जो दुर्लभ है।

त्रयी त्रिवर्गनिलया त्रिस्था त्रिपुरमालिनी।
निरामया निरालम्बा स्वात्मारामा सुधाश्रुतिः २१४

त्रयी—ऋक् यजुः सामस्वरूपा त्रयी विद्या।

त्रिवर्गनिलया—धर्म, अर्थ, काम ये तीन वर्ग है उनमें जिसका स्थान है।

त्रयोलोकास्त्रयोदेवास्त्रैविद्यं पावकत्रयम् ।
त्रीणि ज्योतींषि वर्गाश्च त्रयोधर्मादयस्तथा ।।
त्रयोगुणास्त्रयः शब्दाः त्रयोदोषास्तथाश्रमाः ।
त्रयः कालास्तथाऽवस्था पितरोऽहर्निशादयः ।।
मात्रा त्रयं च ते रूपं त्रिस्थे देवि सरस्वति ।

त्रिपुरमालिनी=अन्तर्दशार (श्री यन्त्र) के चक्र की त्रिपुर-मालिनी देवी होती है ।

निरामया=रोग रहित ।

निरालम्बा=सर्व आलम्बनों में श्रेष्ठतम ।

एतदालम्बनं श्रेष्ठमेतदालम्बनं परम् ।।

स्वात्मारामा=स्वात्मेवरामा । अपनी ही आत्मा में रमण करनेवाली । आत्मक्रीडा आत्मरति एष क्रियावान् यदात्मरतिः ।

सुधाश्रुति=सहस्रारकर्णिका में जो चन्द्र है वहां से जो अमृत निकलता है उस अमृत को श्रवण करनेवाली कुण्डलिनी रूप ।

संसारपंकनिर्मग्नसमुद्धरणपण्डिता ।
यज्ञप्रिया यज्ञकर्त्री यजमानस्वरूपिणी ।।२१५।।

संसार=संसाररूपी कीचड़ में निमग्न हुए मनुष्यों को उद्धार करनेवाली ।

जैसे सौन्दर्यलहरी में आया है—

निमग्नानां दंष्ट्रा मुररिपुवराहस्य भवति ।
दुस्तरापारसंसारसागरे न पतन्ति ते ।।

भगवती की उपासना करनेवाले कभी दुस्तर संसार के सागर में नहीं गिरते हैं।

यज्ञप्रिया—यज्ञ ही जिसे प्रिय है। "यज्ञो वै विष्णुः।"

यज्ञकर्त्री=यजमानस्वरूप। यजमानात्मक दीक्षितस्वरूप। दीक्षाख्या परमशिव की स्त्री।

महादेवोबुधैः प्रोक्तः यजमानस्वरूपकः।
यजमानात्मको देवो महादेवो बुधैः प्रभुः॥
उग्र इत्युच्यते सद्भिरीशानश्चेति चापरैः।

यजमानमूर्तिः=आठ शिवमूर्तियों में जो शिव की गणना है उनमें चरम मूर्ति में यजमान मूर्ति की गणना की गई है।

पञ्चभूतानि चन्द्रार्कावात्मेति मुनिपुङ्गवाः।
मूर्तिरष्टौ शिवस्याहुर्देवदेवस्य धीमतः॥
आत्मा तस्याष्टमी मूर्तिर्यजमानाह्वयापरा।

धर्माधारा धनाध्यक्षा धनधान्यविवर्धिनी।
विप्रप्रिया विप्ररूपा विश्वभ्रमणकारिणी ॥२१६॥

धर्माधारा=धर्म में जिसका निरर्गल प्रवाह हो रहा है। धर्म जो आत्मा है वही जिसका आधार है। "धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितम्"।

धनाध्यक्षा=धन की स्वामिनी, पति के धन की स्त्री स्वामिनी होती है। "कुबेररूपा धनाध्यक्षा"।

धनधान्यविवर्द्धिनी=धन और धान्य को वढ़ानेवाली। जो

भगवती के उपासक होते हैं उनका धनधान्य समृद्धि बढ़ती जाती है।

विप्रप्रिया=विद्यया याति विप्रत्वं। विद्यावान पर प्रेम करनेवाली।

विप्ररूपा—अविद्यो वा सविद्यो वा ब्राह्मणो मामकी तनूः।

अर्थात् अविद्यो–कर्मकाण्डप्रभृति वेदादि विद्या को जाननेवाला।

सविद्यो=जो पराविद्या को जाननेवाला है।

विश्वभ्रमणकारिणी=सम्पूर्ण विश्व में जितने ब्रह्माण्ड हैं उनमें भ्रमणशील है।

"स्वभावमेके कवयो वदन्ति
कालं तथाऽन्ये परिमुह्यमानाः।
देवस्यैष महिमा तु लोके
येनेदं भ्राम्यते ब्रह्मचक्रम्॥
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया।

विश्वग्रासा विद्रुमाभा वैष्णवी विष्णुरूपिणी।
अयोनिर्योनिनिलया कूटस्था कुलरूपिणी॥२१७॥

विश्वग्रासा=विश्व सचराचर को ग्रस लेती है। चराचर को ग्रसन करनेवाली।

''यस्य ब्रह्म च क्षत्रं चोभे भवत ओदनः।
मृत्युर्यस्योपसेचनं कं इत्था वेद यत्र सः॥

ब्रह्मसूत्र में भी—

अत्ता चराचरग्रहणात्।

विद्रुमाभा=प्रवाल के सदृश जिसकी कान्ति है।

वित्=ज्ञानरूपी जो वृक्ष है उसके समान।

सर्वतो स्फीत कान्ति।

वैष्णवी=विष्णु की शक्ति।

मार्कण्डेयपुराण में—

आयाति वैष्णवीशक्तिर्गरुडोपरि संस्थिता।

एवं वैष्णवी शक्तिरनन्तरूपा॥

देवीपुराण में—

शंखचक्रगदाधत्ते विष्णु माता तथारिहा।

विष्णुरूपाऽथवा देवी वैष्णवी तेन गीयते॥

विष्णुरूपिणी=विष्णु ही रूप जिसका है।

जैसे ललितोपाख्यान में और विष्णुपुराण में आया है—

ममैव पौरुषं रूपं गोपिकाजनमोहनम्।

इति वचनात् वीरभद्र के प्रति विष्णु का वचन है—

आद्याशक्तिर्महेशस्य चतुर्धा भिन्नविग्रहा।

भगवान की आद्याशक्ति के चार भिन्नरूप हैं।

भोगे भवानीरूपा सा दुर्गारूपा च संगरे।

कोपे च कालिकारूपा पुंरूपा च मदात्मिका॥

स एव माययामोहं व्यामोहयति।

अयोनिः=अजा।

"कर्तारमीशं पुरुषं ब्रह्मयोनिम्"

योनिनिलया=योनि में जिसका निलय है।

विष्णोर्योनिजनिका माता। निलीयते जगद्यस्यां निलया योनि रेवसा। अयोनिर्योनिनिलया—योनिश्च हि गीयते। इति ब्रह्मसूत्रम्।

कूटस्था=कूटवत्तिष्ठतीति कूटस्था, कूटवाग्भवादि कूट त्रयात्मिका।

कुलरूपिणी=कौलमार्ग की जो बाह्योपचार से पूजा है वह है स्वरूप जिसका।

वीरगोष्ठीप्रिया वीरा नैष्कर्म्या नादरूपिणी।
विज्ञानकलना कल्या विदग्धा बैन्दवासिनी ॥२१८

वीरगोष्ठीप्रिया=वीरों की गोष्ठी को प्यार करनेवाली। भगवती के साधक वीर होते हैं।

वीरा=वीरों की माता।

नैष्कर्म्या=निष्कर्म आनन्द लक्षण मोक्षरूपा कर्मरहित। जिसमें कोई पुण्य पाप लिप्त नहीं होते पुण्यपाप से रहित।

नादरूपिणी=प्रणव के शिर में जो रहते हैं।

आनन्दलक्षणमनाहतनाम्नि देशे
नादात्मना परिणतं तव रूपमीशे।
प्रत्यङ्मुखेन मनसा परिचीयमानम्
शंसन्ति नेत्रसलिलैः कुलकैश्चधन्याः॥

नाद में जिसका स्वरूप है जिसे स्वच्छन्द तन्त्र में दिखाया है।

रोधिन्याख्यं यदुक्तं ते नादस्तस्योर्ध्वसंस्थितः।

विज्ञानकलना=विज्ञान जो है उसकी कलना करनेवाली।

कल्या=कलासु साधुःकल्या।

कलयितुमर्हा कल्या।

प्रत्पूषोऽहर्मुखं कल्यं।

विदग्धा=मनोन्मयी मन को खींचनेवाली।

वैन्दवासिनी=बिन्दु—श्रीचक्र का जो स्थान है उसमें रहनेवाली। हाकिनी का जो स्थान है उसके ऊपर रहनेवाली। सर्वानन्दमय चक्र में रहनेवाली।

बिन्दूनां समूहो वैन्दवम्।

ज्ञानार्णव में बिन्दुव्यूह जिसे कहा है—

"हकारं विन्दुरूपेण ब्रह्माणं विद्धि पार्वति।

सकारं बिन्दुसर्गाभ्यां हरिश्चाहं सुरेश्वरि॥

बिन्दुत्रय कहे गये हैं।

"मुखं बिन्दुं कृत्वाकुचयुगमधस्तस्यतदधः"

एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचन्द्रवत्

तत्त्वाधिका तत्त्वमयी तत्वमर्थस्वरूपिणी।

सामगानप्रिया सौम्या सदाशिवकुटुम्बिनी॥२१६

तत्त्वाधिका—षट्त्रिशन जो तत्त्व हैं उन तत्त्वों से अधिक अर्थात् उनके ऊपर उन तत्त्वों के नाश करने में भी नित्य रहनेवाली।

तत्त्वमयी=तत्त्वप्रचुरा, शिवतत्त्व में चित् स्वरूप से निवास करनेवाली तत्त्व में अर्धस्वरूपा अर्धाङ्गिनी रूप में।

स्वयं प्रज्ञातसंज्ञस्तु शिवाधिश्येन जायते।
असम्प्रज्ञातनामा तु शिवतत्त्वेन वै भवेत्॥

सामगानप्रिया=साम गान जिसको प्रिय है।

'गीता में'—वेदानां सामवेदोऽस्मि।

सौम्या=सौम्यमूर्ति।

सदाशिव जो आत्मा है उसकी शक्ति।

सव्यापसव्यमार्गस्था सर्वापद्विनिवारिणी।
स्वस्था स्वभावमधुरा धीरा धीरसमर्चिता॥२२०

दक्षिण और वाम दोनों मार्ग में टिकी हुई अर्थात् भुक्ति एवं मुक्ति देनेवाली।

"सन्ति हि सवितृमण्डलस्योत्तर-दक्षिण-मध्यभाग भेदेन त्रयो मार्गाः अश्विन्यादिभिः स्त्रिभिस्त्रिभिर्नक्षत्रैरेकैका वीथी ऐसी तीन वीथियों में एक-एक मार्ग होता है।

अश्विनी कृत्तिका याम्या नागवीथीति कीर्तिता।
रोहिण्यार्द्रा मृगशिरो गजवीथ्यविधीयते॥
पुष्याश्लेषा तथादित्या वीथी चैरावती स्मृता।

ये तीन वीथी हैं।

एतास्तु वीथयस्तिस्र उत्तरो मार्ग उच्यते।
तथा द्वे चापि फल्गुन्यौ मघा चैवार्षती मता॥

हस्तश्चित्रा तथा स्वाती गोवीथीत्यभिधीयते ।
ज्येष्ठा विशाखानुराधा वीथी जारद्गवी मता ।
एतास्तु वीथयस्तिस्रो मध्यमोमार्ग उच्यते ॥
मूलाषाढोत्तराषाढा अजवीथ्यभिशब्दिता ।
श्रवणं च धनिष्ठा च मार्गी शतभिषस्तथा ॥
वैश्वानरी भाद्रपदे रेवती चैव कीर्तिता ।
एतास्तु वीथयस्तिस्रो दक्षिणोमार्ग उच्यते ॥

वाम कर्म का मार्ग दक्षिण ज्ञान का मार्ग इन दोनों से जिसकी उपासना की जाती है ।

शरणं त्वां प्रपद्यन्ते ये देवि परमेश्वरि ।
न तेषामापदः काश्चिज्जायन्तेक्वापि संकटः ॥

सम्पूर्ण आपत्तियों को दूर करनेवाली ।
स्वस्था=शोभना है स्थिति जिसकी ।
स्वभावमधुरा=प्रकृति से ही जिसमें माधुर्य है ।
धीरा=धीर जो आत्मज्ञानी पुरुष हैं तत्स्वरूपवाली ।
धीरसमर्चिता=धीर पुरुषों द्वारा समर्चित ।

चैतन्यार्घ्यसमाराध्या चैतन्यकुसुमप्रिया ।
सदोदिता सदातुष्टा तरुणादित्यपाटला ॥२२१॥

चैतन्य जो चिद्रूप है अर्थात् आत्मचैतन्य उससे अच्छी प्रकार आराधना करने के योग्य वेदान्त प्रतिपाद्य ब्रह्मभाव की विकासरूपिणी पूजा है अर्घ्य पूज्य ।

स्कन्दपुराण में इसका विशदीकरण इस प्रकार आया है—

स्वानुभूत्या स्वयं साक्षात स्वात्मभूतां महेश्वरीम् ।
पूजयेदादरेणैव पूजा सा पुरुपार्थदा ।।

चैतन्यकुसुमप्रिया=चिद्रूप का जो कुसुमित होता है उस महाफल को उत्पन्न करनेवाली ।

जैसे सौन्दर्यलहरी में आया है—

जडानां चैतन्यस्तबकमकरन्दश्रुतिझरि ।

चैतन्यकुसुम चिच्छक्ति के विकास करने में जो पुष्प उगे हैं वे ये हैं—

अहिंसा प्रथमं पुष्पं इन्द्रियाणां च निग्रहः ।
क्षान्तिःपुष्पं दयापुष्पं ज्ञानपुष्पं परंमतम् ।।
तपः पुष्पं सत्यपुष्पं भावपुष्पमथाष्टमम् ।

चिच्छक्ति के उगे पुष्पों में जिसका अनुराग है ।

सदोदिता=नित्य उदित उदयवती नित्य जिसका प्रकाश एक ही तरह रहता है। शुभकर्म करनेवाले सज्जनों को ऐश्वर्य देनेवाली ।

सदातुष्टा=निरन्तर सन्तोष देनेवाली ।

तरुणादित्यपाटला=तरुण प्रात.काल का जो सूर्य उसके समान श्वेतरक्त वर्णवाली ।

"शान्ता धवल वर्णाभा मोक्षधर्मप्रकल्पने ।"

मोक्षधर्म को चाहनेवाले को शान्तधवल ।

स्त्रीवश्ये राजवश्ये च जनवश्ये च पाटला।
पीता धना च सम्पत्तौ कृष्णामारण कर्मणि॥
ब्रभ्रूर्विद्वेषणे प्रोक्ता शृङ्गारे पाटलाकृतिः।
सर्ववर्णा सर्वलाभे ध्येयाज्योतिर्मयी परम्॥

इस प्रकार विभिन्न कार्यों में विभिन्न प्रकार के रंग काम में लेना।

दक्षिणा दक्षिणाराध्या दरस्मेरमुखाम्बुजा।
कौलिनीकेवलाऽनर्घ्यकैवल्यफलदायिनी॥२२२॥

दक्षिणा=पण्डित और मूर्ख इन दोनों के द्वारा आराध्य। दक्षिण और वाममार्गी इन दोनों से उपासना की जाने योग्य।

जैसे—

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाःसुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ॥

दरस्मेर=विकसित स्मित मुख कमलवाली। भय के समय में भी जिसका मुख ईषद्धास्यमय रहता है।

नीचे के ये पूर्ण रूप के भगवती के नाम पहले भी आ गये हैं 'कौलिनी कुलयोगिनी'।

यद्वा, कुल धर्मवाली कुलषट् चक्र भेदन करनेवाली। कुण्डलिनी के धर्मवाली। केवला ज्ञानवती। ईश्वर ज्ञान को केवला कहते हैं। जिसमें किसी भी पदार्थ का धर्म नहीं है सब धर्मों से सुखदुःखादि देह धर्म और मनोधर्म से विमुक्त।

तद्विमुक्तस्तु केवला ।

अनर्घ्यकैवल्यफलदायिनी=मोक्ष को देनेवाली । अमूल्य केवलाख्य मुक्तिपद देने में जिसकी सामर्थ्य है ।

स्तोत्रप्रिया स्तुतिमती श्रुतिसंस्तुतवैभवा ।

मनस्विनी मानवती महेशी मंगलाकृतिः ॥२२३॥

स्तोत्रप्रिया=गुणानुवादन करने से प्रसन्न होनेवाली ।

न मंत्रं नो यन्त्रं इत्यादि शिवःशक्त्यायुक्तः आदि प्रशंसा परक स्तोत्रों से प्रसन्न ।

स्तुतिमती=जिसकी स्तुति की जाती है ।

स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथासुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता ।

ज्ञानेश्वर्यादि से प्राप्त होती है ।

श्रुतिसंस्तुतवैभवा=जिसके वैभव को वेदों ने स्तवन किया है अर्थात् वेदों में जिसका स्तवन आया है ।

ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवति ।

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामीत्यादि ।

कूर्मपुराण में श्रुतिसंस्तुत ।

चतस्रः शक्तयोदेव्याः स्वरूपत्वे व्यवस्थिताः ।

अधिष्ठानवशात्तस्याः श्रृणुध्वं मुनिपुङ्गवाः ॥

शान्तिर्विद्या प्रतिष्ठा च निवृत्तिश्चेति ताः स्मृताः ।

अनयापरमो देवः स्वात्मानन्दंसमश्नुते ॥

मनस्विनी=मनःश्चित्तं समुन्नतिरादरणं वाऽस्तीति मन-

नी। यद्वा, मनोऽस्याः स्वतन्त्रतया तिष्ठतीति मनस्विनी प्रशस्त नवाली। पराश्री निवृत्ति का रूप होने से मनस्विनी।

मानवती=मान चित्तसमुन्नति चित्त को उन्नत करनेवाली। न को आदर देनेवाली।

महेशी=जैसे देवीपुराण में आया है—

> महादेवात्समुत्पन्ना महद्भिर्यत आदृता।
> महेशस्य वधूर्यस्मान्महेशी तेन सा स्मृता ॥

मङ्गलाकृति=मङ्गलरूप जिसकी आकृति है अर्थात् जिसके खने से मङ्गल लाभ होता है।

'सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये' जिसकी मूर्ति के देखने से मङ्गल होता है।

विश्वमाता जगद्धात्री विशालाक्षी विरागिणी।
प्रगल्भा परमोदारा परमोदा मनोमयी ॥२२४॥

विश्वमाता=संसार की माता।

विश्वेश्वरि त्वं परिपासि विश्वं विश्वात्मिका धारयसीति विश्वं

जगद्धात्री=जगत् को धारण करनेवाली जगत् की माता।

देवीपुराण में आता है—

> यस्माद्धारयते लोकान्वृत्तिमेषां ददाति च।
> डुधाञ्धारणेधातोर्जगद्धात्रीमता बुधैः ॥

विशालाक्षी=जिसके नेत्र विस्तीर्ण है। वाराणसी पीठ की अभिमानी देवता को विशालाक्षी कहते हैं।

'वाराणस्यां विशालाक्षी'।

विरागिणी=वैराग्यवाली।

प्रगल्भा=सृष्टि की रचना स्थिति और संहार को समझनेवाली होने से प्रगल्भा।

परमोदारा=परम उदार।

उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्।

परमोदा=जिसका हर्ष बहुत उत्कृष्ट एवं जिसकी कृति बहुत ऊँची है।

मनोमयी=शुद्ध ब्रह्म के मनः स्थानीय होने से मनोमयी।

जैसे महावशिष्ठ में आया है—

स भैरवश्चिदाकाशःशिवइत्यभिधीयते।
अनन्यां तस्य तां विद्धि स्पन्दशक्तिर्मनोमयी॥

वेद में—मनसैवानुद्रष्टव्यम्।

व्योमकेशी विमानस्था वज्रिणी वामकेश्वरी।
पञ्चयज्ञप्रिया पञ्चप्रेतमञ्चाधिशायिनी॥२२५॥

व्योमकेशी=आकाश ही जिसके केश हैं।

व्योमकेश=शिवजी उनकी स्त्री।

विमानस्था=विशिष्ट है मा कान्ति जिसकी यह विमानस्था पुष्पक विमान में बैठी हुई, जिसका मीन दूर हो गया अर्थात् ब्रह्म निष्ठा महाविराट् रूप है।

वज्रिणी=इन्द्र की शक्ति, शचीरूपा वज्र को धारण करने-

ाली। यद्वा, वज्राख्य मणि (हीरक) आदि रत्नों से विभूषित।

वामकेश्वरी—वामकेश्वर तन्त्र से प्रतिपाद्या होने से वाम-ेश्वरी।

२—वामा कर्म में पञ्चयज्ञादि में रतिवाली।

३—वमन्ति उद्गारेण जगत सृजन्ति वामका।

पञ्चयज्ञप्रिया=पञ्चयज्ञों के करने से जो प्रसन्न होती है यज्ञः पञ्चविधः अग्निहोत्र, दर्श, पूर्णमास, चातुर्मास्य पशुः सोम।

देवयज्ञ, ब्रह्मयज्ञ, भूतयज्ञ, पितृयज्ञ, मनुष्ययज्ञ।

५—ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर सदाशिव इन पाँचों का मञ्च।

गतास्ते मञ्चत्वं द्रुहिणहरिरुद्रेश्वरभृतः।
शिवः स्वच्छच्छायाघटितकपटप्रच्छदपटः॥

पञ्चमी पञ्चभूतेशी पञ्चसंख्योपचारिणी।
शाश्वती शाश्वतैश्वर्या शर्मदा शम्भुमोहिनी॥२२६

पञ्चमी=ब्रह्मादि जो पाँच देवता हैं उनमें सदाशिव पञ्चम है उसकी शक्ति।

सूतगीता में—तस्याप्यम्बासहायोक्तेः।

त्रिषुः रुद्रोवरिष्ठः स्यात्तेषु मायी परः शिवः।

पञ्चभूतेशी=पञ्चमी शब्दो वाराह्यां निबद्धो—काल पञ्चम-कन्दमाता पञ्चभूत पृथिवी आदि की ईश्वरी चलानेवाली।

दक्षिणामूर्ति संहिता में—

पूजयेत्पञ्चमी सुतम्।

घटं स्पृष्ट्वा हृदि ध्यात्वा पञ्चमीं परमेश्वरीम् ।
पञ्चमीशकटं यन्त्रं त्रिषु लोकेषु दुर्लभम् ॥

• पञ्चसंख्या के उपचार पञ्च मकार से पूजित पूजी जाती है । कल्पसूत्र में—

आनन्दं ब्रह्मणो रूपं तच्च देहे व्यवस्थितम् ।
तस्याभिव्यञ्जकाः पञ्च मकारास्तैरथार्चनम् ॥

अतएव पञ्चानां मानां पञ्च संख्या के जो उपचार हैं उनसे जिनकी रक्षा की जाती है ।

पञ्चरूपा तु या माला वैजयन्ती गदाभृता ।
सा भूतहेतुसंघाता भूतमाला भवेद्द्विज ॥

पञ्चरत्नों से पूजित ।

तेजसः कौस्तुभो जातो वायोर्वैडूर्यसञ्ज्ञकम् ।
पुष्करात्पुष्परागस्तु (पुखराज) वैजयन्त्या
(लहसुनिया) हरेरिमे ॥

पञ्चसंख्या=गन्धपुष्प धूपदीप नैवेद्य ।
शाश्वती=नित्य रहनेवाली ।
शाश्वतैश्वर्या=जिसका ऐश्वर्य नित्य रहता है ।
शर्मदा=शर्म कल्याणदायिनी ।
शम्भुमोहिनी=शिव को मोहित करनेवाली ।

धरा धरसुता धन्या धर्मिणी धर्मवर्धिनी ।
लोकातीता गुणातीता सर्वातीता शमात्मिका ॥२२७

धरा=सारे संसार को धारण करनेवाली पृथ्वीरूपा।

सीताजी पृथ्वी से निकली धरसुता।

धन्या=कृतार्था धनाय हिता वा धनं लब्धी वा धनगणं लभ्या सर्वैश्वर्यप्राप्ता।

धर्मिणी=सब देव मनुष्य पिशाच किन्नरों के धर्मों को धारण करनेवाली। पञ्चजनों के धर्म को धारण करनेवाली।

धर्मवर्द्धिनी=धर्म को बढ़ानेवाली।

लोकातीता=लोक इन्द्रलोक से लेकर विष्णुलोक से भी आगे कहाँ ? शिवपुर में स्थित।

"ज्ञेयं विष्णुपदादूर्ध्वं दिव्यं शिवपुरं महत्।"
इत्येतदपरं तुभ्यं प्रोक्तं शिवपुरं महत्।
देहिनां कर्मनिष्ठानां पुनरावर्तनं स्मृतम्॥
ऊर्ध्वं शिवपुराज्ज्ञेयं स्थानत्रयमनुत्तमम्।
न तेषां पुनरावृत्तिर्घोरे संसारसागरे॥

गुणातीता=सत्त्व रजः तमस् जो तीन प्रकृति के गुण है उनसे अतीत।

शब्दातीत परब्रह्म गणना रहितं सदा।
आत्मस्वरूपं जानीहि।

सर्वातीता=सबसे अतीत शब्दातीत।

शमाश्रिता=शम=प्रपञ्चोपशम उसमें आश्रित आत्मरूप में जिसकी स्थिति है।

शान्तं शिवं अद्वैतम् चतुर्थं मन्यन्ते। स आत्मा सविज्ञेय।

बन्धूककुसुमप्रख्या बाला लीलाविनोदिनी ।
सुमङ्गली सुखकरी सुवेषाढ्या सुवासिनी ॥२२८॥

बन्धूककुसुमप्रख्या=जपाकुसुम 'बन्धूको वन्धु जीवको' जो फूल है उसके समान जिसकी कान्ति है अतिरक्त कान्तिवाली।

बाला=कुमारी ।

वेद में आया है—

त्वं कुमार उत वा कुमारी ।

जीर्णेन दण्डेन वञ्चयसि ब्रह्मदासा ब्रह्मदाशा । श्रुतिः

त्रिपुरासिद्धान्त—

बाललीला विशिष्टत्वाद् बालेति कथिता प्रिये ।

लीला=प्रापञ्चिकी क्रीड़ा ।

लीलामात्रं तु कैवल्यम्—ब्रह्मसूत्रे ।

बाललीला में विनोद करनेवाली ।

लीला देवी ने अपनी तपस्या से सरस्वती को प्रसन्न किया। प्रसन्न सरस्वती ने उसको ज्ञान दिया और उसके भर्त्ता को जीवन दिया।

देवीपुराण में इसका उल्लेख है।

सुमङ्गली=सुमङ्गल शोभन है ब्रह्म जिसका ।

सुमङ्गलीरियं वधूः ।

अशुभानि निराचष्टे तनोति शुभसन्ततिम् ।
श्रुतिमात्रेण यत्पुंसां ब्रह्म तन्मङ्गलं विदुः ॥

यस्यस्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु ।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥
एतद्धि मङ्गलं प्रोक्तमृषिभिर्ब्रह्मवादिभिः ।
प्रशस्ताचरणं नित्यमप्रशस्तविवर्जनम् ॥

सुखकरी=सुख को देनेवाली भगवती की उपासना करने से साधकों को सुख मिलता है ।

सुवेषाढ्या=सुन्दर वस्त्रों को धारण करनेवाली ।

षोडशश्रृङ्गारवतीं षोडशमयीं षोडशीं नौमि ।

सुवासिनी=जिनका अभी विवाह हुआ है । सोलह वर्ष के बाद सुवासिनी ।

सुवासिन्यर्चनप्रीताऽऽशोभना शुद्धमानसा ।
बिन्दुतर्पणसन्तुष्टा पूर्वजा त्रिपुराम्बिका ॥२२६॥

सुवासिन्यर्चनप्रीता=सुवासिनी के अर्चन करने से प्रसन्न होनेवाली ।

आशोभना=सौन्दर्यवती, सुन्दरता की झलक ।

"त्वदीयं सौन्दर्यं तुहिनगिरिकन्ये तुलयितुम्"

शुद्धमानसा=शुद्ध है मानस जिसका जिसके मनमें शुद्धता है ।

बिन्दुतर्पणसन्तुष्टा—सर्वानन्दमय चक्र बिन्दु जो है उसमें तर्पण करने से सन्तुष्ट होनेवाली सर्वानन्दमय यन्त्र को पूजने से तृप्त होनेवाली ।

पूर्वजा—सबसे पहले प्रगट होनेवाली ।

"अहमस्मि प्रथमजा ऋतस्य।" श्रुतिः

त्रिपुराम्बिका—तीनपुर जिससे प्रगट होते हैं।

तीन अवस्थाओं की अम्बिका तीन अवस्था जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति जिससे निकलती है। कुमार, युवा और वृद्ध इनको देंनेवाली।

दशमुद्रासमाराध्या त्रिपुराश्रीवशंकरी।
ज्ञानमुद्रा ज्ञानगम्या ज्ञानज्ञेयस्वरूपिणी ॥२३०॥

दशमुद्रासमाराध्या—संक्षेपणादि त्रिखण्डा तक दशमुद्रा है उनसे अच्छी प्रकार जिनका आराधन किया जाता है।

त्रिपुराश्रीवशंकरी—पञ्चमचक्र श्रीचक्र की अधिष्टात्री देवी। पञ्चम चक्राधिष्ठात्री त्रिपुराश्री नामिका देवी तां वशं कुरुते इति त्रिपुराश्रीवशंकरी।

तर्जनी अंगुष्ठ के योग से दशमुद्रा होती है। ज्ञानमुद्रा अन्तर्लक्षं इत्यादि ज्ञानमुद्रा। ज्ञानं चिदंशंमुदमानन्दांशं उसको चारों ओर से अपने लगानेवाली।

ज्ञानगम्या=ज्ञान से ही जो प्राप्त होती है।

ज्ञानादेव हि कैवल्यम्। ऋते ज्ञानान्नमुक्तिः॥

कूर्मपुराण—

यत्तु मे निष्कलं रूपं चिन्मात्रं केवलं शिवम्।
सर्वोपाधिविनिर्मुक्तमनन्तममृतं परम्॥

ज्ञानेनैकेन तल्लभ्यं क्लेशेन परमं पदम् ।
ज्ञानमेव प्रपश्यन्तो मामेव प्रविशन्ति ते ॥

योनिमुद्रा त्रिखण्डेशी त्रिगुणाम्बा त्रिकोणगा ।
अनघाऽद्भुतचारित्रा वाञ्छितार्थप्रदायिनी २३१

योनिमुद्रा=योनि नवम मुद्रा को कहते हैं ।

मन्त्रों में जो दोष आ जाते हैं उनके दूरीकरणार्थ योनिमुद्रा होती है यह उत्तर खण्डाख्या है ।

त्रिखण्डाख्या=दशमी मुद्रा की स्वामिनी ।

त्रिगुणा=सोम सूर्य और अग्नि तीन प्रकार के मन्त्र सोमात्मक सूर्यात्मक अनिलात्मक मन्त्रों की स्वामिनी ।

अम्बा=ईदृशस्य गुणत्रयस्यापि माता ।

त्रिकोणगा=त्रिकोण चक्रमें रहनेवाली ।

नानाकृतिक्रियारूपनामवृत्तिः स्वलीलया ।
त्रिधा यद्वर्तते लोके तस्मात्सा त्रिगुणोच्यते ॥

त्रिकोण योनि चक्र में जानेवाली ।

अनघा=जिसके सम्पूर्ण चरित्र पापों को नाश करते हैं ।

अद्भुतचारित्रा=आश्चर्य चकित करनेवाले जिसके चरित्र हैं जिसमें कोई पाप नहीं है ।

वाञ्छितार्थफलप्रदा=वाञ्छित अर्थ को देनेवाली ।

अभ्यासातिशयज्ञाता षडध्वातीतरूपिणी ।
अव्याजकरुणामूर्तिरज्ञानध्वान्तदीपिका ॥२३२॥

अभ्यासातिशयज्ञाता=पुनः पुनः अभ्यास करने से जिसकी प्राप्ति होती है।

"अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।"

षडध्वातीतरूपिणी=छै जो—भुवनाध्वा, वर्णाध्वा, तत्वाध्वा, पदाध्वा, कलाध्वा, मन्त्राध्वा। इनमें तीन विसर्शा, वाद के तीन प्रकाश पहले सूर्य बाद के किरण हैं।

विरूपाक्षपञ्चाशिका में=अविमर्शस्येकार्णः पदमन्त्राणात्मक-स्त्रिधा भवति। पुरतत्वकलात्मार्थो धर्मिण इत्थं प्रकारस्य।

ज्ञानार्णव में—

अस्मिश्चक्रे षडध्वानो वर्तन्ते वीरवन्दिता॥
एवं षडध्वविमलं श्रीचक्रं परिचिन्तयेत्।

दक्षिणामूर्ति=

षडध्वरूपमधुना श्रृणु योगेशि साम्प्रतम्।
एवं षडध्वभरितं श्रीचक्रं परिचिन्तयेत्॥

अव्याजकरुणामूर्ति=जिसमें व्यास नहीं है उपाधिरहित।

करुणामूर्ति=करुणा दया ही मूर्ति।

"जगत्त्रातुं शम्भो जयतिकरुणाकाचिदरुणा"

अज्ञानध्वान्तदीपिका—अज्ञान (भ्रम) रूपी जो अन्धकार है उसकी दीपिका नाश करनेवाली। जैसे—

"तेषामेवानुकम्पार्थमहमज्ञानजं तपः।
नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता॥

अविद्यानामन्तस्तिमिरमिहर द्वीप नगरी।

आबालगोपविदिता सर्वानुल्लङ्घ्यशासना।
श्रीचक्रराजनिलया श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी ॥२३३॥

आबालगोपविदिता—

बालाश्च गोपाश्च तावभिव्याप्य तादृशेन।

बाल और गोपोंने भी जिसका ज्ञान पा लिया। यद्वा, बाल सदाशिव गोपकृष्णावतार। हरिहरादिपामरतक जिसको जानते हैं। उक्तञ्चस्कन्दपुराणे—

तमहं प्रत्ययव्याजात्सर्वे जानन्ति जन्तवः।

सर्वानुल्लङ्घ्यशासना=सम्पूर्ण ब्रह्मविष्णवादिक भी जिसके शासन को उल्लङ्घन नहीं कर सकते हैं।

जैसे—

तिरस्कुर्वन्नेतत्स्वमपि वपुरीशस्तिरयति।

श्रीचक्रराजनिलया=श्रीचक्र में निवास करनेवाली।

श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी=त्रिपुर परमशिव को कहते हैं उसकी सुन्दरी उसकी शक्ति।

श्रीशिवाशिवशक्त्यैकरूपिणी ललिताम्बिका।

श्रीशिवाशिव एक रूपिणी-- एक रूपवाली।

शक्तिशक्तिमतोर्विद्वन्भेदाभेदस्तु दुर्घटः ।
यथैकं पवनस्पन्दमेकमौष्ण्यानलौ यथा ॥
चिन्मात्रं स्पन्दशक्तिश्च तथैवैकात्म सर्वदा ॥

श्री दुर्गा, राधा, लक्ष्मी, सरस्वती, सावित्री ये पञ्चप्रकीर्तिता शिवयुवतिभिः पञ्चत्रियम् ।

शिव और शक्ति मूलप्रकृतिभिः ।

त्रयश्चत्वारिंशद्वसुदलकलाशास्त्रनिलयाः ।

शिवशक्ति का ऐक्य ।

ललिताम्बिका—माता ललिता ।

इसका प्रसाद भगवती भवानी श्रीमती भगवानी को देवे ।

परिभाषा शेषः

**श्रीमणिसद्ध्रींविविधगुडदरान्देशैश्च पुष्टनादाभ्याम् ।
नामसु शतकारम्भा न स्तोभो नापि शब्दपुनरुक्तिः २३४**

प्रथमशतक में १ श्रीमाता २ मणिपूरान्तरुदिता ३ सद्गतिप्रदा ४ ह्रींकारी ५ विविधाकारा ६ गुडान्नप्रीतमानसा । ७ दरान्दोलितदीर्घाक्षी ८ देशकालापरिच्छिन्ना ९ पुष्टा १० नादरूपिणी इन नामों में कोई नाम निरर्थक तथा पुनरुक्ति का नहीं है सब नामावलिक्रमवद्ध मन्त्ररूपी है ।

मतिवरदाक्रान्तादावकारयोगेन रक्तवर्णादौ ।
आकारस्य क्वचन तु पदयोर्योगेन भेदयेन्नाम ।२३५।

शब्द से भी पुनरुक्ति इन नामों में नहीं है यथा तुष्टि, पुष्टि मति, धृति जैसे नाम आये हैं तथा स्वाहा स्वधा इन नामों में आकार के विश्लेषण से या योग से नाम निर्देश होते हैं तथा सदसद् मूर्तामूर्तौ इन स्थानों पर पदविश्लेपण करने से नाम निकलेंगे ।

विशुद्धचक्रनिलया रक्तवर्णा शोभना सुरनायिका । यहाँ भी उसी नाम से शब्द विश्लेषण करने चाहिये ।

इस प्रकार जहाँ पर सन्धि समास हैं वहाँ की नामावली पदच्छेद करके जाननी चाहिये ।

साध्वी तत्त्वमयीतिद्वेधा त्रेधा बुधो भिद्यात् ।
हंसवती चानर्घ्येत्यर्धान्तादेकनामैव ।।२३६।।

पुनरुक्ति दोष हटाने के कारण शाङ्करी श्रीकरीसाध्वी ।

"सम्प्रदायेश्वरी साध्वी" यहां पर ई कार का दो प्रकार पदच्छेद किया है ।

हंसवती मुख्यशक्ति समन्विता यह एक पद है । क्लींकारी केवला गुह्या कैवल्यपददायिनी इन शब्दों से पुनरुक्ति दोष का भी परिहार हो गया ।

शक्तिर्निष्ठाधामज्योतिः परपूर्वकं द्विपदम् ।
शोभनसुलभा सुगतिस्त्रिपदैकपदानि शेषाणि ।२३५।

अनेक पद तथा द्विपद के भी नाम हैं यथा "शक्तिर्निष्ठा धाम ज्योतिः आदि"।

एक पद के नाम भी है यथा शोभना सुलभा सुगति आदि ।

निधिरात्मा दम्भोलिः शेवधिरिति नाम पुंलिङ्गम् ।
तद्ब्रह्मधाम साधुज्योतिः क्लीबेऽव्ययं स्वधा स्वाहा ।२३६।

पुंलिङ्ग स्त्रीलिङ्ग नपुंसकलिङ्ग वाले भी इसमें नाम आये हैं। निर्गुण आत्मा रोग पर्वत दम्भोली महालावण्य शेवधि ये पुंलिङ्ग हैं तद् इत्यादि नाम नपुंसकलिंग के शेष नाम स्त्रीलिंग के हैं। लिंगभेद से नामरूपी मन्त्रों से फलभेद भी होता है। स्वाहा स्वधा अव्यय भी है।

आविंशतितः सार्धान्नानाफलसाधनत्वोक्तिः ।
तस्य क्रमशो विवृतिः षट्चत्वारिंशता श्लोकैः ।२३८।

सार्धषडशीति तथा श्लोक उत्तर भाग के जो नाम आये हैं उन नामों में अनेक प्रकार के भिन्न-भिन्न कार्यों की सिद्धि कह दिये जैसे—उसमें उत्तरार्ध के एक श्लोक सर्वरोग प्रशमिन इत्यादि नाम मन्त्र जप रोग शान्ति के हैं। जिन-जिन नामों से भगवती का स्मरण किया है उन-उन नामों के अर्थ की सफलता उन-उन नामों के जप में है। इस प्रकार की सिद्धिदायक है।

विद्यां जपेत्सहस्रं वा त्रिशतं शतमेव वा ।
रहस्यनामसाहस्रमिदं पश्चात्पठेन्नरः ॥२४०॥

श्रीविद्या का जप एक सहस्र या तीन शत यद्वा शत जप कर पीछे सहस्रनाम का पाठ करे।

जन्ममध्ये सकृच्चापि य एवं पठते सुधीः ।
तस्य पुण्यफलं वक्ष्ये श्रृणु त्वं कुम्भसंभव ॥२४१॥

अपने जन्म में एक वार भी यदि जाननेवाला पुरुष इस सहस्रनाम का पाठ कर ले उसका माहात्म्य मैं तुमको बताता हूं।

गंगादि सर्वतीर्थेषु यः स्नायात् कोटिजन्मसु ।
कोटिलिंगप्रतिष्ठां तु यः कुर्यादविमुक्तके ॥२४२॥

जिसने अनेक जन्मों में गङ्गा आदि सरिताओं में कोटि वार स्नान करके जो फल प्राप्त किया हो एवं करोड़ शिवलिङ्ग की प्रतिष्ठा की हो वह फल गङ्गा में बैठकर एक वार इस सहस्रनाम पाठ का है।

कुरुक्षेत्रे तु यो दद्यात् कोटिवारं रविग्रहे ।
कोटिं सौवर्णभाराणां श्रोत्रियेषु द्विजन्मसु ॥२४३॥

कुरुक्षेत्र में कोटि वार सूर्य-ग्रहण में कोटि भार स्वर्ण दान वेदवित् ब्राह्मणों को दान दिये हों, वह फल उसे होता है।

यः कोटिं हयमेधानामाहरेद्गाङ्गरोधसि ।
आचरेत्कूपकोटीर्यो निर्जले मरुभूतले ॥२४४॥

जिसने कोटि अश्वमेध यज्ञ किये हों तथा मरुभूमि में कोटि-कोटि कूप वावड़ी वनाई हो उसे जो फल होता है वह फल गङ्गागर्भ में सहस्रनाम पाठ से होता है।

दुर्भिक्षे यः प्रतिदिनं कोटिब्राह्मणभोजनम् ।
श्रद्धया परया कुर्यात्सहस्रपरिवत्सरान् ॥२४५॥

दुर्भिक्ष में कोटि ब्राह्मणों को सहस्रों वर्षों तक भोजन देने से जो फल होता है, वह श्रद्धापूर्वक इस सहस्रनाम पाठ से होता है।

तत्पुण्यं कोटिगुणितं लभेत्पुण्यमनुत्तमम् ।
रहस्यनामसाहस्रे नाम्नोऽप्येकस्य कीर्तनात् २४६

वह पुण्य कोटि-कोटि गुण उसे होता है जो गङ्गा में बैठकर ललितासहस्रनाम पाठ करता है।

रहस्यनामसाहस्रे नामैकमपि यः पठेत् ।
तस्य पापानि नश्यन्ति महान्त्यपि न संशयः २४७

इस रहस्य सहस्रनाम में से एक नाम को भी जो श्रद्धा से जपता है उसके महापाप तक नाश हो जाते हैं।

नित्यकर्माननुष्ठानान्निषिद्धकरणादपि ।
यत्पापं जायते पुंसां तत्सर्वं नश्यति द्रुतम् ॥२४८॥

नित्यकर्म के परित्याग करने से तथा निषिद्ध कर्म के करने से

जो पाप होते हैं वे सब इस सहस्रनाम पाठ से नाश हो जाते हैं।

बहुनात्र किमुक्तेन शृणु त्वं कलशीसुत ।
अत्रैकनाम्नो या शक्तिः पातकानां निवर्तने ।
तन्निवर्त्यमघं कर्तुं नालं लोकाश्चतुर्दश ॥२४९॥

हे अगस्त्य मुनि ! अधिक क्या कहें इस सहस्रनाम में एक नाम में भी जो पापनाशिनी शक्ति है, वह चमत्कार चतुर्दश लोक में वह शक्ति नहीं है ।

यस्त्यक्त्वानामसाहस्रं पापहानिमभीप्सति ।
स हि शीतनिवृत्त्यर्थं हिमशैलं निषेवते ॥२५०॥

जो ललितासहस्रनाम का पाठ करे बिना पापों का नाश करना चाहता है उसकी यह प्रगति ऐसी है जैसी शीत पीड़ित व्यक्ति शीतबाधा निवारणार्थ हिमालय का आश्रय करे ।

भक्तो यः कीर्तयन्नित्यमिदं नाम सहस्रकम् ।
तस्मै श्रीललिता देवी प्रीताभीष्टं प्रयच्छति ।२५१।

जो भक्त इस सहस्रनाम का नित्य पाठ करता है भगवती श्री ललिता उसकी चाही हुई वस्तु उसे प्रदान करती है ।

अकीर्तयन्निदं स्तोत्रं कथं भक्तो भविष्यति ॥२५२

इस सहस्रनाम का पाठ न करनेवाला भगवती ललिता का भक्त नहीं हो सकता है ।

नित्यं संकीर्तनाशक्तः कीर्तयेत्पुण्यवासरे ।
संक्रान्तौ विषुवे चैव स्वजन्मत्रितयेऽयने ॥२५३॥

जो भक्त नित्य इस सहस्रनाम का पाठ करता है यद्वा संक्रान्तियों में तथा विषुवति संक्रान्ति और अपने जन्म दिन तथा उत्तरायण दक्षिणायन में ।

नवम्यां वा चतुर्दश्यां सितायां शुक्रवासरे ।
कीर्तयेन्नामसाहस्रं पौर्णमास्यां विशेषतः ॥२५४॥

नवमी चतुर्दशी शुक्लपक्ष पूर्णमासी शुक्रवार को सहस्रनाम का पाठ करता है ।

पौर्णमास्यां चन्द्रबिम्बे ध्यात्वा श्रीललिताम्बिकाम् ।
पञ्चोपचारैः संपूज्य पठेन्नामसहस्रकम् ॥२५५॥

पूर्णमासी को चन्द्रबिम्ब में भगवती ललिता का ध्यान कर पञ्चोपचार से पूजन कर ललितासहस्रनाम का पाठ करे ।

सर्वे रोगाः प्रणश्यन्ति दीर्घमायुश्च विन्दति ।
अयमायुष्करो नाम प्रयोगः कल्पनोदितः ॥२५६॥

उसके सम्पूर्ण रोग दूर होकर वह दीर्घायु प्राप्त करता है । कल्पशास्त्र में इस सहस्रनाम के पाठ को दीर्घायु करनेवाला बताया है ।

ज्वरार्तं शिरसि स्पृष्ट्वा पठेन्नामसहस्रकम् ।
तत्क्षणात्प्रशमं याति शिरस्तोदो ज्वरोऽपि च २५७

जिस ज्वर की बीमारी हो उसके शिर पर हाथ रखकर
स सहस्रनाम के पाठ करने से उसकी ज्वर-बाधा शान्त हो
ाती है।

सर्वव्याधिनिवृत्त्यर्थं स्पृष्ट्वा भस्म जपेदिदम् ।
तद्भस्मधारणादेव नश्यन्ति व्याधयः क्षणात् २५८

सब प्रकार की व्याधि शमन करने के हेतु हवन की शुद्ध
स्म लेकर इस सहस्रनाम पाठ कर उसे अभिमन्त्रित कर शरीर
र लगाने से सब प्रकार की शरीर की बीमारियां खुजली आदि
ान्ति हो जाती हैं।

जलं संमन्त्र्य कुम्भस्थं नामसाहस्रतो मुने ।
अभिषिञ्चेद्ग्रहग्रस्तान्ग्रहा नश्यन्ति तत्क्षणात् २५९

जिसे ग्रह कष्टदायी आ रहे हैं। वह एक कुम्भ में जल को
खकर इस सहस्रनाम को पढ़ता हुआ जल को मन्त्रित कर उस
ल से सहस्रनाम से अभिषेक करे तो दुष्ट ग्रहों की शान्ति हो
ाती है।

सुधासागरमध्यस्थां ध्यात्वा श्रीललिताम्बिकाम् ।
यः पठेन्नामसाहस्रं विषं तस्य विनश्यति ॥२६०॥

अपने मन में यह भावना करे कि भगवती ललिता अमृत के
मुद्र में बैठी हुई है। इस प्रकार भावना कर सहस्रनाम का पाठ
रने से विष का दोष शान्त हो जायगा।

वन्ध्यानां पुत्रलाभाय नामसाहस्रमन्त्रितम् ।
नवनीतं प्रदद्यात्तु पुत्रलाभो भवेद्ध्रुवम् ॥२६१॥

जिस स्त्री के बच्चे न होते हों उसे नवनीत (मक्खन) को इस ललितासहस्रनाम से मन्त्रित कर ११ दिन तक देवे उसको पुत्र लाभ होगा।

देव्याः पाशेन संबद्धामाकृष्टामङ्कुशेन च ।
ध्यात्वाभीष्टां स्त्रियं रात्रौ पठेन्नामसहस्रकम् २६२

जो कोई पाश से बद्ध हो रस्सी से बँधा हुआ घसीटा जाता हो वह रात्रि में स्त्रीरूप में देवी का ध्यान कर सहस्रनाम को पढ़े तो पाश मुक्त हो जायगा।

आयाति स्वसमीपं सा यद्यप्यन्तः पुरं गता ।
राजाकर्षणकामश्चेद्राजावसथदिङ्मुखः ॥२६३॥

इस सहस्रनाम पाठ से स्त्री का एवं राजा का आकर्षण होता है।

त्रिरात्रं यः पठेदेतच्छ्रीदेवीध्यानतत्परः ।
स राजा पारवश्येन तुरंगं वा मतङ्गजम् ॥२६४॥
आरुह्य याति निकटं दासवत्प्रणिपत्य च ।
तस्मै राज्यं च कोशं च दद्यादेव वशंगतः ॥२६५॥

तीन रात्रि ध्यानपूर्वक जो इस सहस्रनाम को पढ़ता है,

उसके पास घोड़े हाथी पर सवार होकर राजा आता है, उसके चरण में पड़ता है, अपना राज्य तक उसे न्योछावर करने को उद्यत हो जाता है ।

रहस्यनामसाहस्रं यः कीर्तयति नित्यशः ।
तन्मुखालोकमात्रेण मुह्येल्लोकत्रयं मुने ॥२६६॥

ललितासहस्रनाम जो नित्य पाठ करता है उसको देखकर त्रैलोक्य मोहित हो जाता है ।

यस्त्विदंनामसाहस्रं सकृत्पठति भक्तिमान् ।
तस्य ये शत्रवस्तेषां निहन्ता शरभेश्वरः ॥२६७॥

जो एक बार भी इस सहस्रनाम का पाठ करता है वह शत्रु पर विजय पानेवाला होता है ।

यो वाभिचारं कुरुते नामसहस्रपाठके ।
निवर्त्य तत्क्रियां हन्यात्तं वै प्रत्यङ्गिरा स्वयम् २६८

जो सहस्रनाम पाठ करनेवाले को अभिचार मन्त्र करता है प्रत्यंगिरा रूप में भगवती स्वयं आकर उस जादू करनेवाले को मार देती है ।

ये क्रूरदृष्ट्या वीक्षन्ते नामसाहस्रपाठकम् ।
तानन्धान्कुरुते क्षिप्रं स्वयं मार्तण्डभैरवः ॥२६९॥

जो सहस्रनाम पाठ करनेवाले को क्रूर दृष्टि से देखता उसके नेत्र नष्ट हो जाते हैं अर्थात् अन्धा हो जाता है ।

धनं यो हरते चोरैर्नामसाहस्रजापिनः ।
यत्र कुत्रस्थितं वापि क्षेत्रपालो निहन्ति तम् ॥२७०॥

सहस्रनाम पाठ करनेवाले का जो चोरी करके धन ले जाता है क्षेत्रपाल उस चोर को मार देता है।

विद्यासु कुरुते वादं यो विद्वान्नामजापिनः ।
तस्य वाक्स्तम्भनं सद्यः करोति नकुलीश्वरी ॥२७१

जो विद्वान् सहस्रनामपाठी के साथ शास्त्रार्थ करता है नकुलीश्वरी देवी उस मिथ्यावादी की वाणी स्तम्भन कर देती है।

यो राजा कुरुते वैरं नाम साहस्रजापिनः ।
चतुरंङ्गबलं तस्य दण्डिनी संहरेत्स्वयम् ॥२७२॥

जो राजा सहस्रनाम पाठ करनेवाले भक्त के साथ वैर-भाव रखता है दण्डनी शक्ति उस राजा के बल सैन्य को नाश कर देती है।

यः पठेन्नामसाहस्रं षण्मासं भक्तिसंयुतः ।
लक्ष्मीश्चांचल्यरहिता सदा तिष्ठति तद्गृहे ॥२७३॥

जो इस सहस्रनाम को निश्चल होकर षण्मास तक पाठ करता है उसके घर में लक्ष्मी निश्चल होकर रहती है।

मासमेकं प्रतिदिनं त्रिवारं य पठेन्नरः ।
भारती तस्य जिह्वाग्रे रङ्गे नृत्यति नित्यशः ॥२७४॥

जो साधक एक महीने तक नित्य तीन वार सहस्रनाम पाठ करे उसकी जिह्वा में सरस्वती निवास करती है ।

यस्त्वेकवारं पठति पक्षमेकमतन्द्रितः ।
मुह्यन्ति कामवशगा मृगाक्ष्यस्तस्य वीक्षणात् ।२७५।

जो एक पक्ष तक नित्य एक वार पाठ करता है उसपर स्त्री वशीभूत हो जाती है ।

यः पठेन्नामसाहस्रं जन्ममध्ये सकृन्नरः ।
तद्दृष्टिगोचराः सर्वे मुच्यन्ते सर्वकिल्विषैः ॥२७६।

जो जल के बीच जाकर सहस्रनाम पढ़ता है उसकी दृष्टि जहां पड़े उनके भी पाप नाश हो जाते हैं ।

यो वेत्ति नामसाहस्रं तस्मै देयं द्विजन्मने ।
अन्नं वस्त्रं धनं धान्यं नान्येभ्यस्तु कदाचन ।२७७।

जो ब्राह्मण सहस्रनाम का पाठ करता है उसे अन्न, वस्त्र, धन-धान्य देना चाहिये ।

सत्पात्र के लक्षण—

श्री मन्त्रराजं यो वेत्ति श्रीचक्रं यः समर्चति ।
यः कीर्तयति नामानि तं सत्पात्रं विदुर्बुधा ॥२७८।

जो श्री मन्त्र राज षोडशाक्षरी को जानता है और श्री यन्त्र का पूजन करता है तथा सहस्रनाम पाठ करता है वह सत्पात्र कहलाने योग्य है।

तस्मै देयं प्रयत्नेन श्रीदेवीप्रीतिमिच्छता।
यः कीर्तयति नामानि मन्त्रराजं न वेत्ति यः।२७९

भगवती की प्रसन्नता चाहनेवाले को चाहिये उसको सब कुछ देवे। जो केवल नाम कीर्तन जानता है और मन्त्रराज श्री विद्या के मन्त्र को नहीं जानता है।

पशुतुल्यः स विज्ञेयस्तस्मै दत्तं निरर्थकम्।
परीक्ष्य विद्याविदुषस्तेभ्यो दद्याद्विचक्षणः ॥२८०॥

वह पशु तुल्य है उसे दान देना निरर्थक है अन्य साधक की परीक्षा श्री विद्या में पहले करे।

श्रीमन्त्रराजसदृशो यथा मन्त्रो न विद्यते।
देवता ललितातुल्या यथा नास्ति घटोद्भव ॥२८१॥

श्री मन्त्रराज के तुल्य और मन्त्र नहीं है एवं भगवती ललिता के समान उपासनाधिनायिका अन्य विद्या नहीं है।

रहस्यनामसाहस्रतुल्या नास्ति तथा स्तुतिः।
लिखित्वा पुस्तके यस्तु नामसाहस्रमुत्तमम् ॥२८२॥

इस सहस्रनाम रहस्य की तुलना अन्य किसी स्तोत्र पाठ से

नहीं है। सहस्रनाम पुस्तक लिखकर उसका पूजन कर जो दान करता है उसपर भगवती प्रसन्न होती है।

समर्चयेत्सदाभक्त्या तस्य तुष्यति सुन्दरी।
बहुनात्र किमुक्तेन शृणु त्वं कुम्भसंभव ॥२८३॥

हे अगस्त्य मुनि! अधिक क्या कहें तुम सुनो।

नानेन सदृशं स्तोत्रं सर्वतन्त्रेषु विद्यते।
तस्मादुपासको नित्यं कीर्तयेदिदमादरात् ॥२८४॥

इस सहस्रनाम के सदृश दूसरा स्तोत्र नहीं अतः उपासक को इसका नित्य पाठ करना चाहिये।

एभिर्नामसहस्रैस्तु श्रीचक्रं योऽर्चयेत्सकृत्।
पद्मैर्वा तुलसीपुष्पैः कल्हारैर्वा कदम्बकैः ॥२८५॥
चम्पकैर्जातिकुसुमैर्मल्लिकाकरवीरकैः।
उत्पलैर्बिल्वपत्रैर्वा कुन्दकेशरपाटलैः ॥२८६॥

जो साधक इस सहस्रनाम के एक नाम से विल्वपत्र या तुलसीपत्र से जाती पुष्प कमल चम्पा पाटलपुष्प से।

अन्यैः सुगन्धिकुसुमैः केतकीमाधवीमुखैः।
तस्य पुण्यफलं वक्तुं न शक्नोति महेश्वरः ॥२८७॥

यद्वा अन्य सुगन्धित पुष्पों से उस उपासक पूजा करनेवाले को जो महान् फल होता है उसका वर्णन शिव भी नहीं कर सकते हैं।

सा वेत्ति ललितादेवी स्वचक्रार्चनजं फलम् ।
अन्ये कथं विजानीयुर्ब्रह्माद्याः स्वल्पमेधसः ॥२८८॥

भगवती ललिता ही उस पूजा का फल जान सकती है और ब्रह्मादिक नहीं जान सकते।

प्रतिमासं पौर्णमास्यामेभिर्नामसहस्रकैः ।
रात्रौ यश्चक्रराजस्थामर्चयेत्परदेवताम् ॥२८९॥

जो साधक प्रतिमास पूर्णमासी की रात्रि में श्री चक्र से ललिता का पूजन कर—

स एव ललितारूपस्तद्रूपा ललिता स्वयम् ।
न तयोर्विद्यते भेदो भेदकृत्पापकृद्भवेत् ॥२९०॥

इस स्तोत्र को पढ़ता है वह देवी के स्वरूप को प्राप्त कर लेता है।

महानवम्यां यो भक्तः श्रीदेवीं चक्रमध्यगाम् ।
अर्चयेन्नामसाहस्रैः तस्य मुक्तिः करे स्थिता २९१॥

जो महानवमी के दिन भक्तिपूर्वक देवी की सहस्रनाम से पूजा करता है उसकी मुक्ति होती है।

यस्तु नामसहस्रेण शुक्रवारे समर्चयेत् ।
चक्रराजे महादेवीं तस्य पुण्यफलं शृणु ॥२९२॥

जो शुक्रवार को सहस्रनाम से देवी का पूजन करता है उसके पुण्य को श्रवण करो।

सर्वान् कामानवाप्येह सर्वसौभाग्यसंयुतः।
पुत्रपौत्रादिसंयुक्तो भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान् २६३

सहस्रनाम पाठ करनेवाले की सब कामना सफल हो जाती है वह सर्व सौभाग्य सम्पन्न पुत्र पौत्रादि सम्पन्न होकर संसार में सुख भोग भोगकर—

अन्ते श्रीललितादेव्याः सायुज्यमतिदुर्लभम्।
प्रार्थनीयं शिवाद्यैश्च प्राप्नोत्येव न संशयः ॥२६४॥

अन्त में भगवती ललिता देवी द्वारा सायुज्य मुक्ति को प्राप्त होता है।

यः सहस्रं ब्राह्मणानामेभिर्नामसहस्रकैः।
समर्च्य भोजयेद्भक्त्या पायसापूपषड्रसैः ॥२६५॥

जो इस सहस्रनाम के एक-एक नाम से एक सहस्र ब्राह्मणों का भक्ति से पूजन एवं षट्रस युक्त पायस और मालपूओं से भोजन करवाता है।

तस्मै प्रीणाति ललिता स्वसाम्राज्यं प्रयच्छति।
न तस्य दुर्लभं वस्तु त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥२६६॥

भगवती ललिता उस साधक पर प्रसन्न होकर उसे सायुज्य मुक्ति दे देती है उसको कुछ भी दुर्लभ नहीं है।

निष्कामः कीर्तयेद्यस्तु नामसाहस्रमुत्तमम् ।
ब्रह्मज्ञानमवाप्नोति येन मुच्येत बन्धनात् ॥२९७॥

जो साधक निष्काम इस सहस्रनाम से ललिता का पूजन करता है वह ब्रह्मज्ञान प्राप्त करता है ।

धनार्थी धनमाप्नोति यशोर्थि प्राप्नुयाद्यशः ।
विद्यार्थी चाप्नुयाद्विद्यां नामसाहस्रकीर्तनात् ॥२९८॥

विद्यार्थी पूर्ण विद्या प्राप्त कर लेता है इस सहस्रनाम के पाठ करने से तथा अन्त में भोग भोगकर मोक्ष प्राप्त करता है ।

नानेन सदृशं स्तोत्रं भोगमोक्षप्रदं मुने ।
कीर्तनीयमिदं तस्माद्भोगमोक्षार्थिभिर्नरैः ॥२९९॥

इस कारण भोग मोक्षार्थी को इस सहस्रनाम का पाठ करना चाहिये ।

चतुराश्रमनिष्ठैश्च कीर्तनीयमिदं सदा ।
स्वधर्मसमनुष्ठानवैकल्यपरिपूर्तये ॥३००॥

चारों आश्रमवालों को अपने आश्रम धर्म के अनुष्ठान के समय ही इसका पाठ करना चाहिये ।

कलौ पापैकबहुले धर्मानुष्ठानवर्जिते ।
नामानुकीर्तनं मुक्त्वा नृणां नान्यत्परायणम् ॥३०१॥

कलियुग में पाप के प्रचुर होने से धर्मानुष्ठान से जनता

वर्जित रह जाती है। इस काल में मनुष्यों के उद्धार करनेंवाला सहस्रनाम का पाठ ही है।

लौकिकाद्वचनान्मुख्यं विष्णुनामानुकीर्तनम्।
विष्णुनामसहस्राच्च शिवनामैकमुत्तमम् ॥३०२॥

पुराणादि धर्म शास्त्रों से भी यही मिलता है कि विष्णु नाम कीर्तन श्रेष्ठ है विष्णु सहस्रनाम से शिव सहस्रनाम श्रेष्ठ है।

शिवनामसहस्राच्च देव्या नामैकमुत्तमम्।
देवीनामसहस्राणि कोटिशः सन्ति कुम्भज ॥३०३॥

शिवसहस्रनाम से भी देवी सहस्रनाम उत्तम है। देवी सहस्र नाम भी कोटि-कोटि संख्या के है।

तेषु मुख्यं दशविधं नामसाहस्रमुच्यते।
रहस्यनामसाहस्रमिदं शस्तं दशस्वपि ॥३०४॥

उन सब सहस्रनामों में मुख्य दश महाविद्याओं के दश सहस्र नाम उन दश से भी ललितासहस्रनाम सर्वोपरि है।

तस्मात्संकीर्तयेन्नित्यं कलिदोषनिवृत्तये।
मुख्यं श्रीमातृनामेति न जानन्ति विमोहिताः।३०५

अतः कलिदोषों के विनाश के लिये ललितासहस्रनाम का पाठ करना श्रेष्ठ है। जो साधक इन मुख्य नामों को नहीं जानते हैं।

विष्णुनामपराः केचिच्छिवनामपराः परे ।
न कश्चिदपि लोकेषु ललितानामतत्परः ॥३०६॥

विष्णु सहस्रनाम के पाठक तथा शिवसहस्रनाम के पाठक कई मिल सकते हैं, परन्तु ललितासहस्रनाम पाठ करनेवाले संसार में विरले ही है ।

येनान्यदेवतानाम कोर्तितं जन्मकोटिषु ।
तस्यैव भवति श्रद्धा श्रीदेवीनामकीर्तने ॥३०७॥

जिसने पहले जन्म में देवताओं का नाम कीर्तन किया है। उसी की इस जन्म में ललितासहस्रनाम पाठ करने की श्रद्धा होती है ।

चरमे जन्मनि यथा श्रीविद्योपासको भवेत् ।
नामसाहस्रपाठश्च तथा चरमजन्मनि ॥३०८॥

अन्तिम अवस्था में जिस प्रकार श्रीविद्या की उपासना हो उसी प्रकार पिछली अवस्था में सहस्रनाम का भी पाठ करे ।

यथैव विरला लोके श्रीविद्याचारवेदिनः ।
तथैव विरलो गुह्यनामसाहस्रपाठकः ॥३०९॥

जिस प्रकार संसार में श्री विद्या के उपासक कोई विरले मनुष्य होते है। इसी प्रकार सहस्रनाम पाठ करनेवाले विरले ही होते हैं।

मन्त्रराजजपश्चैव चक्रराजार्चनं तथा।
रहस्यनामपाठश्च नाल्पस्य तपसः फलम् ॥३१०॥

श्रीयन्त्र का पूजन, श्री विद्या का जप और ललितासहस्रनाम का पाठ जिसने बहुत पुण्य किये हो उसको मिलते हैं।

अपठन्नामसाहस्रं प्रीणयेद्यो महेश्वरीम्।
स चक्षुषा विना रूपं पश्येदेव विमूढधीः ॥३११॥

जो चाहे बिना ललिता सहस्रनाम पाठ करे भगवती को प्रसन्न कर ले उसका यह विचार ऐसा है कि बिना नेत्रों के रूप को देखना।

रहस्यनामसाहस्रं त्यक्त्वा यः सिद्धिकामुकः।
स भोजनं विना नूनं क्षुन्निवृत्तिमभीप्सति ॥३१२॥

बिना सहस्रनाम पाठ करे जो साधक सिद्धि चाहता है उसका यह विचारना ऐसा है जैसे बिना भोजन किये पेट भर जाय।

यो भक्तो ललितादेव्याः स नित्यं कीर्तयेदिदम्।
नान्यथा प्रीयते देवी कल्पकोटिशतैरपि ॥३१३॥

जो ललिता देवी का भक्त हो उसे चाहिये कि वह ललिता सहस्र नाम का नित्य पाठ करे। अन्य किसी भी प्रकार से देवी प्रसन्न नहीं होती है।

तस्माद्रहस्यनामानि श्रीमातुः प्रयतः पठेत् ।
इति ते कथितं स्तोत्रं रहस्यं कुम्भसंभव ॥३१४॥

अतः शुद्ध होकर भगवती के सहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करे। हे अगस्त्य मुनि ! यह हमने तुमको ललिता का रहस्य प्रकट कर दिया है।

नाविद्यावेदिने ब्रूयान्नाभक्ताय कदाचन ।
यथैव गोप्या श्रीविद्या तथा गोप्यमिदं मुने ॥३१५॥

जो श्री विद्या का उपासक न हो तथा भगवती का भक्त न हो उसे यह सहस्रनाम नहीं बताना। जिस प्रकार श्री विद्या गोप्य है इसी प्रकार यह सहस्रनाम गोप्य है।

पशुतुल्येषु न ब्रूयाज्जनेषु स्तोत्रमुत्तमम् ।
यो ददाति विमूढ़ात्मा श्रीविद्यारहिताय तु ॥३१६॥

पशु पास में जकड़े अर्थात् जो उपाशना नहीं जानते हैं उनको जो यह सहस्रनाम बताता है उसकी श्रीविद्या सिद्ध नहीं होती है।

तस्मै कुप्यन्ति योगिन्यः सोऽनर्थः सुमहान्स्मृतः ।
रहस्यनामसाहस्रं तस्मात्संगोपयेदिदम् ॥३१७॥

इस प्रकार के अनधिकारी को जो यह सहस्रनाम बताता है योगिनी शक्ति उसपर कुपित होती है अतः अनधिकारी से इसे गुप्त रक्खे।

स्वतन्त्रेण मया नोक्तं तवापि कलशीभव ।
ललिताप्रेरणादेव मयोक्तं स्तोत्रमुत्तमम् ॥३१८॥

हयग्रीव भगवान् कहते हैं—हे अगस्त्य मुनि ! यह मैंने स्वतंत्र रूप से तुम्हें नहीं कहा अपितु भगवती ललिता की प्रेरणा से ही तुझे बताया है ।

कीर्तनीयमिदं भक्त्या कुम्भयोने निरन्तरम् ।
तेन तुष्टा महादेवी तवाभीष्टं प्रदास्यति ॥३१९॥

हे अगस्त्य मुनि ! नित्य इस सहस्रनाम का पाठ करने से भगवती ललिता प्रसन्न होती है ।

सूत उवाच

इत्युक्त्वा श्रीहयग्रीवो ध्यात्वा श्रीललिताम्बिकाम् ।
आनन्दमग्नहृदयः सद्यः पुलकितोऽभवत् ॥३२०॥

इस प्रकार जब हयग्रीव भगवान् ने अगस्त्य को कहा तब अगस्त्यजी का हृदय आनन्द से मग्न और शरीर पुलकित हो गया ।

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे ललितोपाख्याने हयग्रीवागस्त्यसंवादे ललितासहस्रनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

विनम्र निवेदन

ईशा वास्यमिदꣳ सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ॥

—शुक्ल यजुर्वेद अध्याय ४० मन्त्र १

ईश्वर का आदेश है कि सृष्टि के सारे प्राणी मेरी ही आत्मा हैं। ज्ञान के द्वारा प्राणीमात्र की पूर्णरूपेण रक्षा का ध्यान रखते हुए अपना भोग—जो कि प्रकृति द्वारा निर्दिष्ट किया हुआ है—भोगो। (किसी की भी हिंसा मत करो। सभी प्राणी सृष्टि की परिचर्या में पूर्णरूपेण सहायक हैं)। किसी भी प्राणी की शक्ति (दूध) को हरण करने की मन में भावना भी न आने दो इसी में अपना कल्याण है। "अथ त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्तः पुरुषार्थः" परमात्मा के आदेश का पालन करने से ही त्रिविध दुःखों की निवृत्ति होगी इसी में मानव जीवन की सार्थकता एवं सफलता निहित है। "तस्माच्छास्त्रं प्रमाणम्"

सत्त्व रजस् और तमो गुण की साम्यावस्था के गुणों का अधिष्ठान होने से प्रकृति परमा शक्ति के रूप में और प्रधान पुरुष सदाशिव के रूप में अभिव्यक्त होते हैं ; उन्हीं की इच्छानुसार त्रिगुणात्मिका सृष्टि का क्रम बराबर चलता रहता है। इस सृष्टि में सत्त्व गुण प्रधानता से मानव की ; रजोगुण प्रधानता से पशुपक्षी की और तमोगुण प्रधानता से कीट पतङ्गादि की उत्पत्ति हुई। ये सब मानव के अविभाज्य अङ्ग हैं।

अतः प्राणीमात्र की पूर्णरूपेण रक्षा करते हुए अपनी शक्ति (आत्मबल) की वृद्धि करना ही मानवजीवन का परम लक्ष्य है।

"कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम्"

५, क्लाइव रो,
कलकत्ता।

आपका सेवक :—
मनसुखराय मोर

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

ललितासहस्रनाम का

शुद्धिपत्र

पृष्ठ—पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१२	किन्तस्य	किन्त्वस्य
	गाम्भीर्यता	गम्भीरता
	आपाताल	मापाताल
६—८	हितकम्यया	हितकाम्यया
१६—६	क्रोधाङ्कुशाकुशोज्ज्वला	क्रोधाकाराङ्कुशोज्ज्वला
२२—८	दावण	द्रावण
२५—१३	सम्पूण	सम्पूर्ण
२७—८	शुद्धविद्याङ्करा	शुद्धविद्याङ्कुरा
५७—२	शक्तिकूटैकतापन्न—	शक्तिकूटैकतापन्न—
	कट्याधोभागधारिणी	कट्यधोभागधारिणी
७८—१४	योगश्च	भोगश्च
६२—४	तेजसात्मिका	तैजसात्मिका
६८—१३	प्रपततो	प्रतपतो
६६—२०	कूम	कूर्म

पृष्ठ—पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११३—१२	दत्य	दैत्य
११५—१३	पशुवर्तिन	पशुवर्त्तिन
१२६—१	समस्तया	समस्ताः
१३२—६	सवचैतन्य	सर्वचैतन्य
१३७—६	माग	मार्ग
१३६—१	तेजोवती	तेजोवती
१४३—३	पापसान—	पायसान्न—
	दष्टोज्ज्वलादिक्षमालाधरा	दंष्ट्रोज्ज्वलाक्षमालादिधरा
१४४—६	कालरात्र्यादिशत्यौघावृता	कालरात्र्यादिशक्त्यौ-घवृता
१४५—५	बदनत्रयसंयुता	वदनत्रयसंयुता
१४७—७	अङ्कशादिप्रहरणा	अङ्कुशादिप्रहरणा
१४८—१	आज्ञाचक्राव्जनिलया	आज्ञाचक्राब्जनिलया
१४८—११	सुत्तमम्	मुत्तमम्
१५८—८	सर्वो	शर्वो
१६६—४	काव्यालोपविमोदिनी	काव्यालापविमोदिनी
१६७—१०	दिजगद्वन्द्या	त्रिजगद्वन्द्या
१६५—११	स्वर्गापवर्गदा	स्वर्गापवर्गदा
१६८—२१	निस्त्रगुण्या	निस्त्रैगुण्या

पृष्ठ—पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२०७—६	भभेत्	भवेत्
२१२—१२	वृत्तावस्था	वृद्धावस्था
२१३—३	गव्रिता	गर्विता
२३४—३	जागते	जाग्रत्
२४६—६	जन्ममध्ये	जलमध्ये
२५८—५	नाविद्यावेदिने	नाविद्यावेदिने

गुरुमण्डल प्रकाशन
कलकत्ता

संचालक: राजगुरु पण्डित हरिदत्त शास्त्री